Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न1. भाषा को परिभाषित करते हुए उसकी प्रमुख प्रवृत्तियों का उल्लेख संक्षेप में कीजिए।

उत्तर मनुष्य अकेला नहीं रह सकता, उसे अपना जीवन बिताने के लिए दूसरों की आवश्यकता पड़ती हैं। यह आवश्यकता समाज का निर्माण करती हैं और समाज में रहने के लिए मनुष्य को एक–दूसरे से बातचीत करनी पड़ती हैं। बातचीत के लिए भाषा की आवश्यकता होती हैं। भाषा के बारे में डॉ0 हरदयाल बाहरी कहते हैं –

''भाषा जीवन का प्रमुख अंग हैं, क्योंकि भाषा के बिना जीवन और जगत का कोई कार्य नहीं चलता। भाषा मानव जीवन की समस्त गतिविधियों का मूलाधार होती हैं।''

सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य अपने मन में उठे हुए भावों और विचारों को एक–दूसरे पर प्रकट करना चाहता हैं। इस चाहत की पूर्ति हैंतु उसे भाषा को स्वीकार करना पड़ता हैं। वस्तुतः भाषा वह साधन हैं जिसके सहारे मनुष्य अपने विचारों को अभिव्यक्ति प्रदान करता हुआ दूसरे तक पहुँचाता हैं। मानव के विकास के साथ–साथ भाषा का भी विकास हुआ। मानव–शरीर में भाषा एक दैवी अंश के समान हैं, जो इस सृष्टि में केवल मनुष्य को ही प्राप्त हैं। प्राचीन काल में जब मनुष्य ने जब भाषा का प्रयोग करना नहीं सीखा होगा तब वह अपने विचारों के आदान–प्रदान के लिए संकेतों का सहारा लेता रहा होगा। जैसे–जैसे मनुष्य का जीवन में परिवर्तन आए वह आदिम अवस्था को छोड़कर धीरे–धीरे सभ्य बनने लगा तभी से भाषा में भी परिवर्तन आये शुरू हो गए होंगे तब भाषा संकेत के बजाए बोली में परिवर्तित हो गई होगी।

इस प्रकार समस्त विश्व में अपने हृदयगत भावों को वाणी रूप में सार्थक मौखिक अभिव्यक्ति के लिए मनुष्य ने जिस साधन का उपयोग किया, उसे सामान्यतः भाषा कहा गया।

''भाषा'' शब्द के विभिन्न अर्थ

''भाषा'' शब्द संस्कृत की ''भाष'' धातु से बना हैं जिसका अर्थ हैं– बोलना या कहना। अर्थात भाषा वह हैं जिसे बोला जाय। भाषा वह साधन हैं जिसके माध्यम से हम सोचते हैं तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं। भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित, यादृच्छिक, ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था हैं जिसके द्वारा समाज–विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान–प्रदान करते हैं। जीवन में व्यवहार करने पर भी ''भाषा'' शब्द का अर्थ बतलाना उतना सरल नहीं जितना की विचार करने पर भाषा का प्रयोग अनेक अर्थों में होता हैं। इन्हें निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता हैं–

1. भाषा का औपचारिक प्रयोग :– भाषा विचारों की वाहिका होती हैं। वक्ता और श्रोता वर्णमयी या ध्वन्यात्मक भाषा द्वारा पारस्परिक अभिव्यक्ति या विचार विनिमय करते हैं। तथा एक दूसरे के अभिप्राय को समझते हैं। उस अभिप्राय या भावभिव्यक्ति को हम भाषा की संज्ञा दे देते हैं। इस दृष्टि से पशुओं आदि की बोली (जैसे बन्दरों की भाषा, चिड़ियों की, मधुमक्खियों की आदि) इंगित (जैसे–सिर हिलाना हाँ या ना में अर्थ को सूचित करना, नेत्रों से ईशारेबाजी आदि) संकेत चिहन या सांकेतिक भाषा–(रेल्वे का सिग्नल, चौराहें पर लगी बत्तियाँ आदि)।

   इस प्रकार अव्यक्त बोली, इंगित तथा संकेत आदि के द्वारा भले ही भावों की अभिव्यक्ति हो जाती हैं परन्तु उनके लिए भाषा शब्द का प्रयोग औपचारिक रूप में ही हो जाता हैं। मूल रूप से भाषा का प्रयोग ''व्यक्त वाक्'' के लिए होता हैं और व्यक्तक वाक ही वर्णनात्मक मानव भाषा ही हैं।

2. मानव मात्र की भाषा :– इसके सीमित अर्थ में ''भाषा'' का अर्थ मानव मात्र की भाषा हैं। मानव चाहें किसी भी देश का नागरिक हो किसी की जाति का हो या किसी भी गाँव का हो इस अर्थ में मनुष्य मात्र द्वारा प्रयुक्त ''व्यक्त वाक्''

Downloaded notes from www.hindinotes.com

को ही भाषा कहा जाता हैं। चाहैं भाषा में कितनी भी विभिन्नता क्यों न हो लेकिन पशु–पक्षियों द्वारा की गई अभिव्यक्ति इसके अंतर्गत नहीं आती हैं।

3. <u>देश–विदेश की भाषा</u> :– भाषा का संतुलित अर्थ तब हमारे सम्मुख आता हैं जब हम इसका प्रयोग किसी भू–भाग के लिए मनुष्य द्वारा की गई, अभिव्यक्ति के रूप में भाषा के लिए करते हैं। इस रूप में भाषा का अर्थ होता हैं–हिन्दी, जर्मन, अंग्रेजी, फ्रेंच आदि भाषाएँ।

4. <u>व्यक्तिगत भाषा</u> :– भाषा शब्द का अर्थ उस समय सर्वाधिक संकुचित हो जाता हैं जब इसका प्रयोग किसी व्यक्ति विशेष के लिए किया जाता हैं। प्रत्येक व्यक्ति और उनके व्यक्तिगत गुण एक–दूसरे से भिन्न होते हैं। साथ ही वाद्य यन्त्र और श्रवण यन्त्र भी एक दूसरे से भिन्न होते हैं। इस कारण प्रत्येक व्यक्ति अपनी–अपनी क्षमता के अनुसार ही एक शब्द का अर्थ अलग अलग रूप में ग्रहण करते हैं जैसे (लेखक या व्यक्ति की शैली में विभिन्नता) इस प्रकार भाषा शब्द का अर्थ व्यक्तिगत भाषा भी हैं।

5. भाषा विज्ञान की दृष्टि से :– भाषा विज्ञान में जिस भाषा का जिक्र हैं, वह सांकेतिक आदि से भिन्न मानवीय व्यक्त वाणी हैं। व्यक्त वाणी में जिसकी अभिव्यक्ति की जाती हैं उसे भाषा कहते हैं। मुख्य रूप से भाषा शब्द से मानवीय व्यक्त वाणी को ही ग्रहण किया जाता हैं और इसके द्वारा सूक्ष्म मानवीय भावों को प्रकट किया जाता हैं।

<u>भाषा की विभिन्न परिभाषाएँ</u>

भाषा विज्ञान की अध्ययन प्रणाली के अंतर्गत भाषा का सर्वाधिक महत्व हैं। इसी महत्व के कारण भाषा की परिभाषाएँ की गई हैं। विद्वानों ने भाषा की परिभाषा अनेक प्रकार से दी हैं। अभी तक भाषा की कोई सर्वसम्मत परिभाषा सामने नहीं आई हैं क्योंकि भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों में पर्याप्त मतभेद हैं। विद्वानों ने भाषा की परिभाषाएँ अपने–अपने ढंग से प्रस्तुत की हैं। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं–

भारतीय विद्वानों के अनुसार भाषा की परिभाषा इस प्रकार हैं –

(1) भाषा के सुप्रसिद्ध <u>वैयाकरण महर्षि पंतजलि</u> ने अपने महाभाष्ण में भाषा का लक्षण करते हुए लिखा हैं। –
'' जो वाणी वर्णो में व्यक्त होती हैं उसे भाषा कहते हैं।''

(2) <u>कामता प्रसाद गुरू के अनुसार</u> – ''भाषा वह साधन हैं, जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली–भांति प्रकट कर सकता हैं और दूसरों के विचार आप स्पष्टता समझ सकता हैं।''

(3) <u>डॉ0 श्याम सुन्दर दास के अनुसार</u> – ''मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों का जो व्यवहार होता हैं उसे भाषा कहते हैं।''

(4) <u>भाषा रत्न नलिनी मोहन सान्याल के शब्दों में</u>– ''अपने स्वर को विविध प्रकार से संयुक्त तथा विन्यस्त करने से उसके जो–जो आकार होते हैं उनका संकेतों के सदृश व्यवहार कर अपनी चिन्ताओं को तथा मनोभावों को जिस साधन से हम प्रकाशित करते हैं उस साधन को भाषा कहते हैं।''

(5) <u>दुलीचन्द के मतानुसार</u> – ''हम अपने मन के भाव को प्रकट करने के लिए जिन सांकेतिक ध्वनियों का उच्चारण करते हैं उन्हें भाषा कहते हैं।''

(6) <u>बाबूराम सक्सेना जी के अनुसार</u> – ''जिन ध्वनि–चिहनों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार–विनिमय करता हैं। उसे समष्टि रूप से भाषा कहते हैं।''

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(7) डॉ0 मंगलदेव शास्त्री जी के अनुसार – '' भाषा मनुष्य की उस चेष्टा या व्यवहार को कहते हैं जिससे मनुष्य अपने उच्चारणोपयोगी शरीरावयवों से किए गए वर्णात्मक या व्यक्त शब्दों के द्वारा अपने विचारों को प्रकअ करते हैं।''

पाश्चात्य विद्वानों के अनुसार भाषा की परिभाषाएँ

Language is the expression of juman thought by means of speech sound and varticulate sound. A.A. Gardner

अर्थात् भाषा मानवीय ध्वनि संकेतों द्वारा मानवीय विचारों की अभिव्यक्ति हैं।

इसी प्रकार हैंन्डरी स्वीट की परिभाषा भी महत्व रखती हैं–

Language may be defined as the expression of thought by means of speech sound.

अर्थात ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा हैं।

(3) प्राचीन ग्रीस के प्रसिद्ध दार्शनिक और सौन्दर्यशास्त्री प्लेटो भाषा और विचार में बहुत सूक्ष्म अन्तर मानते हुए भाषा की परिभाषा बताते हैं–

''विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत हैं पर जब ध्वनि का रूप धारण कर ओठों से प्रकट होती हैं उसे भाषा कहते हैं।''

(4) सबसे पहले ए. एच. गार्डिनर ने अपनी पुस्तक– "Speech and Language" में भाषा की परिभाषा दी हैं–

The common definition of speech is the use of of articulate sound symbols for the expression of thought.

अर्थात ''विचार की अभिव्यक्ति के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों के व्यवहार को भाषा कहते हैं।''

(5) गुणे के अनुसार – ''ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा भावों तथा विचारों की अभिव्यक्ति ही भाषा हैं।''

(6) जेस्परसन के अनुसार – ''मनुष्य का मस्तिष्क विचार प्रकट करने के लिये ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग करता हैं जिन्हें भाषा की संज्ञा दी जाती हैं।''

(7) प्रसिद्ध पाश्चात्य विचारक वेन्द्रिए या वेन्द्रेज के अनुसार– ''भाषा एक तरह का चिह्न या प्रतीक हैं जिनके द्वारा मानव अपने विचार दुसरों पर प्रकट करता हैं। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं जैसे– नेत्र ग्राह्य कर्ण ग्राह्य और स्पर्श ग्राह्य ।

उपर्युक्त परिभाषाओं के बाद यह आसानी से कहा जा सकता हैं कि भाषा की परिभाषा करना बड़ा कठिन हैं। फिर भी भाषा विज्ञान की दृष्टि से हम भाषा विज्ञान की इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं –

''जिन यादृच्छिक तथा विभिन्न अर्थों में रूढ़ ध्वनि संकेतों के द्वारा मनुष्य अपने भावों विचारों को अभिव्यक्त करता हैं उन्हें भाषा कहते हैं।''

उपरोक्त परिभाषा में जो महत्त्वपूर्ण तत्व आए हैं, उनके स्वतंत्र विश्लेषण और विवेचन से भाषा को स्वरूप में निम्न तीन बातें ध्यान देने योग्य हैं –

(1.) भाषा ध्वनि संकेत हैं (2.) भाषा यादृच्छिक हैं (3.) भाषा रूढ़ हैं।

1. **भाषा ध्वनि संकेत हैं** – मनुष्य अपनी वागिन्द्रिय की सहायता से जिन संकेतों का उच्चारण करता हैं, वे ही भाषा के अर्न्तगत आते हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

2. <u>**भाषा यादृच्छिक हैं**</u> – भाषा में प्रयुक्त समष्टियां अर्थात् शब्द सार्थक होते हैं। शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाने वाले अर्थ स्वाभाविक या प्राकृतिक न होकर आरोपित अर्थात् माना हुआ होता हैं। भिन्न भिन्न देशों में रहने वाले लोग किसी शब्द का एक विशिष्ट अर्थ मान लेते हैं। यही कारण हैं कि एक ही वस्तु अथवा क्रिया के लिए संसार की विभिन्न भाषाओं से भिन्न–भिन्न शब्दों का प्रयोग होता हैं जैसे–

संस्कृत	हिन्दी	मराठी	गुजराती	अंग्रेजी	रूसी	फ्रांसीसी
श्वा	कुत्ता	कुत्रा	कुतरो	डॉग	सबका	श्याँ
अश्वः	घोड़ा	घोडों	घोडो	हॉर्स	लोशज्	शत्हास

उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट हैं कि ध्वनि संकेत यादृच्छिक हैं।

3. <u>**भाषा रूढ़ हैं**</u> – ''भाषा एक निश्चित व्यवस्था के आधार पर खड़ी हैं। प्रत्येक भाषा की व्यवस्था दूसरी से भिन्न होती हैं। यह अवस्था उस विशिष्ट भाषा की दूसरी से भिन्न होती हैं।

4. <u>**भाषा एक व्यवस्था**</u> – भाषा में एक व्यवस्था रहती हैं। शब्दों का व्यवस्थित रूप में प्रयोग ही उसमें सार्थकता उत्पन्न कर देता हैं।

5. <u>**भाषा एक पद्धति हैं**</u> – जिसमें सुव्यवस्थित योजना हैं तथा जिसमें कर्त्ता, कर्म, क्रिया आदि व्यवस्थित रूप से आते हैं और जिसके पद व वाक्य रचना का पालन करना अनिवार्य होता हैं।

6. भाषा संकेतात्मक हैं – ध्वनियाँ ही केवल संकेतात्मक या प्रतीकात्मक होती हैं।

भाषा की परिभाषा करते हुए डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने अपने मत रखे हैं–

1. भाषा–विचार विनिमय का साधन हैं।
2. भाषा का प्रयोग समाज विशेष में होता हैं जिससे वे बोली व समझी जाती हैं।
3. भाषा में ध्वनि समूह होते हैं लेकिन उनका भावों से कोई सहजात संबंध नहीं होता
4. भाषा एक व्यवस्था हैं।

निष्कर्ष :– उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता हैं कि भाषा का समाज सापेक्ष रूप ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण होता हैं। डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय के अनुसार– ''भाषा समाज में अर्जित वस्तु हैं। अनुकरण से आती हैं। बाह्य और भीतर के कारणों एवं स्वभाव के फलस्वरूप भाषा में परिवर्तन होते रहते हैं।''

<u>भाषा की प्रमुख प्रवृत्तियां/विशेषताएँ</u>

1. भाषा सम्पूर्ण रूप से सामाजिक वस्तु हैं – मनुष्य सामाजिक और समाजप्रिय प्राणी हैं। समाजप्रिय होने के कारण सामाजिकों से संबंध या व्यवहार स्थापित करना एक अनिवार्य शर्त हैं। भाषा का सम्पूर्ण जीवन व समाज से संबंधी हैं। संक्षेप में, भाषा समाज की, समाज के लिए और समाज द्वारा निर्मित होतीहैं।

<u>डॉ0 पीताम्बर सरोदे के अनुसार</u>– ''भाषा की उत्पत्ति ही सामाजिकता के निर्वाह के लिए हुई हैं, दूसरे शब्दों में–भाषा और सामाजिकता का संबंध अन्योन्याश्रित हैं।''

जिस प्रकार पैदा होने के बाद बच्चे का भाषा के साथ संबंध आता हैं उसी प्रकार संबंध की निश्चिति में माता–पिता–परिवार–मित्र–गुरू तथा पूरा समाज हाथ, बंटाता हैं। बच्चे को भाषा देने वाले उपरोक्त सभी अंगों ने परम्परा से ही भाषा का ज्ञान प्राप्त किया हैं। अधिक, विकसित और शिक्षित समाज की भाषा उन्नत संस्कृत और प्रत्येक प्रकार के भावों और विचारों को व्यक्त करने में सक्षम होती हैं। <u>''भाषा एक सामाजिक वस्तु हैं। जिस प्रकार से</u>

Downloaded notes from www.hindinotes.com

बाजार में मूल्य का प्रतीक नोट या सिक्के होते हैं उसी प्रकार समाज में भावों की अभिव्यक्ति के प्रतीक शब्दार्थ होते हैं– प्रो0 राजकुमार शर्मा

कहना न होगा की संस्कृत भाषा के क्षेत्र में पाणिनि, पंतजलि, वरदाचार्य पाश्चात्य क्षेत्र में– ब्लूमफील्ड, तारापोर, और हिन्दी भाषा के क्षेत्र में–कामताप्रसाद गुरू आचार्य महावीर प्रसाद, डॉ0 धीरेन्द्र आदि जैसे विद्वानों ने प्रशंस्य कार्य करके भाषा को परिनिष्ठित रूप देकर समाज की बहुमूल्य सम्पत्ति बनाया हैं।

2. भाषा परिवर्तनशील हैं :– ''क्षणे क्षणे यन्नवतामुपेति तदेवरूपं रमणीयता।

जो क्षण–क्षण नवीनता को प्रापत करें वही वस्तु रमणीक हैं। भाषा नित्यनूतन रूपधारिणी हैं। परन्तु यहाँ यह ध्यान देने योग्य हैं कि उसके परिवर्तन की पूर्णता एक नई भाषा का निर्माण करती हैं। कहीं–कहीं भाषा को रमणीक रूप वाली नायिका की संज्ञा दी जाती हैं और कहीं भाषा नव–नव परिर्वतन को भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से उसकी विकृति न कहकर उसका विकास कहा जाता हैं।

महाकवि बिहारी लाल का यह कथन भाषा पर चरितार्थ होता हैं,

लिखन बैठी जाकी छवी, गहि गहि गरब गरूर।
भऐ न केते जगत के, चतुर चित्तेरे कूर।।

बिहारी सतसई

विश्व की प्रत्येक वस्तु और सृष्टि के सभी जीव के समान भाषा भी परिवर्तनशील वस्तु हैं। परिवर्तन भाषा का प्रधान गुण हैं। प्रत्येक युग और देश की भाषा अपरिवर्तित रूप में नही रही हैं। भाषा में पाया जाने वाला यह परिवर्तन भाषा के ध्वनि शब्द, वाक्य और अर्थ सभी अंगों में पाया जाता हैं। शब्दों में कुछ नई ध्वनियाँ आकर जुड़ जाती हैं, कुछ छूट जाती हैं। तो कुछ में विपर्यय का भाव पाया जाता हैं। स्थान विशेष के कारण भाषा के रूप में स्थित अन्तर स्पष्ट रूप से सामने आता हैं भाषा का कोई अंश या रूप जब नए परिवर्तित रूप में हमारे सामने समुपस्थित होता हैं तभी हमें पता चलता कि भाषा में कुछ परिवर्तन घटित हो गया हैं। भाषा में पाया जाने वाला यह परिवर्तन भाषा में अनायास, अनजाने और सहज स्वाभाविक रूप से चला करता हैं।

3. जटिलता से सरलता की ओर – भाषा स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर और जटिलता से धीरे–धीरे सरलता की ओर बढ़ती जाती हैं। इस सम्बन्ध में डॉ0 श्यामसुन्दर दास का मत उल्लेखनीय हैं–

''भाषा प्रारम्भिक काल में जटिल, स्थूल रहती हैं, धीरे धीरे वह सरल, व्यस्त, सूक्ष्म और सुकुमार होती जाती हैं।''

यद्यपि अपवादों की कभी नहीं हैं फिर भी इतिहास और विज्ञान एक शिखर पर अनेक हो जाने की साक्षी देते हैं।

4. संयोगात्मक से वियोगात्मक – सर्वप्रथम भाषा में प्रकृति तथा प्रत्यय तत्व का अत्यधिक मिश्रित रूप सामने आता हैं। पद एवं वाक्य रचना भी अधिक योगात्मक या श्लिष्ट रहती हैं। भाषा की संयोगात्मक को श्लिष्टता भी कहते हैं। योरोपीय परिवार की गीरू, लैटिन अवेस्ता तथा संस्कृत संयोगात्मक भाषा के अंतर्गत आती हैं वहीं हिन्दी, अंग्रेजी योरोपीय परिवार में विकसित होते हुए भी वियोगात्मक भाषाओ के उदाहरण हैं। संयोगात्मक भाषाएं वह होती हैं जिनके शब्दों तथा वाक्यों मे उपसर्गों और प्रत्ययों का योग रहता हैं। अयोगात्मक या वियोगात्मक भाषाएँ वह होती हैं

Downloaded notes from www.hindinotes.com

जिनमें उपसर्ग, प्रत्यय आदि जोड़कर शब्द नहीं बनाये जाते अर्थात् शब्दों या वाक्यों के बनाने में उनके रूपों का कोई योग नहीं रहता हैं।

5. भाषा भाव सम्प्रेषण का साधन हैं – भाषा के ही माध्यम से मानव अपने भावों और विचारों को दूसरों तक पहुँचाता हैं। वह अपनी सजीव भावनाओं को बोलकर या लिखकर जितनी कुशलता से व्यक्त करता हैं उतनी ही कुशलता से अभिव्यक्ति की ओर कोई माध्यम नहीं हैं।

6. भाषा सामाजिक आत्मोदगार की प्रक्रिया हैं – भाषा के दो पक्ष हैं– (1) सीखना व (2) बोलना। भाषा शिक्षण भी दो प्रकार से होता हैं (1) अनुकरण से (2) यत्न साध्य से

मातृभाषा तो अनुकरण से ही सीखी जाती हैं। परन्तु अन्य भाषाएँ यत्न साध्य होती हैं।

7. भाषा मानव की अक्षय निधि हैं – भाषा मानवता की पूंजी हैं मानव ने आज तक जो सोचा, समझा देखा और अनुभव किया हैं उसका हो संकलन भाषा के रूप में विद्यमान हैं। ऋग्वेद ने इसे अमृत की नाभि और देवी की जिह्वा कहा हैं।

'' जिह्वा देवनामृतस्य नाभिः।''

8. भाषा सर्वशक्ति सम्पन्न – भाषा विश्व की सबसे महान शक्ति हैं जो नवीन सृष्टि की रचना कर दे। वह प्राण समाज में चेतना फूंक देती हैं। ऋग्वेद में इसको वायु के तुल्य सर्वगामी शक्ति बताया हैं–

''अहमेव बात इन प्रवामि आर अभाण भुवनाबि विश्रा''

9. भाषा विराट और विश्वकर्मा हैं– भाषा को ब्रह्म में तुल्य विराट् रूप में मानी गई हैं। विश्व की सारी भाषाएँ ही उसमें समाहित हो जाती हैं। शतपथ में कहा हैं–

''वाग्वे विराट्''

10. भाषा सर्वयापक हैं – मानव के प्रत्येक कार्य, भाषा द्वारा संचालित हैं। व्यक्ति–व्यक्ति व्यक्ति–समाज या सभी स्थितियों में मानव का आधार भाषा ही हैं। ज्ञान–विज्ञान धर्म, दर्शन, आचार–विचार आदि का आधार भाषा हैं। आचार्य भर्तृहरि ने कहा हैं कि–

''इति कत्तव्ये ता लीके सर्वा शब्द व्याश्रया''

11. भाषा समाज को एकसूत्र में बांधती हैं – भाषा ही वह समन्वय सूत्र हैं जो समाज को एक सूत्र में बांधती हैं तथा सभी को पारस्परिक एकात्मकता की अनुभूति कराती हैं। ऋग्वेद में भाषा को राष्ट्री और संगमनि कहा गया हैं। जिसका अर्थ हैं– राष्ट्र निर्मात्री और संबद्ध करने वाली–

'' अंह राष्ट्री संगमनी वस्नाम्।''

12. भाषा सर्वोत्तम ज्योति हैं – भाषा एक सर्वोत्तम ज्योति हैं क्योंकि यह मानव हृदय के अन्धकार को दूर करने में सहायक हैं तथा इसी से मानवीय क्रियाकलाप, व्यापार संचालित होते हैं। आचार्य भर्तृहरि ने स्वीकार किया हैं कि भाषा ज्ञान को प्रकाशित करती हैं। उसके बिना सविकल्पक ज्ञान संभव नहीं हैं।

13. भाषा का कोई अन्तिम स्वरूप नहीं – भौतिक वस्तुओं से भाषा का स्वरूप पूर्ण होने वाली वस्तु का स्वरूप अन्तिम बन होता हैं। परन्तु भाषा तो निरन्तर चलने वाली शाश्वत प्रक्रिया हैं। किसी भी समय की किसी भी भाषा को अथवा उसके रूप को अंतिम नहीं कहा जा सकता। वस्तुतः भाषा की स्थिरता और पूर्णता का एक अर्थ उसके विकास का अवरोध अर्थात मृत्यु हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

14. भाषा का अर्जन अनुकरणात्मक – अभी तक हमने जाना कि भाषा को व्यक्ति अर्जित कर सकता हैं। यह एक समाज सापेक्ष होने की बात हैं, परन्तु मनुष्य उसे उत्पन्न नहीं कर सकता। भाषा को हम अनुकरणों के आधार पर अर्जित करते हैं। जब मनुष्य शिशु रूप में होता हैं तब वह अर्जन की क्षमता रखता हैं और वहीं से वह भाषा का अनुकरण अपने माता–पिता की भाषा से करता हैं। जैसे माता शिशु के समक्ष दूध या पानी जैसे शब्दों का उच्चारण करती हैं तब शिशु उन्हीं शब्दों को धीरे–धीरे कहने का प्रयास करता हैं। प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तू के शब्दों मे। –

"अनुकरण मनुष्य का सबसे बड़ा गुण हैं। वह (मनुष्य) भाषा सीखने में भी उसी गुण का उपयोग करता हैं।"

15. प्रत्येक भाषा की एक भौगोलिक सीमा होती हैं :– प्रत्येक भाषा की अपनी एक भौगोलिक सीमा होती हैं। अर्थात प्रत्येक भाषा इतिहास के किसी निश्चित काल से प्रारंभ होकर इतिहास के निश्चित काल तक व्यवहृत होती हैं उसी प्रकार वह अपनी सीमा के भीतर ही अपना वास्तविक क्षेत्र चुन लेती हैं। उस सीमा से बाहर उसका स्वरूप थोड़ा या अधिक परिवर्तित हो जाता हैं, उस सीमा के बाहर किसी पूर्णतः भिन्न भाषा की सीमा शुरू हो जाती हैं।

निष्कर्ष :– "हर भाषा का स्पष्टतः या अस्पष्टतः एक मानक रूप होता हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि भाषा की एक निश्चित परिभाषा करना कठिन हैं। फिर भी यह निश्चित हैं कि वह अभिव्यक्ति का माध्यम हैं और उसकी अपनी विशेषताएँ हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न 3 भाषा विज्ञान का अभिप्राय समझाते हुए ज्ञान की अन्य शाखाओं से उसका क्या सम्बन्ध हैं? स्पष्ट कीजिए।

उत्तर भाषा विज्ञान भाषा का विज्ञान हैं। अर्थात–

''भाषायाः विज्ञानम् भाषा विज्ञानम्''

भाषा विज्ञान का इतिहास बहुत प्राचीन नहीं हैं। सापेक्षिक दृष्टि से यह एक अभिनव विज्ञान हैं। मैक्समूलर ही वह पहला व्यक्ति था जिसने इस विज्ञान के नामकरण की समस्या पर विचार किया था। डॉ0 उदय नारायण तिवारी ने लिखा हैं कि–

''हिन्दी में सम्प्रति फिलाजोजी तथा लिग्विस्टिक्स के लिए एक मात्र शब्द भाषा विज्ञान ही प्रचलित हैं।''

भाषा विज्ञान का क्षेत्र आजकल विस्तृत होता जा रहा हैं। उसके वर्तमान रूप को देखने पर वह पाश्चात्य अध्ययन की देन के रूप में ही स्वीकृत हैं, लेकिन भारत में वैदिक काल से ही भाषा विज्ञान के बीज उपलब्ध होते हैं। पाश्चात्य देशों में भाषा भाषा विज्ञान के विविध नाम प्रचलित हैं। यूरोप में सर्वप्रथम इसे फिलोलोजी (Philology) के नाम से पुकारा। साहित्यिक दृष्टिकोण से भाषा का अध्ययन फिलोलोजी हैं। आगे चलकर 19वीं शताब्दी में भाषाओं में भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन की प्रवृत्ति बढ़ी और यह कंपैरेटिव विश्लेषण से शोभित हुआ। तुलनात्मक अध्ययन पर अधिक ध्यान केन्द्रित होने के कारण यह ''कंपैरेटिव फिलोलोजी '' (Comparative Philology) कहलाया हैं। व्याकरण के साथ इसके घनष्ठि संबंध देखते हुए इसे तुलनात्मक व्याकरण भी कहा गया। फ्रांस में इस लैगिस्तीक या लिंग्विस्टिक्स नाम दिया गया। भाषा विज्ञान की वैज्ञानिकता को स्पष्ट होता देख इसे ''साइन्स ऑफ लैग्वेज'' कहा गया। आज अधिकांशतः लिंग्विस्टिक्स और फिलोलोजी इन नामों से ही यह शास्त्र यूरोप में परिचित हैं। इन दोनों का अर्थ भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन हैं।

<u>भाषा विज्ञान की परिभाषा</u>

अनेक विद्वानों ने भाषा विज्ञान की परिभाषाएँ दी हैं–

1. <u>डॉ0 श्याम सुन्दर दास के अनुसार–</u> ''भाषा विज्ञान उस शास्त्र को कहते हैं जिसमें भाषा मात्र के भिन्न–भिन्न अंगों और स्वरूपों के विवेचन तथा निरूपण किया जाता हैं।''
2. <u>डॉ0 भोलानाथ तिवारी –</u> ''भाषा विज्ञान का सीधा अर्थ हैं–भाषा का विज्ञान और विज्ञान का अर्थ हैं विशिष्ट ज्ञान इस प्रकार भाषा का विशिष्ट ज्ञान भाषा विज्ञान कहलायेगा।''
3. <u>डॉ0 बाबूराम सक्सेना</u> – ''भाषा विज्ञान का अभिप्राय भाषा का विश्लेषण करके उसका दिग्दर्शन कराना हैं।''
4. <u>डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी–</u> ''भाषा विज्ञान वह विज्ञान हैं जिसमें भाषा का सर्वांगीण विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता हैं।''
5. <u>ग्लिसन</u> – ''भाषा विज्ञान भाषा की आन्तरिक रचना के अध्ययन का शास्त्र हैं।''
6. <u>आर. एच. राबिन्स</u> – ''भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन की भाषा को भाषा विज्ञान कहा जा सकता हैं।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से एक ही परिभाषा पूर्ण रूप से सामने आती हैं जो इन सब परिभाषाओं की निचोड़ हैं–

''भाषा विज्ञान वह विज्ञान हैं जिसमें मानव प्रयुक्त व्यक्त वाक् का पूर्णतया वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता हैं।''

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

भाषा विज्ञान का अन्य शास्त्रों से संबंध

मानव समाज से संबंध रखने वाला कोई भी ऐसा विज्ञान अथवा शास्त्र नहीं हैं जिसका संबंध भाषा विज्ञान से न हो। भाषा मानव जीवन की सम्पूर्ण गतिविधियों का मूल आधार हैं। यही हमें ज्ञान–विज्ञान की गतिविधियों या अनुसंधान में सर्वाधिक मदद करता हैं। डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना ने लिखा हैं कि– ''जब भाषा हमारे जीवन जगत् ज्ञान–विज्ञान आदि के सभी क्षेत्रों में अपना अधिकार रखती हैं तब भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन करने वाले भाषा विज्ञान का संबंध ज्ञान विज्ञान की अन्य शाखाओं एवं ज्ञान विज्ञान के प्रतिपादक विविध शास्त्रों से होना स्वाभाविक हैं।''

इसी प्रकार भोलानाथ तिवारी ने अपनी भाषा–विज्ञान की पुस्तक में लिखा हैं–''ज्ञान अपने विराटतम रूप में अखण्ड हैं। तत्वतः उसे अलग अलग शास्त्रों तथा विज्ञानों आदि में इस प्रकार नहीं विभाजित किया जा सकता कि एक–दूसरे से पूर्णतः अलग हो। इसीलिए ज्ञान के इस अखण्ड कोश को केवल सुविधा के लिए अलग– अलग विज्ञानों एवं शास्त्रों आदि से विभाजित कर रखा हैं। इस प्रकार यह अखण्ड ज्ञान का यह विभाजन केवल व्यवहारिक हैं, तात्विक नहीं।''

इसी घनिष्ठता को ध्यान में रखते हुए भाषा विज्ञान का ज्ञान की कतिपय प्रमुख शाखाओं से संबंध स्पष्ट किया जा रहा हैं–

1. **भाषा विज्ञान और समाज शास्त्र** – सामाजिक प्राणी होने के नाते व्यक्ति समाज में रहता हैं और तब भावों का विनिमय भाषा के ही माध्यम से कर पाता हैं। यह स्पष्ट भी हैं कि भाषा एक सामाजिक आवश्यकता भी हैं। समाज शास्त्र में मानव की सामाजिक प्रवृत्ति के साथ–साथ उसके इतिहास का भी वर्णन रहता हैं। भाषा समाज व्यवस्था की नियामक भी हैं। भाषा हमें समाज के बहुआयामी पहलुओं से भी परिचित कराती हैं। भाषा विज्ञान और समाजशास्त्र दोनों का संबंध मानव जाति से ही हैं। भाषा विज्ञान द्वारा किसी भी विशेष जाति अथवा समाज की भाषा तथा उसकी मनोवृत्तियों के अध्ययन में सहायता मिलती हैं। देवनाम प्रिय अशोक के समय अच्छे अर्थ में प्रयुक्त होता था किन्तु ''मूर्ख'' के लिए आता हैं। जिस प्रकार दक्षिण भारत में पिल्ले या पिल्लई शब्द आदर पूर्वक लिया जाता हैं वही हिन्दी में कुत्ते के बच्चे के लिए यह शब्द प्रयुक्त होता हैं। इस अर्थ भेद और परिवर्तन कारणों के स्पष्टीकरण में भाषा विज्ञान और समाजशास्त्र दोनों एक–दूसरे की सहायक हैं।
2. **भाषा विज्ञान और व्याकरण** – भाषा विज्ञान और व्याकरण दोनों ही शब्द शास्त्र हैं। भाषा विज्ञान व्याकरण का व्याकरण हैं। व्याकरण की भाषा विशिष्ट और काल विशिष्ट होता हैं। जबकि भाषा विज्ञान सामान्यतः सभी भाषाओं से जुड़ा होता हैं। व्याकरण की तुलना में भाषा विज्ञान के नियम व्यापक होते हैं और भाषा विज्ञान और व्याकरण भाषा का ही अध्ययन करते हैं। व्याकरण शुद्ध भाषा की जानकारी के लिए जितना आवश्यक हैं उतना ही व्याकरणिक नियमों की व्याख्या के लिए भाषा विज्ञान आवश्यक हैं। इस प्रकार दोनों परस्पर उपकारी हैं व्याकरण केवल ''क्या'' का ही उत्तर देता हैं वहीं भाषा विज्ञान क्यों ? कैसे ? कब ? आदि प्रश्नों का उत्तर भी देता हैं यदि व्याकरण रूढ़िवादी हैं तो भाषा विज्ञान प्रगतिवादी! व्याकरण का संबंध केवल साहित्यिक मानक भाषा से ही होता हैं पर भाषा विज्ञान असभ्य, पहाड़ी और आदिवासी लोगों की बोलियों से भी अपने संबंध बना लेता हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

संक्षेप में यही कहा जा सकता हैं कि भाषा विज्ञान और व्याकरण में परस्पर घनिष्ठ संबंध हैं। प्रो0 राजकुमार शर्मा के अनुसार– ''भाषा विज्ञान की नींव व्याकरण की ईंटों से ही भरी जाती हैं,दोनों में अधिक विरोध नहीं हैं। प्रत्युत दोनों में परस्पर पूरक भाव हैं।

भाष विज्ञान को व्याकरण का ही विकसित रूप माना जाता हैं या व्याकरण का व्याकरण भी कहा जाता हैं।

3. <u>भाषा विज्ञान और साहित्य</u> – भाषा विज्ञान एक विज्ञान हैं जबकि साहित्य एक कला हैं। भाषा विज्ञान का संबंध बुद्धि या मस्तिष्क से अधिक हैं जबकि साहित्य का संबंध हृदय की रागात्मक प्रवृत्ति से हैं। प्रथम का क्षेत्र व्यापक हैं क्योंकि उसमें अप्रयुक्त भाषाओं एवं बोलियों का भी अध्ययन होता हैं। द्वितीय का क्षेत्र सीमित हैं क्योंकि उसमें मात्र साहित्यिक भाषाओं का ही अध्ययन होता हैं। इन दोनों में यह अन्तर स्पष्ट हैं जिस प्रकार भाषा अभिव्यक्ति का साधन हैं और साहित्य भाषा का स्थायी रूप उसी प्रकार साहित्य भाषा के आधार पर खड़ा हैं तो भाषा के सुरक्षित रूप की उपलब्धि साहित्य में प्राप्त होती हैं। यह साहित्य ही की कृपा हैं कि आज भाषाओं के पारिवारिक विकास के अध्ययन का कार्य भाषा विज्ञान कर सका हैं। भाषा विज्ञान में जब हम अर्थ परिवर्तन की विविध दिशाओं का अध्ययन करते हैं तो साहित्य ही हमें बतलाता हैं कि असुर, गवेषण और प्रवीण जैसे शब्द पहले किस अर्थ में प्रयुक्त होते थे और अब उनका अर्थ बदलकर क्या हो गया हैं ? भाषा विज्ञान का संबंध मस्तिष्क, विचार चिंतन से अधिक हैं, साहित्य का हृदय, भावना से अधिक हैं।

डॉ0 द्वारिका प्रसाद सक्सेना के अनुसार– ''सच पूछा जाए तो साहित्य ने ही भाषा–विज्ञान के अध्ययन को जन्म दिया हैं क्योंकि जिस समय पाश्चात्य विद्वानों ने संस्कृत के वरेण्य वाङ्मय का अध्ययन किया और उसके रूपों की तुलना ग्रीक, लैटिन, फ्रेंच, जर्मन आदि अंग्रेजी भाषाओं से की, तभी से भाषा विज्ञान का विकास हुआ हैं। अतः साहित्य भाषा विज्ञान का जनक हैं।''

4. <u>भाषा विज्ञान और मनोविज्ञान–</u> भाषा विज्ञान और मनोविज्ञान दोनों विज्ञान हैं। भाषा विज्ञान भाषा का और मनोविज्ञान मानव के मस्तिष्क का विवेचन करता हैं। भाष के मूल में मन ही हैं। मनोगत भावों और विचारों की वाचिक प्रतिक्रिया भाषा हैं। जिस प्रकार मनुष्य का मानस अनेक प्रकार की चेष्टाएँ क्रियाएँ और प्रतिक्रियाएँ करता हैं और यह क्रियाएँ वह जिस भाषा की उत्पत्ति और प्रारंभिक रूप की जानकारी में भी मनोविज्ञान विशेषतः बाल मनोविज्ञान और अविकसित लोगों का मनोविज्ञान हमारी बहुत सहायता करता हैं। पागलों के मनौवैज्ञानिक उपचार में उनके द्वारा कही गई उलूल–जलूल बातों के विश्लेषण जिसमें ग्रंथियों एवं गुत्थियों का पता लगाया जाता हैं भाषा विज्ञान का उसमें पर्याप्त सहयोग मिलता हैं। उसी प्रकार विचारों के विश्लेषण में भी भाषा विज्ञान पर्याप्त सहायता करता हैं। यही कारण हैं कि मनोविज्ञान और भाषा विज्ञान भी परस्पर घनिष्ठ संबंध रखते हैं।

5. <u>भाषा विज्ञान और दर्शन</u> – दर्शन का क्षेत्र आध्यात्मिक हैं। इसमें आत्मा–परमात्मा, जीवन मृत्यु आदि का चिन्तन किया जाता हैं। जीवन और जगत के अन्य अनेक प्रश्नों के भांति ही भाष का प्रश्न भी पर्याप्त रहस्यपूर्ण हैं। पंतजलि तथा भर्तृहरि ने भाषापर दार्शनिक दृष्टि से ही विचार किया हैं। स्फोटवाद का सिद्धान्त शब्द ब्रह्म की कल्पना आदि सभी दार्शनिक क्षेत्र के अर्न्तगत आते हैं।

इसी प्रकार भाषा के संबंध में जो अनेक जिज्ञासाएँ मानव के मस्तिष्क में उत्पन्न होती हैं और जिनका समाधान भाषा द्वारा होता हैं, वे सब भी दर्शन के अर्न्तगत आते हैं। भारत के ही नहीं वंरन् पश्चिम देशों में भी भाषा

Downloaded notes from www.hindinotes.com

पर सर्वप्रथम विचार करने वाले विद्वान दार्शनिक थे। प्लेटो, अरस्तु आदि इस प्रकार भाषा विज्ञान व दर्शन दोनों ने मिलकर भाषा संबंधी प्रश्नों का हल किया।

6. <u>भाषा विज्ञान और तर्क शास्त्र</u> – यास्क ने निरूक्त में तर्क शास्त्र की सहायता ली थी इसलिए आज भी भाषा विज्ञान और तर्क शास्त्र के संबंधों की गहनता पर खोज जारी हैं। भाषा विज्ञान के चार अंग व्याख्या, उत्पत्ति विकास और तुलना में तर्क शास्त्र उपयोगी सिद्ध हुआ। किसी विशेष अर्थ में प्रयुक्त होने वाला शब्द सामान्य अर्थ में कैसे प्रयुक्त होने लगा और सामान्य अर्थ में प्रयोग होने वाले शब्द का प्रयोग विशिष्ट अर्थ में कैसे होने लगा, इसकी खोज तर्कशास्त्र की सहायता से ही की जाती हैं।

7. <u>भाषा विज्ञान और शरीर विज्ञान</u> – भाषा विज्ञान में मुख से उच्चरित ध्वनियों द्वारा भाव या विचारों का अध्ययन किया जाता हैं। वक्ता से श्रोता तक ध्वनि की जो यात्रा होती हैं वह भाषा विज्ञान का विषय हैं और जिस स्थान से होकर जहाँ तक पहुँचती हैं वह शरीर विज्ञान का विषय हैं। शरीर विज्ञान के ज्ञान के अभाव में भाषा को योग्य ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता भाषण और श्रवण प्रक्रिया के संबंध में जानकारी पाना शरीर विज्ञान के लिए भी आवश्यक हैं। इस प्रकार शरीर विज्ञान के परिचय के अभाव में भाषा का पूर्ण ज्ञान होना संभव नहीं। क्योंकि ध्वनन (उच्चारण) और श्रवण भाषा के वह दो अनिवार्य तत्व हैं जिनका संपूर्ण संबंध शरीर विज्ञान से ही होता हैं।

8. <u>भाषा विज्ञान और भौतिक शास्त्र</u> – मुंह से ध्वनि उत्पन्न होने और उसके कानों तक पहुँचने के मध्य ध्वनियाँ लहरों में चलती हैं जो आकाश या आकाश लहरों के रूप में गमन करती हैं। इन लहरों के संबंध में पूरी जानकारी हमें भौतिक शास्त्र से ही प्राप्त होती हैं। जिस प्रकार अपने मानसिक आधार के कारण भाषा मनोविज्ञान से संबंध रखती हैं और इस प्रकार भाष विज्ञान तथा मनोविज्ञान का संबंध बनता हैं, उसी प्रकार अपने भौतिक आधार के कारण भाषा भौतिक विज्ञान से संबंध रखती हैं। लेरिस्कोप, काइमोग्राफ, कृत्रिम तालु, एक्सरे आदि से ध्वनियों के अध्ययन में काफी सहायता व सफलता मिली हैं। सीधे शब्दों में कहा जाए तो ध्वनि विज्ञान को पूर्णतः वैज्ञानिक रूप उपलब्ध करना भौतिकी के द्वारा ही संभव हो रहा हैं। अतः भाषा विज्ञान एकांगी भाव में भौतिक विज्ञान से सहायता लेता हैं।

9. <u>भाषा विज्ञान और भूगोल</u> – प्रत्येक भाषा का विशिष्ट भूखण्ड में व्यवहृत होती हैं। उसी वातावरण में उसका निर्माण विकास तथा विस्तार होता हैं। इसी कारण विभिन्न भू–प्रदेशों की भाषाएँ समान नहीं हैं। मानव भाषा का प्रयोग करता हैं साथ ही विशिष्ट भौगोलिक परिवेश का निवासी होने के कारण उस पर उस प्रदेश विशेष का पर्याप्त प्रभाव पाया जाता हैं। साथ साथ उसकी भाषा भी प्रभावित होती हैं। संसार की हजारों भाषाओं का सीमा निर्धारण इसी भूगोल की सहायता से होता हैं।

10. <u>भाषा विज्ञान और इतिहास</u> – भाषा विज्ञान तथा इतिहास का परस्पर स्वाभाविक संबंध हैं। पद विकास ध्वनि विकास अर्थ विकास आदि का समझने में इतिहास भाषा विज्ञान का मार्गदर्शन करता हैं। हिन्दी में विभिनन विदेशी शब्दों का आगमन कैसे–कैसे और कब–कब हुआ इसका ज्ञान देश के इतिहास द्वारा विदेशियों के आक्रमणों की जानकारी आदि से ही संभव हैं। इसी भांति भाषा विज्ञान के अर्न्तगत अनेक प्राचीन भाषाओं के अध्ययन से विभिन्न देश–कालों के इतिहास पर प्रकाश पड़ता हैं। इतिहास तथा पुरातन संस्कृति के अनेक महत्त्वपूर्ण अंश हमें आज भाषा विज्ञान की कृ पा से ही प्राप्त हुए हैं– प्राचीन मिस्त्री और असीरियन संस्कृति इसके प्रमाण हैं। इतिहास के तीन रूप लेकर यहाँ भाषा विज्ञान से उसका संबंध दिखलाया जा रहा हैं–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(1) राजनीतिक इतिहास– किसी देश में किसी अन्य देश का राज्य होना दोनों ही देशों की भाषाओं को प्रभावित करता हैं। भारतीय भाषाओं में कई हजार अंग्रेजी शब्दों का प्रवेश तथा दूसरी ओर अंग्रेजी में कई हजार भारतीय शब्दों का प्रवेश भारत की राजनीतिक परतंत्रता या इन दोनों के बीच राजनीतिक संबंध का ही परिणाम हैं।

(2) धार्मिक इतिहास – भारत में हिन्दी–उर्दू समस्या धर्म या सांप्रदायिकता की ही देन हैं। धर्म के रूप में परिवर्तन का भी भाषा पर प्रभाव पड़ता हैं। धर्म के कारण ही बहुत सी बोलियाँ अन्यों की तुलना में महत्त्वपूर्ण होकर भाषा बन जाती हैं धर्म के प्राचीन रूप की गुत्थियों भाषा विज्ञान से सुलझ जाती हैं।

(3) सामाजिक इतिहास – सामाजिक इतिहास या सामाजिक व्यवस्था तथा परंपराओं का भी भाषा पर प्रभाव पड़ता हैं और दूसरी ओर भाषा से भी सामाजिक इतिहास पर प्रकाश पड़ता हैं। इस प्रकार भाषा विज्ञान तथा सामाजिक इतिहास भी एक–दूसरे के सहायक हैं।

इस प्रकार भाषा विज्ञान और इतिहास का संबंध अन्योनाश्रित हैं।

(4) भाषा विज्ञान और मानव शास्त्र– मानव के विकास में भाषा का पूर्ण रूपेण सहयोग रहा हैं। ''वाणी'' को ईश्वर द्वारा प्रदत्त वरदान माना जाता हैं। आदि मानव इंगित भाषा का प्रयोग करता हैं। जैसे–जैसे वह उन्नति के सोपान चढ़ता गया, भाषा भी विकसित होती चली गई। प्रारंभ में सबकी एक भाषा थी अथवा अलग–अलग इसका उत्तर मानव शास्त्र देता हैं। दूसरी ओर भाषा विज्ञान भी बतता हैं कि एक समाज की भाषा और दूसरे समाज की भाषा में क्या साम्य हैं और क्या वैषम्य हैं।

''भाषा विज्ञान का संबंध मस्तिष्क से हैं और यह चेतना का प्रतीक हैं। अतः समस्त ज्ञान विज्ञान इसके हमनशीं हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता हैं कि भाष विज्ञान का संबंध अनेक शास्त्रों से हैं। एक अन्य शास्त्र हैं जो भाषा शिक्षण हैं उससे भी भाषा विज्ञान का संबंध हैं–

12. भाषा विज्ञान और भाषा शिक्षण – यद्यपि भाषा शिक्षण ओर भाषा वैज्ञानिक का कार्य भिन्न–भिन्न हैं तथापि भाषा शिक्षण का कार्य किसी भाषा जो चाहैं स्वदेशी हो या विदेशी सहज रूप से बोधगम्य बनाना हैं। आधुनिक युग में भाषा को जो महत्व मिला हैं उसका श्रेय भाषा के शिक्षकों को हैं।

निष्कर्ष – संक्षेप में कह सकते हैं कि भाष विज्ञान का ज्ञान की अन्य शाखाओं से एक बहुत बड़ी सीमा तक संबंध हैं जिनमें सांख्यिकी,गणित, काव्यशास्त्र, यांत्रिकी आदि सम्मिलित हैं।

भाषा विज्ञान के अध्ययन की उपयोगिता

विज्ञान का अध्ययन केवल भोतिक लाभ के लिए नहीं होता हैं ज्ञान का अन्यतम और सर्वोतम उपयोग हैं– बौद्धिक जिज्ञासा पिपासा को तृप्त करना। मनुष्य के इतिहास एवं चिन्तन की सुरक्षा भाषा के द्वारा ही संभव हो सकी। भाषा की उत्पत्ति विकास का अध्ययन हमारे मन के अनेक प्रश्नों को शांत करता हैं। जैसे–

1. भाषा का सम्यक ज्ञान भाषा विज्ञान की उपयोगिता को प्रमाणित करता हैं।
2. भाषा की शुद्धता और समुचित तथा साधु प्रयोग की जानकारी रखना।
3. समाज संस्कृति और इतिहास की जानकारी पाना भाषा विज्ञान की उपयोगी उपलब्धि हैं।
4. अनुवाद कार्य आन्तर भारती का कार्य हैं ?
5. लिपि सुधार के साथ ही नई लिपि के प्रश्न को हल करने में भी भाषा विज्ञान सहायता पहुँचाता हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

,6. उच्चारण विषयक दोषों का निवारण करने व तुतलाहट व हकलाहट में भी भाषा विज्ञान मदद पहुँचाता हैं।

7. भाषा विज्ञान ने संचार के साधनों को उन्नत कर दुनिया बहुत छोटी बना दी हैं।

8. प्राचीन ग्रंथों के पाठ संशोधन एवं अर्थ बोध से भी भाषा विज्ञान सहायता पहुँचाता हैं।

इस प्रकार भाषा विज्ञान साध्य और साधन दोनों रूपों में उपयोगी साबित हुआ हैं। हमारे लिए भाषा ही अनिवार्य सही अपितु भाषा विज्ञान के इन विविध बहुआयामी उपयोगिता को देखकर तो ऐसा लगता हैं कि आज के वैज्ञानिक युग में हमारे लिए भाषा विज्ञान की महत्ता अधिक हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न4. भाषा विाान के अध्ययन के प्रकार और उसके अंगों पर विस्तार से प्रकाश डालिय।

उत्तर भाषा विज्ञान में भाषा और विज्ञान दो शब्द हैं। पीछे भाषा की व्याख्या की जा चुकी हैं विज्ञान का अर्थ हैं किसी वस्तु का क्रमबद्ध ज्ञान। भाषा विज्ञान भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन को कहा जाता हैं। भाषा के` वैज्ञानिक अध्ययन से तात्पर्य हैं कि उसका भीतरी और बाहरी दोनों दृष्टियों से सम्यक अध्ययन किया जाए। यह अध्ययन कई प्रकार से किया जा सकता हैं। वर्णात्मक भाषा विज्ञान के द्वारा, ऐतिहासिक भाषा विज्ञान के द्वारा तुलनात्मक और प्रायोगिक भाषा विज्ञान के द्वारा।

<u>भाषा और विज्ञान :–</u> ये दो परस्पर संबंधित शब्द हैं। भाषा का सहारा जिह्वा हैं और विज्ञान का मस्तिष्क। मस्तिष्क की क्रियाशीलता जिह्वा को वाणी प्रदान करती हैं। जब तक ये दोनों शब्द पृथक पृथक रहते हैं तब तक तो भाष और विज्ञान के क्षेत्र अलग अलग दिखाई पड़ते हैं किन्तु साथ आते ही अपना घनिष्ठ संबंध जोड़ते हैं। तथा इनकी द्वैतावस्था समाप्त होकर अद्वैतावस्था में बदल जाती हैं। यह स्पष्ट हुआ कि भाषा का प्रवाह जो दीर्धकाल से अनेक मोड़ों और दरों से होकर चला आ रहा हैं, उसका वैज्ञानिक अध्ययन भाषा विज्ञान का कार्य हैं।

<u>भाषा विज्ञान अध्ययन के प्रकार :–</u> संक्षेप में भाषा का पूर्ण वैज्ञानिक अध्ययन ही भाषा विज्ञान हैं और किसी भी विषय का पूर्ण अध्ययन तभी संभव होता हैं जब हम एक निश्चित प्रक्रिया को अपनाकर उसमें प्रवृत्त होते हैं। भाषा विज्ञान भी किसी भाषा के कारण कार्यमूलक युक्तिपूर्ण विवेचन विश्लेषण के लिए कुछ निश्चित प्रक्रियाओं में बंधकर चलता हैं। उन्हीं प्रक्रियाओं के आधार पर अभी तक भाषा विज्ञान के अध्ययन के पांच प्रकार हमें उपलब्ध होते हैं–

1. <u>वर्णनात्मक भाषा विज्ञान</u> :– जिसमें किसी एक भाषा के किसी एक ही काल के स्वरूप की व्याख्या या वर्णन रहता हैं। किसी विशेष काल में किसी भाषा में कितनी ध्वनियां थी? पद रचना कैसी थी ? वाक्य रचना कैसी थी ? आदि–आदि का इसमें विस्तार से वर्णन किया जाता हैं। इस प्रकार के अध्ययन से हमें उस विशिष्ट भाषा का पूर्ण परिचय प्राप्त हो जाता हैं । संस्कृत भाषा का पाणिनीय व्याकरण इसका सर्वोकृष्ट उदाहरण हैं।
2. <u>ऐतिहासिक भाषा विज्ञान</u> :– जिसमें किसी एक भाषा का उसके विभिनन अंगों पद रचना वाक्य रचना आदि के क्रमिक विकास का अध्ययन किया जाता हैं। इस प्रकार के अध्ययन से हमें किसी भाषा के प्राचीन काल से लेकर आज तक के साहित्यिक असाहित्यिक (बोलचाल) अथवा मृत (प्रयोग बाह्य) आदि रूपों का परिचय मिल जाता हैं। भाषा के इस प्रकार के ऐतिहासिक अध्ययन में प्राचीन साहित्य पुरातन ग्रंथ तथा शिला लेख आदि सभी हमारे अध्ययन के साधन बन जाते हैं। 19वीं शताब्दी को ऐतिहासिक भाषा विज्ञान का स्वर्ण युग माना जाता हैं।
3. <u>तुलनात्मक भाषा विज्ञान</u> :– जिसमें किन्हीं दो या दो से अधिक भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता हैं। जिन भाषाओं को अध्ययन का विषय बनाया जाता हैं, उनके विभिनन अंगों की तुलना किसी एक काल के आधार पर अथवा विभिन्न कालों के आधार पर की जाती हैं। यद्यपि आधुनिक काल में 18वीं शताब्दी के अन्त में विलियम जोन्स द्वारा इसका सूत्रपात किया गया किन्तु इसका पूर्ण विकास भी 19वीं शताब्दी में हुआ हैं। उन दिनों भाषा विज्ञान का नाम ही तुलनात्मक भाषा विज्ञान पड़ गया था।
4. <u>संरचनात्मक भाषा विज्ञान</u> :– जिसमें भाषा में प्रयुक्त सभी तत्वों का पारस्परिक विशिष्ट संदर्भ में क्रमशः अध्ययन किया निवासी ''स्विट्जरलैण्ड'' को संरचनात्मक स्कूल से सबद्ध स्विट्जरलैण्ड किया जाता हैं। पहले जेनेवा स्कूल और उसके पश्चात प्राग स्कूल इस भाषा विज्ञान का केन्द्र रहा हैं। आजकल पाश्चात्य देशों में इस पर पर्याप्त कार्य हो

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

रहा हैं। भाषा के अध्ययन में संरचनात्मक भाषा विज्ञान से गणित के समान ही निश्चित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं। इसी का नाम गठनात्मक भाषा विज्ञान भी हैं।

<u>भाषा विज्ञान का प्रतिपाद्य विषय क्षेत्र या विभागः</u>

भाषा विज्ञान की विषयगत परिधि चौड़ाइ में इतनी अधिक हैं कि उसके अर्न्तगत अनेक विषयों का अध्ययन तो समाविष्ट होता ही हैं साथ ही विविध भाषाओं की व्युत्पति, विकास, ह्रास और परिवर्तन एवं उसके कारण भी विदित हो जाते हैं। भाषा विज्ञान किसी एक विषय का अध्ययन न होकर विविधि विषयों का अध्ययन हैं।

भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन में भाषा विषयक अनेक प्रश्नों पर विचार किया जाता हैं। इनमें से कुछ नियम ऐसे हैं जो प्रधान हैं और कुछ ऐसे हैं जो गौण हैं। अतः भाषा विज्ञान का क्षेत्र जानने के लिए उसके विविध विषयों का परिचय यहाँ दिया जाता हैं।

भाषा के प्रमुख अंग और उपाँगों में वाक्य पद, ध्वनि तथा अर्थ आते हैं। इन्हीं के आधार पर भाषा विज्ञान के अर्न्तगत निम्नांकित विषयों का अध्ययन किया जाता हैं इनका परिचय इस प्रकार हैं–

1. <u>प्रोक्ति विज्ञान</u> :– किसी बात को कहने के लिए प्रयुक्त वाक्यों के उस समुच्चय को ''प्रोक्ति'' कहते हैं जिसमें एकाधिक वाक्य आपस में सुसंबद्ध होकर अर्थ और संरचना की दृष्टि में एक इकाई बन गये हो। हिन्दी में प्रोक्ति विज्ञान का नामकरण डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने अपनी पुस्तक भाषा विज्ञान में सुझाया हैं। अंग्रेजी में एक पुराना शब्द हैं ''डिस्कोर्स''। उसी को अब अंग्रेजी में इस अर्थ का शब्द मान लिया गया हैं। अर्थ और संरचना आदि सभी दृष्टियों से विचार करने पर प्रोक्ति ही भाषा की मूलभूत सहज इकाई ठहरती हैं और क्योंकि समाज में विचार–विनिमय के लिए उसी का प्रयोग किया जाता हैं तथा वाक्य उसी का विश्लेषण करने पर प्राप्त होते हैं, अतः वाक्य मूलतः भाषा की सहज इकाई नहीं हो सकते। जैसे–

''लंका के अत्याचारी राजा रावण ने अयोध्या के राजकुमार राम की पत्नी को उठाकर अपने रथ में बैठाकर ले गया पता चलने पर राम की सेना ने रावण पक्ष पर चढ़ाई कर दी रावण पक्ष के लोग मारे गऐ। राम ने रावण को बाण मारा और रावण वीरगति को प्राप्त हुआ।''

यह एक प्रोक्ति हैं जिसमें कई वाक्य हैं, जैसे युद्ध में रावण पक्ष के काफी लोग मारे गए या राम ने रावण बाण मारा आदि। ये सभी वाक्य आपस में सुसंबद्ध हैं।

2. <u>वाक्य विचार (Syntax)</u> :– भाषा का प्रधान कार्य विचार–विनिमय हैं और विचारों का आदान प्रदान वाक्यों के माध्यम से होता हैं। अतः वाक्य भाषा में सर्वाधिक महत्व की वस्तु हैं। इस वाक्य के भी दो उपविभाग किए जा सकते हैं– (1) तुलनात्मक (2) ऐतिहासिक वाक्य विचार। तुलनात्मक वाक्य विचार के अर्न्तगत किन्हीं दो भाषाओं को परस्पर एक ही दृष्टि से देखा और परखा जाता हैं और उसमें भी वाक्य की तुलना की जाती हैं दो भाषाओं की परस्पर तुलना और फिर उसमें भी वाक्य की तुलना एक गुरूत्तर कार्य हैं और कठिन भी। ऐसी स्थिति में दोनों का गंभीर ज्ञान अपेक्षित हैं।

दूसरा ऐतिहासिक वाक्य विचार भी बड़ा महत्त्वपूर्ण हैं। इसके अर्न्तगत किसी भाषा के वाक्य विधान का ऐतिहासिक अध्ययन करना पड़ता हैं। ऐतिहासिक विचार–विनिमय की इस प्रणाली के अर्न्तगत प्रारंभ से लेकर आज तक के परिवर्तनों की समीक्षा सोच समझकर की जाती हैं। तुलनात्मक वाक्य विचार की अपेक्षा यह कार्य कुछ सुगम प्रतीत होता हैं, किन्तु ज्ञातण्य यह हैं कि इस कार्य को पूरी कुशलता से वही व्यक्ति कर सकता हैं जो मनोवैज्ञानिक

Downloaded notes from www.hindinotes.com

पद्वति का आश्रय ले सके। भाषा विज्ञान में वाक्य विचार का अपना अलग–अलग और विशिष्ट महत्व हैं, उसे सुलझाया जा सकता हैं। वाक्य का अध्ययन पदक्रम, अन्वय, निकटस्थ अवयव, केन्द्रिकता, मूलवाक्यता, रूपांतरित वाक्यता, बाह्य संरचना, परिवर्तन आदि से भी किया जाता हैं।

3. रूप विज्ञान (Morphology) :– रूप विचार का भाषा विज्ञान में विशेष महत्व हैं। इनके अर्न्तगत हम पद रचना का सम्यक अध्ययन करते हैं। इस पद रचना के अध्ययन को हम रूपात्मक विश्लेषण कह सकते हैं। पद विज्ञान और पद विचार भी इसी के नाम हैं। शब्द के विभिनन भागों में जैसे मूलरूप उपसर्ग, प्रत्यय, विभक्ति आदि अध्ययन करते हैं। भाषा विज्ञान इस विषय का व्याकरण की सहायता से अच्छी तरह समझ सकता हैं। इस विषय को कुछ लोगों ने प्रत्यय विचार अभिधा से भी पुकारा हैं।

4. शब्द विज्ञान (Wordology) :– रूप या पद मूलाधार शब्द हैं। शब्द पर रचना और इतिहास दो दृष्टियों से विचार–विमर्श किया जा सकता हैं। किसी भी भाषा शब्द समूह का विचार किया जा सकता हैं। किसी भी भाषा शब्द समूह का विचार इसी के अर्न्तगत आता हैं। ''कोष निर्माण तथा व्युत्पति शास्त्र भी शब्द विज्ञान के ही अंग हैं। शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जाता हैं। प्रमुखतः व्युत्पतियों के प्रसंग में। किसी भाषा के शब्द समूह के अध्ययन के आधार पर उसे बोलने वाले के सांस्कृतिक इतिहास पर पर्याप्त प्रकाश डाला जा सकता हैं।

5. ध्वनि विचार :– ध्वनि से ही शब्द का निर्माण होता हैं या यों कहैं कि शब्द का आधार ध्वनि हैं। ध्वनि विज्ञान के अर्न्तगत ध्वनि पर अनेक दृष्टियों से विचार किया जाता हैं। ध्वनि कैसे उत्पन्न होती हैं और उसको हम किन–किन दिशाओं में या वर्गों में बांट सकते हैं। इतना ही नहीं इसके अर्न्तगत ध्वनि परिवर्तन किन किन दिशाओं में होता हैं और उसके ऐसे कौन से कारण होते हैं। इन सभी बातों का अध्ययन भाषा विज्ञान में ध्वनि विचार शीर्षक से किया जाता हैं। ध्वनि से संबंधित अवयवों मुख विवर, नासिका विवर, स्वर तन्त्री तथा ध्वनि यन्त्र आदि को भी इसी विभाग के अर्न्तगत समझते हैं। ध्वनि विचार का अध्ययन भी दो दिशाओं में किया जा सकता हैं–तुलनात्मक और ऐतिहासिक ध्वनि विचार। तुलनात्मक ध्वनि विचार में किसी स्थिर करते हैं? ग्रिम ने जो ध्वनि नियम बनाया उसका प्रथम भाग तुलनात्मक ध्वनि विचार के ही अर्न्तगत हैं। इसके साथ ही दूसरा भाग ऐतिहासिक ध्वनि विचार में एक भाषा के ध्वनि विकास का अध्ययन करते समय दृष्टि की ऐतिहासिकता अनिवार्य हैं।

6. अर्थ विचार (Semantics) :– भाषा विज्ञान का यह भी एक महत्वपूर्ण अंग हैं। इसके बिना भाष विज्ञान अधूरा हैं। अपूर्ण हैं। प्रो0 राजकुमार शर्मा के अनुसार – ''भाषा का शरीर वाक्य से चलकर ध्वनि की इकाई पर समाप्त होता हैं।''

अर्थ विज्ञान के अर्न्तगत भाषा का मनोवैज्ञानिक अध्ययन किया जाता हैं। किसी भाषा में किन आधारों पर शब्दों के साथ उनके अर्थ भी बदल जाते हैं, इसका अध्ययन अर्थ विज्ञान का विषय हैं। इसके साथ ही अर्थ विज्ञान का कार्य यह बतलाना भी हैं कि कोई एक रूप कितने अर्थो का बोध कराता हैं तथा वही अर्थ किन–किन रूपों में आ सकता हैं।

अर्थ विचार की सीमाएं यहीं समापत हो जाती हैं, ऐसी बात नहीं हैं वस्तुत इसके आगे बढ़कर यह भी बताया जाता हैं कि शब्दार्थ परिवर्तन की कौन–कौन दशाएं हैं– अर्थोत्कर्ष, अर्थापकर्ष और अर्थ विस्तार अर्थ संकोच का भी परिचय इसके अध्ययन से ही मिलता हैं। जैसे–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

''अश्व'' का अर्थ घोडा क्यों हैं, गाया क्यों नहीं आदि बड़े रोचक विषय इसके अन्दर आते हैं। ''मृग'' शब्द पहले सामान्य पशु अर्थ में प्रयुक्त होता था, किन्तु अब केवल हिरण के लिए ही क्यों प्रयुक्त होने लगा, ये सभी बातें कारण सहित अर्थ विज्ञान में जानी जाती हैं। प्रो0 राजकुमार शर्मा के अनुसार– ''भाषा विज्ञान जैसे शब्द विषय अर्थ परिवर्तन जैसे मनमोहक और मनोरंजक विषय को पाकर सरस बन जाता हैं।''

6. <u>पद विज्ञान</u> :– अनेक ध्वनियों के समन्वय से पद या शब्द बनता हैं। पद विज्ञान को रूप विज्ञान, रूप विचार और पद विचार भी कहा जा सकता हैं। इसमें पद या रूप क्या हैं ? पद कैसे बनता हैं ? पद के घटक क्या हैं ? पदों का विभाजन किस आधार पर होता हैं ? लिगं, विभक्ति, वचन पुरूष, काल प्रकृति प्रत्यय, उपसर्ग आदि तत्व क्या हैं ? इनकी क्या उपयोगिता हैं ? शब्द और पद में क्या अन्तर होता हैं ? पद निर्माण कितने प्रकार का होता हैं ? इत्यादि विषयों का पद विज्ञान में विवेचन किया जाता हैं।

<u>गौण विषय</u> :– भाषा विज्ञान में जिन प्रमुख विषयों का अध्ययन किया जाता हैं उनका विवेचन करने के बाद अब आवश्यक यह हैं कि कुछ गौण विज्ञान का अध्यन किया जाए। इन गौण विषयों में भाषा की उत्पति आदि विषय आते हैं। इनका विवेचन इस प्रकार हैं–

1. <u>भाषा की उत्पति</u> :– भाषा विज्ञान में जिन प्रमुख विषयों का अध्ययन किया जाता हैं उनमें प्रमुख भाष की उत्पति हैं या भाषोत्पति। भाषा की उत्पति कैसे हुई और उसका विकास किस आधार पर और किस बिन्दु से हुआ, यह समझा जा सकता हैं। भाष उत्पति के संबंध में विभिन्न विद्वानों ने अपने ढ़ग से विचारों को प्रकट किया हैं। प्रायः सभी मतों में कुछ न कुछ अपूर्णता हैं। हाँ, विकासवाद या समन्वित रूप ही कुछ अधिक मान्यता प्राप्त कर गया हैं।

2. <u>भाषाओं का वर्गीकरण</u> :– भाषा विज्ञान के अर्न्तगम भाषाओं के वर्गीकरण विषयक तथ्यों, कुछ सिद्धान्तों को निश्चित किया जाता हैं और फिर संसार की भाषाओं का विभाजन किया जाता हैं। भाषा विज्ञान वेस्ता विभिन्न भाषाओं का तुलनात्मक तथा ऐतिहासिक अध्ययन करके, उन्हें विभिन्न भाषा परिवारों में विभजित करते हैं। भाषाओं के प्रवृत्ति मूलक तथा पारिवारिक वर्गीकरण का कार्य भाषा विज्ञान का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। यह वर्गीकरण अर्थ या ध्वनि संबंधी अनेक भ्रमों के निवारण में भी सहायक होता हैं।

3. <u>व्युत्पति विचार</u> :– यह भी भाषा विज्ञान का गौण, किन्तु पर्याप्त मनोरंजक विषय हैं। भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन का सूत्रपात करने में अंग का विशेष हाथ रहा हैं। ध्वनि अर्थ तथा रूप विचार के सम्मिलित प्रयोग से इस विषय उत्पति हुई हैं। किसी शब्द का जन्म, परिवर्तन परिवर्द्धन तथा विकास जिस आाधर पर होता हैं उसका अध्ययन भाषा विज्ञान करता हैं। शब्दों की व्युत्पति का बड़ा महत्व हमें व्युत्पति के प्रकरण में भाषा विज्ञान यह बताता हैं कि कौन सा शब्द कहाँ और किस प्रकार कार्य करता हैं तथा प्रकार बनता हैं।

4. <u>शब्द कोश</u> :– शब्दों के समूह में होने वाले परिवर्तन विदेशी शब्दों ग्रहण आदि कई बातों पर इस विषय के अर्न्तगत विचार विमर्श किया जाता हैं।

5. <u>प्रागैतिहासिक खोज</u> :– भाषा विज्ञान के क्षेत्र में इस विषय का अभी हाल में ही जन्म हुआ। इस विषय का भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से विशेष महत्व हैं। इसके द्वारा प्राचीन भाषा के विश्लेषण द्वारा संबंधित काल की सभ्यता व संस्कृति का सरलता से पता लगाया जा सकता हैं। भाषा के आदि रूपों को समझने में भी इससे बड़ी मदद मिलती हैं।

6. <u>भाषा भूगोल</u> :– इसमें किसी भाषा क्षेत्र का ध्वनि रूप वाक्य, अर्थ तथा शब्द आदि की दृष्टि से अध्ययन करके उसे भाषाओं और बोलियों में बांटा जाता हैं। उत्तरी भारत में भारतीय आर्य भाषा परिवार की कितनी भाषाएं हैं और उसकी

Downloaded notes from www.hindinotes.com

कितनी बोलियां तथा उपबोलियां हैं एवं उसकी निश्चित सीमाएं क्या हैं, इस प्रकार का अध्ययन इसी के अर्न्तगत आता हैं। भाषा विज्ञान की बोली भूगोल नामक प्रसिद्ध शाखा इसी के अर्न्तगत आती हैं।

7. <u>शैली विज्ञान (Stylislics)</u> :– एक भाषा भाषी सभी व्यक्तियों की भाषा, ध्वनि, शब्द रूप तथा वाक्य रचना आदि की दृष्टि से पूर्णतः समान नहीं होती। इसी प्रकार एक ही भाषा में लिखने वाली लेखकों एवं कवियों की भाषा में उनकी कुछ शैलीगत विशेषताएं होती हैं जिनके आधार पर बतलाया जा सकता हैं कि कौन किसकी रचना हैं। इन वैयक्तिक अंतरो या शैलीगत विशेषताओं या काव्य भाषा का अध्ययन शैली विज्ञान का विषय हैं।

8. <u>सर्वेक्षण पद्वति (Field Method)</u> :– किसी क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा के विश्लेषण के लिए सामग्री एकत्र करने की पद्वति का अध्ययन सर्वेक्षण पद्वति कहलाता हैं। इसमें सूचक कैसा चूने सर्वेक्षण कैसा हो, प्रश्नावली कैसे बनाएं, सामग्री कैसे लिखें जैसे प्रश्नों पर विचार किया जाता हैं।

गौण अंगों के रूप में मनोभाषा विज्ञान, भाषा प्रकार विज्ञान, भाषिक, पुननिर्माण, भाष विकास आदि की गणना भी की जाती हैं।

9. <u>लिपि</u> :– लिपि के अभाव में तो कोई भी भाषा विज्ञान पूर्णता का दावा नहीं कर सकता हैं जब कभी भी लिपि की उत्पति विकास तथा उसके भविष्य के संबंध में विचार किया जाता हैं तब किसी भी लिपि के प्राचीन, नवीन रूपों को तुलनात्मक अध्ययन किया जाता हैं, किसी भी भाषा के प्राचीन और नीवन रूपों का अन्तर समझने में अधिक उपयोगी सिद्ध होता हैं। डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने इन गौण विषयों के अतिरिक्त ऐसे विषय भी बताए हैं जो भाषा विज्ञान की अध्यन की सीमा में किसी न किसी रूप में अवश्य आ जाते हैं।

1. भाषा तथा उसके विविध रूप, ग्रथ बोली, विभाषा उपभाषा, राष्ट्र भाषा, कृत्रिम भाषा, विशिष्ट भाषा और गुप्त भाषा आदि का भी अध्ययन नहीं किया जाता हैं।
2. उन रूपों के बनने के कारण।
3. भाषा की प्रकृति।
4. भाषा के विकास के कारण।
5. उसके विकास में व्याघात उपस्थित करने वाले कारण।
6. भाषा विज्ञान का इतिहास या भाषा के अध्ययन का इतिहास।
7. किसी जीवित भाषा के अध्ययनार्थ सामाग्री एकत्र करने की प्रणाली का अध्ययन किया जाता हैं।

निष्कर्ष :– यही कहा जा सकता हैं कि भाषा विज्ञान का क्षेत्र अत्यन्त्र व्यापक हैं। इसकी सीमा में अनेक विषय आते हैं। वस्तुतः डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने पूर्वोक्त छह अंगों को ही भाषा विाान की शाखाओं या विभागों के रूप में स्वीकारा हैं। वहीं डॉ0 कर्णसिंह ने केवल चार ही प्रमुख अंग या विभाग माने हैं। प्रो0 राजकुमार शर्मा ने 5 ही अंग स्वीकारे हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.5 भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रचलित सिद्धान्तों की मीमाँसा करते हुए अपना मत निर्धारित कीजिए।

उत्तर भाषा विज्ञान विज्ञान हैं, कला नहीं ! ज्ञान विज्ञान की शाखाएँ विभिन्न प्रश्न समस्या या शंकाओं का हल खोजने का प्रयत्न तो करती ही हैं फिर भी कुछ रहस्य ऐसे होते हैं जिनके वैज्ञानिक हल प्रस्तुत करना बहुत कठिन हो जाता हैं। भाष की उत्पत्ति का प्रश्न भी मनुष्य की उत्पत्ति और उसके मन में स्थित भाव और विचारों की उत्पत्ति के साथ जुड़ा हैं। जब तक मनुष्य की उत्पत्ति और उसके मन के भाव–विचारों की उत्पत्ति के रहस्य को अनावृत्त नहीं किया जाता तब तक भाषोत्पत्ति के संबंध में कुछ बोलना कठिन हैं इटली के सुप्रसिद्ध विद्वान मेरियो पाई (Mario Pai) ने लिखा हैं–

" If there is one thing on which all Langugastilics are fully' agreed. it is that the problem of the origin of human speech is still un solved."

The story of hanguage (1952) page 18

भाषा की उत्पत्ति विष्यक इस मत की अरूचि का विचार इतने प्रबल रूप से सामने आया कि सन् 1866 में पेरिस में स्थापित होने वाली भाषा विज्ञान परिषद (ला सोसियेते द लैंगिस्तीक) के संस्थापकों ने अपने नियमों से भाषा की उत्पत्ति के प्रश्न पर विचार करने पर ही प्रतिबंध लगा दिया था। लेकिन सन् 1866 के बाद भी इस प्रश्न पर विचार होता रहा हैं जो आवश्यक व स्वाभाविक भी हैं।

कई वि,ानों ने इस प्रश्न का उत्तर खोजने ने का प्रयत्न किया हैं और उनके सिद्धान्तों का महत्व केवल ऐतिहासिक हैं। अतीत में किए गए चिन्तन के अलावा इन सिद्धान्तों का कोई मौलिक योगदान नहीं हैं। फिर भी भाषा की उत्पत्ति के ऐतिहासिक चिन्तनपरक सिद्धान्तों का विचार नीचे क्रमशः करेंगे।

1. <u>दैवी उत्पत्ति का सिद्धान्त</u> :– यह भाषा की उत्पत्ति का सबसे प्राचीन सिद्धान्त हैं। इस मत की मान्यता के अनुसार ईश्वर ने मनुष्य की प्राप्ति के साथ ही उसके उपयोग के लिए पूर्ण रूप में विकसित भाषा का निर्माण भी किया। विश्व के विविध धर्मग्रंथों, प्राचीन दर्शनों तथा साहित्य के अन्तर्गत विविध रूपों में इस सिद्धान्त का उल्लेख एवं समर्थन पाया जाता हैं। वेदों को ''अपौरूपेय'' कहना और संस्कृत भाषा को ''देववाणी' मानना इसी बात का द्योतक हैं। ऋग्वेद में मंत्र हैं–

देवी वाचमजनयन्त देवां
तां. विश्वरूपाः पशवो वदन्ति
(ऋग्वेद, 8–100–11)

अर्थात– वाग्देवी वाणी को देवों ने उत्पन्न किया और सभी प्राणी उसी को बोलते हैं।

पाणिनी चौदह सूत्रों की उत्पत्ति शिव के डमरू से मानते हैं। बौद्ध धर्मावल्मबी मागधी और जैन लोग अर्द्ध मागधी को समर्थन देते हैं। ईसाई लोग प्राचीन धर्म नियम की मूलभाषा इब्रानी या हिब्रू को आदि भाषा मानते हैं। मुसलमान कुरान को ''खुदा' का कलाम कहते हैं।

बौद्धों के अनुसार पालिया मागधी विश्व की मूल भाषा हैं, शेष भाषाएँ तो उसी से उत्पन्न हुई हैं–

सा मागधी मूलभाषा नरा यायादिकाधिका।
ब्रह्मानोचस्सु तालया संबुद्धा चापि भासरे ।।

अर्थात् कल्प के आरंभ में मनुष्य के मुख से यही भाष निकली।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

निरूक्त के प्रणेता यास्क की दृष्टि से ''प्रवरों ने अवरो को यह ज्ञान दिया।'' पंतलति के मत से ''ईश्वर से पूर्व कोई गुरू नहीं था। इंजील को धर्मग्रंथ मानने वालों के लिए तो यहूदी भाषा ही आदम की आदिम भाषा थी जो ईश्वर प्रदत्त हैं। ''कच्चायन'' पाली व्याकरण के रचयिता का कथन–

''मागधी भाषा सारी भाषाओं का मूल हैं''

मनु ने अपनी मनु स्मृति में लिखा हैं–

सर्वेषा तु स नामानि कर्माणि च पृथक पृथक।
वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे।।

अर्थात ब्रह्मा ने भिन्न–भिन्न कर्मो और व्यवस्थाओं के साथ साथ सारे नामों का निर्माण भी सृष्टि के आदि में वेद शब्दों से ही किया।

पाणिनी के अनुसार–

नृत्यावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपंचवारम्।
उद्धर्तृकामः सनकादि सिद्धानते द्विमर्श शिव सू.जालम्।।

अर्थात संस्कृत की सम्पूर्ण वर्णमाला अइउण् ऋलृक आदि चौदह माहैश्वर सूत्रों से उत्पन्न हुई। कैथोलिक ईसाई प्राचीन विधान (Old Testament) को प्रमुख आधार मानकर संसार की सभी भाषाओं को जननी हिब्रू भाषा को मानते हैं।

समीक्षा :– यह सिद्धान्त सर्वथा भ्रम मूलक व निराधार हैं। इसके प्रमाण मिश्र के राजा सेमेटिक्स तथा अकबर द्वारा करवाए हुए प्रयोग हैं जिनसे यह सिद्ध हो गया कि भाषा कोई बालक से नहीं वरन् संसर्ग से सीखता हैं। एक बात अवश्य हैं और वह यह हैं कि भाषा केवल मनुष्य के बीच ईश्वर ने भाषा उत्पत्ति की शक्ति मनुष्य के अतिरिक्त अन्य किसी जीव को नहीं दी हैं। भाषा कोई पैतृक सम्पत्ति नहीं हैं उसका अर्जन किया जाता हैं भाष यदि इश्वर निर्मित होती तो संसार के लिए मूलतः एक ही भाषा होती किन्तु भाषाओं के अध्ययन विश्लेषण से पता चला हैं कि संसार में हजारों भाषाएं बालो जाती हैं। और उनका मूल कोई एक ही भाषा नहीं हैं।

2. संकेतवाद :– इस सिद्धानत का उद्देश्य हैं–

''संकेत प्रभवा हि वक्''

अर्थात–संकेत से ही बोलियाँ निकली। कुछ लोगों का कहना हैं कि पहले मनुष्य सब कामों के लिए कुछ हाथ पैर अंगुली चलाकर मन की बात बताता होगा जैसा पानी पीने के लिए ओठों पर हठेली लगाकर जैसा की लोग अब भी करते हैं। उन्हीं संकेतों के सहारे कुछ ध्वनियों की उत्पत्ति हो गई जैसे–ओ, ए आदि। इन्हीं से विकसित होकर भाषा का निर्माण हो गया। डॉ0 श्याम सुन्दर दास ने अपने ''भाषा विज्ञान'' नामक ग्रन्थ में कहा हैं कि–

''कुछ साहसी विद्वानों ने एक दूसरा मत प्रतिपादित किया हैं कि भाषा मनुष्य की सांकेतिक संस्था हैं। आदिकाल से जब मनुष्यों हस्तादि के साधारण संकेतो से काम चलता न देखा, तो उन्होंने कुछ ध्वनि संकेतों को जन्म दिया। वही ध्वनि–संकेत विकसित होते–होते आज इस रूप में दिखाई दे रहें हैं।''

समीक्षा :– परन्तु यह तथ्य सही नहीं हो सकता क्योंकि संकेत तो अधूरा सहारा हैं। केवल संकेत की बात तब तक नहीं समझी जा सकती जब तक वाक्य का सहारा न लिया गया हैं। यदि संकेतों से ही मन की बात कहना संभव

Downloaded notes from www.hindinotes.com

होता तो फिर भाषा का निर्माण ही क्यों होता? इसलिए यह भ्रममूलक तथ्य हैं कि बिना वाक्य के साहरे किसी की अभिव्यक्ति को समझा जा सकता हैं।

3. <u>धातु संग्रहवाद</u> :— इस सिद्धान्त के अनुसार शब्द और अर्थ में एक प्रकार की रहस्यात्मक प्राकृतिक संबंध होता हैं। इस ओर संकेत प्लेटो ने किया था किन्तु इसे व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने का श्रेय जर्मन प्रोफेसर हैंज (Heyes) को हैं। बाद में इनके शिष्य डॉ0 स्टाइदन्थाल ने मुद्रित रूप में विद्वानों के समक्ष रखा हैं।

इन सिद्धान्तों के द्वारा प्रतिपादित विषय हैं—धातु <u>संग्रहाद्वाक्</u> अर्थात् धातुओं से बोली बनी। इसी को डिगं—डांगवाद (Ding-Dong Theory) या रणन सिद्धान्त भी कहा गया हैं।

जर्मन विद्वान प्रोफेसर हैंज के मत के आधार पर मैक्समूलर ने यह सिद्ध करना चाहा कि सृष्टि के आरम्भ से मनुष्य के अन्दर कोई ऐसी शक्ति थी कि उसने 400—500 धातुओं को जन्म दिया। शनैः शनैः वह शक्ति समाप्त हो गई और इसी प्रकार 500 धातुओं के सहारे भाषा का सजृन हो गया। शाकटायन के मतानुसार—

''सभी शब्दों की निर्मित मूलत धातु से हुई हैः

पश्चिम में इस मत के प्राचीनतम संकेत प्लेटो व उनके अनन्तर मैक्समूलर ँ पाए जाते हैं। उदहारणार्थ—

''हम एक लकड़ी को हथौडे से लोहा, पीतल, सोना, शीश, पत्थर, ईंट तथा लकड़ी आदि पर चोट करें तो हम अलग—अलग ध्वनियों को पाते हैं। विविध वस्तुओं के सम्पर्क में मनुष्य आता गया तो अनायास ही उसके मुंह से उन उन विशिष्ट वस्तुओं के बोधक शब्द निकल पड़े।''

<u>समीक्षा</u> :— भाषा की उत्पत्ति के संबंध में प्रस्थापित इस सिद्धान्त को स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसमें काल्पनिक तत्वों की भरमार हैं और वैज्ञानिकता का अभाव पाया गया हैं—

1. धातु भाषा का सहज अंग नहीं हैं।
2. भाषा का प्रारंभ वाक्यों से हुआ था, वर्णात्मक शब्दों से नहीं।
3. यह सिद्धानत विकासवाद के विरूद्ध पड़ता हैं। क्योंकि इसके अनुसार भाषा आदिकाल से ही निर्मित थी और धातुओं से शब्द निर्माण बाद में जबकि आदिकाल में भाषा में प्रयुक्त मात्र कुछ ही धातुएँ थीं और अब भाषा नित्यप्रति उन्नत व विकसित हो रही हैं।

4. <u>निर्णय सिद्धान्त</u> :— यह सिद्धान्त प्रतीकवाद या संकेतवाद के नाम से भी पहचाना जाता हैं। इसका प्रतिपादन फ्रांसीसी विद्वान रूसो ने किया। आगे चलकर पोलिनेशियन भाषा के विद्वान डॉ0 राये, रिचर्ड,आईसलैंडिक भाषा के विद्वान अलेक्जेडर जोहानसन आदि ने अधिक से अधिक तर्क सम्मत रूप में इसी सिद्धान्त के मिलते—जुलते इंगित सिद्धान्त का (Gestural Theory) प्रतिपादन किया।

संकेत सिद्धान्त के अनुसार अपनी प्रारंभिक अवस्था में मनुष्य अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति के लिए आंगिक संकेतों का उपयोग करता हैं। आदि मानव ने भी इन संकेतों को कभी अनुभव किया होगा। इस कठिनाई और अव्यवस्था से युक्त होने के लिए उसने कहीं एकत्र आकर भावों विचारों व वस्तुओं के नमों के संबंध में समझौता कर कुछ निर्णय लिए होंगे। इस प्रकार एक सांकेतिक संस्था के रूप में भाषा का जन्म हुआ होगा।

<u>समीक्षा</u> :— इस सिद्धान्त के आधार पर विचार करने पर भी भाषा की उत्पत्ति का प्रश्न हल नहीं हो सकता। इन तर्कों में सर्वप्रमुख तर्क हैं—

1. प्रारंभ में अगर कोई भाषा ही नहीं थी तो लोग एक स्थान पर कैसे इकट्ठा हुए ?

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

2. इस सिद्धान्त के अनुसार यह बात सामने आती हैं कि मनुष्य के पास पहले भाष नहीं थी। भाषा के अभाव में मनुष्य भाषा को भाषा की आवश्यकता का अनुभव कैसे हुआ।
3. भाषा के अभाव में यदि महत्वपूर्ण विषय पर विचार–विमर्श कर सकना संभव था तो फिर अलग से भाष की अभिव्यक्ति के नए माध्यम की आवश्यकता ही क्यों पड़ी थी ?

अतः इसके सहारे भी हमारी समस्याओं का हल नहीं मिलता।

5. <u>श्रमपरिहार–सिद्धान्त</u> :– मनुष्य के कार्य के प्रमुख रूप से दो हिस्से हो सकते हैं। (1) बौद्धिक और (2) शारीरिक। इसका नाम ये–हैं–हो वाद भी कहा जाता हैं। इसके अनुसार–

''वासोच्छावास वेगाद्वविवृति''

अर्थात श्वास तथा उच्छ्वास के वेग के कारण बोलियां बनी। इस सिद्धान्त की जन्मदाता न्वार (Noire) हैं। इसीलिए इसे न्यावर थोरी भी कहा जाता हैं। इस सिद्धान्त के समर्थक यह मानते हैं कि कठिन परिश्रम करते समय मनुष्य जब साँस लेता हैं अथवा श्रमपरिहार के लिए कोई श्वास वेग के साथ ध्वनि उत्पन्न करता हैं तो यह एक शब्द को जन्म देता हैं। इसका प्रमाण धोबी की छियो–मल्लाह की यो हैं हो श्रमिकों की रहैं, हो अथवा हूँ–हूँ ध्वनियाँ हैं।

<u>समीक्षा</u> :– यह सिद्धान्त भी स्वीकार्य नहीं हो सकता क्योंकि भाष में इस प्रकार के शब्दों का कोई महत्व नहीं होता।

1. श्रमपरिहार के समय उद्भुत चार छहः ध्वनियों से भाषा का निर्माण कैसे हो सकता हैं ? किसी भी भाषा में इस प्रकार की ध्वनियों की संख्या इससे अधिक नहीं हो सकती।
2. श्रमपरिहार के समय में उत्पन्न ये ध्वनियाँ बिलकुल ही अर्थहीन हैं।

इस प्रकार यह सिद्धान्त नितान्त भ्रमपूर्ण व हास्यास्पद हैं। क्योंकि इन शब्दों को साहित्य अथवा भाषा में कोई महत्व नहीं हैं।

6. <u>अनुकरण मूलकतावाद</u> :– इस सिद्धान्त का अर्थ हैं–

'' अनुकरण मत्रकारणम्''

अर्थात् अनुकरण पर बोलियाँ बनी। इसका मजाक उड़ाने के लिए मैक्समूलर ने कुत्ते की आवाज के लिए प्रयुक्त शब्द के आधार पर इसे बो वो सिद्धान्त (Box-Wow Theory) के नाम से पुकारा।

इस सिद्धान्त के अनुसार वस्तुओं से उत्पन्न होने वाली नैसर्गिक ध्वनियों पर उनके नाम दिए गए हैं। जिस वस्तु से जिस प्रकार की ध्वनि सुनाई दी उसी ध्वनि के अनुकरण पर उसका नाम रखा गशं किसी प्राणी या पदार्थ से सुनी गई ध्वनियों का वर्गीकरण– (1) ध्वन्यात्मक, (2) अनुकरणात्मक (3) दृश्यात्मक का रहा होगा–

1. <u>ध्वन्यात्मक</u> :– शब्द निर्माण के अर्न्तगत–क–का रहने वाला काक, कूक गाने वाली कोकिल, दर दर ध्वनि करने वाला दर्दूर, झर–झरने वाला निर्झर झरना या, कुकडूॅकू धविन करने वाला कुकुट, फट–फट आवाज करने वाला फटफटिया।
2. <u>अनुकरणात्मक शब्दो के अर्न्तगत</u> :– गर्जन, तर्जन, झनझन, धमाधम, गड़गड़ाहट, धरधराहट, सनसनाहट, घिघियाना, मिमियाना, किकियाना, दहाड़ना, गुर्राना, हिनहिनाना, खटखटाना, बड़बड़ाना, चिंघाड़ना, तड़तड़ाना, फड़फडाना आदि।
3. <u>दृश्यात्मक शब्दों के अर्न्तगत</u> :– चकचक, चकमक, झकझक, झलमल आदि।

कवि सुमित्रानंदन पंतजी के काव्य में प्राप्त अनुकरण वाची शब्द अधिकता से पाए जाते हैं जिनमें प्रातिनिधिक रूप से कुछ शब्द इस प्रकार हैं– सिहर सिहर, लहर–लहर, लाले–लोल, पल–पल, डोल–डोल, कल–कल, छल–छल आदि।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

<u>समीक्षा</u> :– अनुकरण मूलक शब्द प्रमुखतः भाषा के अलंकरण पक्ष से संबंधित हैं। अतः वे भाषा का आधार हो सकते हैं। कविता की भाष में इन शब्दों की अधिकता पाई जाती हैं। यह सिद्धान्त किसी भी भाषा की समस्त शब्दावली को उद्घाटित नहीं करता केवल भाषा कि सीमित अंश के विकास की ही व्याख्या करता हैं।

इसलिए केवल इतना ही माना जा सकता हैं कि भाषा में कुछ शब्द अवश्य अनुकरण के आधार पर ही बने हैं परंतु सम्पूर्ण भाषा और अनुकरण में कोई संबंध नहीं हैं।

7. <u>अनुकरण सिद्धान्त</u> :– एक दृष्टि से यह अनुकरण सिद्धानत का ही अंश हैं। अनुकरण सिद्धान्त में अनुकरण के माध्यम या स्त्रोत पशु–पक्षी आदि सजीव हैं। जबकि इस मत के अनुसार जड पदार्थो (धातु, लकड़ी पानी आदि) के परस्पर संसर्ग या आघात पर जो ध्वनि आती हैं उसे आधार बनाकर भाषा की उत्पत्ति हुई हैं।

वस्तुतः यह दोनों सिद्धान्त एक ही हैं।

8. <u>मनोभावां भिव्यक्ति</u> :– इस सिद्धान्त का अर्थ–

''विविक्षा प्रेरितीहि वाक्''

अर्थात–मन की बात कहने की चाह से बोलियाँ निकली हैं।

इस सिद्धान्त के अनुसार भाषा की उत्पत्ति मनुष्य के मन में भावों की सहज रूप से अभिव्यक्ति करने की प्रवृत्ति से हुई हैं। इसके अनुसार प्रसन्नता शोक, घृणा, विस्मय, क्रोध, क्षोभ, भय आदि मनोभावों की नैसर्गिक अभिव्यक्ति के समय उत्पन्न ध्वनियों से भाषा का निर्माण हुआ हैं। अर्थात् मनाव मूलत विचार प्रधान न होकर भाव प्रधान था। भावा वेग की स्थिाति में मनुष्य के मुख से अनायास ही कुछ ध्वनियां विकल पड़ती जैसे– आह, वाह, हाय धिक, छिः जैसी परिस्थति वैसी ध्वनि इन संवेदक ध्वनियों से ही आगे चलकर भाषा का विकास हुआ।

<u>समीक्षा</u> :– इस सिद्धान्त को मानने में दो कठिनाइयां हैं– पहली इन शब्दों की संख्या नगण्य हैं और ये किसी भाषा के अंग नहीं बन पाए। दूसरी कठिनाई विभिनन भाषाओं में ये शब्द समरूप में नहीं मिलते। यदि ये स्वाभाविक रूप से निकले होते तो प्रत्येक मनुष्य के मुँह से इनका उच्चारण एक–सा ही होता। परन्तु ऐसा नहीं हैं। अतः यह सिद्धान्त भी अमान्य हैं।

मनुष्य जब बोलने मे असमर्थ होता हैं तभी प्रायः इन शब्दों का उपयोग करता हैं– डॉ0 पीताम्बर सरोदे ने अपनी पुस्तक सरल भाषा विज्ञान में गालिब के शब्दों को लिया हैं–

हैं कुछ ऐसी ही बात जो चुप हूँ
वरना क्या बात करनी नहीं आती ?

गालिब

इसलिए भावावेग के लिए प्रयुक्त वे शब्द भाषा का स्वाभाविक अंग नहीं हो सकते।

9. <u>विमर्शवाद</u> :– इस सिद्धान्त का अर्थ हैं–

''परस्पर विमर्शोद्वाणी''

अर्थात् लोगों ने मिलजुल कर बोली बना ली। मनुष्यों ने अपना काम धाम बढ़ता देखकर समस्त नवीन वस्तुओं का नामकरण किया होगा। यह सिद्धान्त निर्णय सिद्धान्त का ही प्रतिरूप हैं।

10. <u>विकासवाद</u> :– इस वाद का मूल हैं–

''क्रमशोविकास ''

Downloaded notes from www.hindinotes.com

अर्थात– क्रमशः विकास होने से बोलियाँ बनीं इस सिद्धान्त के अनुसार आरंभ में मनुष्य कुछ निरर्थक ध्वनियों का उच्चारण करता रहा होगा। क्रमशः उसने जिस प्रकार अन्य क्षेत्रों में उन्नति की उसी प्रकार ध्वनियों ने उच्चरण तथा उनके अर्थ में विकास होता रहा होगा।

<u>समीक्षा</u> :– यह भी हमारे मूल प्रश्न का हल नहीं हैं। क्योंकि किसी भी क्रिया या वस्तु का वहीं नाम क्यों पड़ा कोई दूसरा क्यों नहीं ध्वनि और अर्थ में क्या संबंध हैं।

11. <u>समन्वयवाद</u> :– इस वाद का अर्थ हैं–

''सर्वसत्तसमन्वया द्वागुत्पत्तिः''

अर्थात सब मतों के समन्वय से भाषा बनी हैं। यह वाद अनुकरण, अनुरणन, विमर्श, मनोभा भिव्यंजन तथा विकास का समन्वित रूप हैं। स्वीट का यह मत हैं कि उक्त समस्त वादों के समन्वय से ही भाष का जन्म संभव माना जा सकता हैं। प्रतीकात्मक शब्दों को स्वीट ने बहुत महत्व दिया हैं।

12. <u>प्रत्यक्ष–परोक्ष मार्ग</u> :– कुछ विद्वानों ने भाषा की उत्पत्त के दो मार्ग स्थिर किए हैं। प्रत्यक्ष मार्ग और परोक्ष मार्ग। प्रत्यक्ष मार्ग के अर्न्तगत उक्त सभी सिद्धान्त आ जाते हैं। इस मार्ग के अनुसार भाषा के जन्म को सीधे ही यानी मूल से पकड़ते हैं। परन्तु मार्ग के अनुसार उलटे चलते हैं।

सभी सिद्धान्तों का तुलनात्मक और सम्यक अध्ययन करने के उपरान्त हम इसी निष्कर्ष पर आ सकते हैं कि इनमें काल्पनिकता, अतिरंजिा, अतिशयोक्ति और चमत्कार प्रधानता हैं। आज का भाषा वैज्ञानिक तो इस पर सोचना भी समय का अपव्यय समझता हैं। लेकिन इस संबंध में भाषा विज्ञान को निश्चित मत देना आवश्यक हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.5 ''भाषा की प्रकृति परिवर्तनशीलता की हैं।'' इस कथन को स्पष्ट करते हुए भाषा की परिवर्तनशीलता के कारणों पर प्रकाश डालिए। या भाषा की परिवर्तनशीलता ही उसके विकास का कारण हैं। स्पष्ट कीजिए।

उत्तर भाषा के संबंध में विस्तृत एवं संकीर्ण दो दृष्टियों से, विचार किया जा सकता हैं। विस्तृत दृष्टि से भाष जीवित प्राणी के संवेदनात्मक, भावात्मक एवं ऐच्छिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति हैं। इस प्रकार की अभिव्यक्ति के लिए कायिक एवं वाचिक दोनों प्रकार की इन्द्रियों का सहयोग प्राप्त किया जात सकता हैं। कायिक संचालन द्वारा ''अंगविक्षेप भाषा'' तथा वाक द्वारा ''वाग भाषा'' आविर्भूत होती हैं। अंगविक्षेप की परिगणना की जा सकती हैं। किन्तु संकीर्ण दृष्टि से भाष यादृच्छिक वाक् प्रतीकों की वह व्यवस्थ हैं जिसके माध्यम से मानव समुदाय परस्पर व्यवहार करता हैं।'' इस परिभाषा के अनुसार भाषा मानव कंठ से उद्गीर्ण सार्थक ध्वनियों तक ही सीमित हैं और आज विश्व में कोई ऐसा मानव समुदाय नहीं हैं जिसकी अपनी भाषा नहीं हैं।

भाषा की परिवर्तनशीलता :– समाज व्यक्तियों का समूह हैं और व्यक्ति परिवर्तनशील होता हैं। मनुष्य परिवर्तनशील हैं। अतः भाषा भी परिवर्तनशील ही हैं। उसका भी विकास होता हैं मनुष्य जीवन के उद्भव एवं विकास की भांति ही भाषा का उद्भव एवं विकास होता हैं। परिवर्तनशीलता, गतिशीलता अथवा विकास एक ही वस्तु हैं इसका प्रभाव भाषा के चारों ही रूपों –(अर्थ, ध्वनि, पद व वाक्य) पर पड़ता हैं। भाषा प्राचीन रूप छोड़कर नवीन और नवीन से भी भविष्य के लिए नित्य नए रूपों में प्रकट होती रहती हैं।

यूरोप में इस विषय पर गम्भीरता से और व्यवस्थित रूप से विचार करने वाले प्रथम व्यक्ति डैनिश विद्वान जे. एच. ब्रेड़सडॉर्क हैं।

भाषा परिवर्तन : विकास या ह्रास :– आधुनिक युग में हमारा सम्पर्क पाश्चात्य देशों से हो गया हैं। इस सम्पर्क के कारण हमारी संस्कृति और सभ्यता प्रभावित हो रही हैं तो भाषा अप्रभावित कैसे रह सकती हैं। स्पष्ट बात यह हैं कि पाश्चात्य देशों के सम्पर्क में आने के कारण हम भाषा में बदलाव या परिवर्तन अनुभव कर रहें हैं। इससे यह प्रमाणित होता हैं कि भाषा विदेशी सम्पर्क के कारण ही बदल रही हैं और आगे और भी बदलेगी। जब हम यह मान लेते हैं कि व्यक्ति, उसकी सभ्यता और संस्कृति और भाषा में परिवर्तन होता हैं तो सहसा मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न होती हैं कि भाषा में होने वाले परिवर्तनों के मूल कारण कौन से हैं। जो परिर्वतन हो रहें हैं वे उसके विकास के सूचक हैं या पतन के यह सचमुच विचारणीय विषय हैं।

यह स्थिति न केवल भाषा अपितु व्यक्ति के साथ भी होती हैं। ''भाषा परिवर्तनशील हैं'' इस बात को प्रमाणित कर लेने के पश्चात् प्रश्न यह हैं कि भाषा का यह परिवर्तन उसका विकास हैं या ह्रास ? यदि विकास हैं तो भाषा की उन्नति हैं और यदि ह्रास तो इससे बरी स्थिति भाषा के लिए और क्या हो सकती हैं ? भाषा वैज्ञानिकों ने इस मार्ग से बचकर बिल्कुल नया रास्ता पकड़ लिया हैं और अपने को साफ बचा गए हैं। वह रास्ता हैं जिस पर चलकर उन्होंने इसे न तो, ह्रास कहा हैं और न ही विकास, बल्कि परिवर्तन के नाम से सम्बोधित किया हैं।

''भाषा का स्वभाव वही उसका धर्म हैं और यह धर्म परिवर्तनशीलता ही हैं। यह परिवर्तन विकास के माध्यम से गति पाता हैं। उसको हम न तो भाषा का उत्थान ही कह सकते हैं और न ही पतन।'' वास्तव में यह परिवर्तन हैं।

परिवर्तन के कारण :– भाषा–विज्ञान के क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य करने वाले विद्वानों ने भाषा विषयक परिवर्तनों में दो प्रकार के परिवर्तनों की चर्चा की हैं– एक तो आन्तरिक परिवर्तन और दूसरे बाह्य परिवर्तन। डॉ0 मंगलदेव शास्त्री ने भाषा की अविच्छन्न परम्परा से नहीं की धारा का साम्य जोड़ा हैं और कहा हैं कि–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

''नदी की धारा में अविछन्न प्रवाह होने के कारण ही स्वाभाविक गति होती हैं साथ ही उस पर भूमि तल का भी जिस पर वह बहती हैं, प्रभाव पड़ता हैं यदि वह धारा ऐसी गम्भीर हैं कि जिसका संबंध भूमि, तल के नीचे बहने वाले स्त्रोतों से भी हैं तब भी उसके प्रवाह में दोनों तरह का प्रभाव बराबर रहैंगा। भाषा के प्रवाह में उसके अभ्यंतर रूप अर्थ का वही स्थान हैं जो एक गम्भीर नदी की धारा के लिए भूमि तल के नीचे बहते स्त्रोतों का होता हैं। भाषा के विकास और परिवर्तन पर भी स्वाभाविक कारणों के अतिरिक्त आगन्तुक या अनुसंगिक कारणों का भी प्रभाव पड़ता हैं।''

डॉ0 मंगलदेव शास्त्रीजी ने भाष परिवर्तन के कारणों को निम्न लिखित विवेचित किया हैं–

1. भौगोलिक प्रभाव
2. विभिन्न जातियों की शारीरिक घटना का प्रभाव
3. जातियों के मानसिक अवस्था भेद का प्रभाव
4. प्रयत्न लाघव की प्रवृत्ति

अभ्यतंतर कारणों के अर्न्तगत भोलानाथ तिवारी भी परिवर्तन के कारण सात मानते हैं –

1. प्रयोग से घिसजाना
2. बल
3. प्रयत्न लाघव
4. मानसिक स्थिरता
5. अनुकरण की अपूर्णता
6. जानबूझकर परिवर्तन
7. जातिय मनोवृत्ति

डॉ0 कर्ण ने पांच कारणों का समावेश किया ह–

1. प्रयत्न लाघव
2. अनुकरण की अपूर्णता
3. मात्रा सुर बलाघात
4. भावावेश
5. सादृश्य या मिथ्यासादृश्य आदि।

इनका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार हैं।

1. भौगोलिक प्रभाव के कारण परिवर्तन :– भाषा परिवर्तन के कारणों में भौगोलिक कारणों का विशेष महत्व हैं। इतिहास इस बात का साक्षी हैं कि विभिन्न जातियों के इतिहास, विकास, संस्कृति, सभ्यता और स्वभाव पर भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ता हैं। ऊष्ण और शीत प्रधान देशों के व्यक्तियों के उच्चारण में भिन्नता होती हैं उसका कारण भौगोलिक परिस्थितियां होती हैं।
2. शारीरिक भेद :– यूरोपीय और भारतीय व्यक्ति के शारीरिक अंशों में पर्याप्त मात्रा में विभेद पाया जाता हैं। नासिका को आकृति किसी की लम्बी होती हैं तो किसी की चपटी और किसी की गोल। इसी भांति ओष्ठों की आकृति में भी

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

अन्तर होता हैं। लम्बे और पतले ओष्ठों से जो उच्चारण निकलता हैं ठीक वही मोटे ओष्ठों से नहीं निकलता। उसमें पर्याप्त अन्तर होता हैं। इस प्रकार भी भाषा में परिवर्तन आ जाता हैं।

3. मानसिक अन्तर :– प्रत्येक व्यक्ति का मानसिक स्तर एक–दूसरे से भिन्न होता हैं। यह माना कि यह स्तर भेद कम भी हो सकता हैं, किन्तु यह स्पष्ट हैं कि मानसिक स्तर का भेद भी भाषा में परिवर्तन ला सकता हैं। बंगाली और मद्रासी को ही लीजिए, दोनों के उच्चारण मे ंजो भिन्नता रहती हैं उसका मानसिक स्तर भेद ही हैं। बंगाली के उच्चारण में तीव्रता का पुट विद्यमान रहता है। और मद्रासी के उच्चारण मे व्यंजनों की उच्चारण विष्यक कठिनता को आसानी से देखा और समझा जा सकता हैं।

4. प्रयत्न लाघव :– मनुष्य स्वाभाविक रूप से अपने प्रयास मे संक्षिप्ति लाना चाहता हैं और उसी मार्ग को अपनाता हैं जिसके स्तर पर सरलता का अनुभव कर सके। सुप्रसिद्ध विद्वान लॉक (Lock) के मतानुसार –

''मानव परिश्रम के लिए परिश्रम करना पसंद नहीं करता।''

कम श्रम से अधिक लाभ की यह भावना भाषा में भी काम आती हैं। यही ''प्रयत्न लाघव'' कहलाता हैं। भाषा में इस प्रकार के अनेक उदाहरण पाए जाते हैं–

नरेन्द्र– नरेन जयवन्त–जयु

रामेश्वर–रमेसुर टेलिफोन–फोन

हृदय– हिय प्रिय–पिय

धर्म–धम्म कज्जल–काजल और आदित्यवार प्रयत्न लाघव का वरदान पाकर ही तो इतवार बना हैं।

अंग्रेजी शब्दों के केवल अद्याक्षर लेकर ही काम चलाया हैं, जैसे–

एन. सी. सी., यू. एन. ओ, एस, एस, आर, मिसा– Maintanace of internal security Act. cqVk& Bombay University Teachers Association

प्रयत्न लाघव के वशीभूत होकर ही संस्कृत के वैयाकरणों की एक पंक्ति बड़ी प्रसिद्ध हुई हैं–

''अर्धमात्रा लाघवेन पुत्रोत्सव मन्यते वैयाकरण ।''

5. प्रयोग से घिस जाना :– अधिक प्रयोग के कारण धीरे धीरे अन्य सभी चीजों की भांति भाषा में भी स्वाभाविक रूप से परिवर्तन होता हैं। संस्कृत की कारकीय विभक्तियां इसी प्रकार धीरे–धीरे घिसते समाप्त हो गई।

6. बल :– जिस ध्वनि अर्थ पर अधिक बल दिया जाता हैं वह अन्य ध्वनियों या अर्थो को या तो कमजोर बना देता हैं या समाप्त कर देता हैं। इस संबंध में ध्वनि और अर्थ को कारण का विस्तार से विचार किया जाएगा।

7. अनुकरण की अपूर्णता :– भाषा अर्जित सम्पति हैं और उसका अर्जन मनुष्य अनुकरण के सहारे समाज से करता हैं। अनुकरण यदि अपूर्ण हो तब तो व्यक्ति किसी शब्द को ठीक उसी प्रकार कहैंगा, जैसे वह व्यक्ति कहता हैं जिसका वह अनुकरण कर रहा हैं। इसे मुख सुख भी कहते हैं।

इस तरह अनुकरण में भाषा का परिवर्तन पनपता रहता हैं। जब तक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी भाषा का अनुकरण कर रही होती हैं, ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य भाषा के पांच क्षेत्रों में इसी छोड़ने जोड़ने के कारण परिवर्तन की प्रक्रिया तेजी से घटित होती रहती हैं।

आर. एम. पिडल (1926) तथा ए. डूरफेर (1927) में कुछ स्थानों पर इस बात का वर्षो तक सूक्ष्मता से अध्ययन किया। निष्कर्ष यह हुआ कि परिवर्तन या विकास का सबसे बड़ा कारण हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

अनुकरण की अपूर्णता के लिए भी कई कारण हैं जैसे–शारीरिक विभिन्नता, ध्यान की कमी, अशिक्षा।

8. <u>जानबूझकर परिवर्तन</u> :– भाषा में भी कभी कभी जानबूझकर भी उस भाषा के प्रबुद्ध बोलने वाले लेखक परिवर्तन कर देते हैं जैसे प्रसाद ने अलेक्जैंडर का अलक्षेन्द्र कर दिया। इसी प्रकार संस्कृत व देशज शब्दों का संस्कृत के साहित्यकारों ने संस्कृतिकरण किया। जैसे–

   तुर्की–तुर्क, ट्रेजेडी त्रासदी आदि

9. <u>जातीय मनोवृत्ति</u> :– हर जाति की अपनी मनोवृति होती हैं यही कारण हैं कि एक ही भाषा दो या अधिक जातियों में प्रचलित होकर दो या अधिक प्रकार से विकसित या परिवर्तित होती हैं।

10. <u>भावावेश</u> :– प्रेम, क्रोध, शोक आदि भावों के कारण भी शब्दों का रूप बदल जाता हैं। जैसे अधिक प्रेम दिखाने के लिए– भाई>भैया>बबूआ>बच्चा>बेटा>बच्चुआ

11. <u>सादृश्य या मिथ्या सादृश्य</u> :– पहले से विद्यमान शब्दों के अनुरूप नये शब्दों का निर्माण करना सादृश्य'' कहलाता हैं। इसी को मिथ्यासादृश्य भी कहा गया हैं। दृष्टि शब्द से दृ से सादृश्य कुछ लोग दृष्टाशब्द बनाते हैं, जबकि वस्तुतः यहां द्रष्टा होना चाहिए।

12. <u>मात्रा, सुर, बलाघात</u> :– शब्द में मात्रा, सुर तथा बलाघात के कारण भी ध्वनियों में तथा उसके परिणाम स्वरूप भाषा में परिवर्तन हो जाता हैं।

   <u>मात्रा</u> :– जिन शब्दों के मूल में दो दीर्घ मात्राएं साथ साथ होती हैं बाद में वह ह्रस्व होकर एक मात्रा मे बोली जाती हैं जैसे आकाश–अकास

   <u>सुर</u> :– किसी ध्वनि को खींचकर बोलना (शब्द की)। परन्तु वाक्य या शब्द में हम सारी ध्वनियों को या शब्द का पूरा उच्चारण नहीं करते जैसे– बिल्व शब्द में इ स्वर को तीव्र सुर में बोलने के कारण ही हिन्दी में वह बेल शब्द में ए के रूप में बदल गया।

   <u>बलााघात</u> :– बलघात से अभिप्राय हैं, शब्द में किसी ध्वनि पर अपेक्षाकृत ''बल'' देकर बोलना जैसे अभ्यन्तर में भ्य पर अधिक बल देने के कारण उसके पूर्व की अ ध्वनि नष्ट हो गयी हैं और यह शब्द हिन्दी में भीतर के रूप में बदल गया हैं।

   <u>बाह्य वर्ग</u> :– जो तव भाषा के बाहर से प्रभावित करते हैं उसे बाह्र कारण कहा जाता हैं।

1. <u>सामाजिक कारण</u> :– समाज से अलग जैसे व्यक्ति नहीं रह सकता हैं वैसे ही भाषा भी। अतः समाज में जिस ढंग का वातावरण होगा वैसा ही भाषा का स्वरूप होगा। सभ्य और शिष्ट समाज की भाषा सभ्य और परिमार्जित होगी और पिछड़े और निम्न वर्ग के समाज में जो भाष का रूप होता हैं वह उस स्तर से गिरा हुआ होता हैं। सामाजिक जीवन की क्लेष, संघर्ष और उलझनें भाषा में भी उलझनों को जन्म देती हैं। मान लीजिए यदि युद्ध का वातावरण हो तो व्यक्तियों की भाषा में जोशीले शब्दों या रोबीले शब्दों का प्रभाव या प्रचलन बढ़ जाता हैं ? और यदि <u>मूलक शब्दों</u> का प्रयोग अधिक होने मधुर तथा उपदेश सामाजिक वातावरण का प्रभाव भाषा पर पड़ता हैं और उस प्रभाव के ही परिणाम स्वरूप भाषा में परिवर्तन आ जाता हैं।

2. <u>सांस्कृतिक प्रभाव</u> :– मानव की सांस्कृतिक उन्नति का प्रभाव भाषा पर भी पड़ता हैं। इतिहास में जब–जब सांस्कृतिक परिवर्तन हुए हैं तब तब समाज के अन्दर उथल– पुथल हुई हैं और भाषा में परिवर्तन हुए हैं। जैन धर्म और बौद्ध धर्म के समय में जैनियों ने अपनी भाषा को ही साहित्यिक भाषा बनाने का प्रयत्न किया था, किन्तु उसे सफलता

Downloaded notes from www.hindinotes.com

किमी हो या न मिली हो, यह दूसरी बात हैं। आर्य समाज के कारण आधुनिक समय में अनेक परिवर्तन हुए हैं और उनसे हिन्दी का स्वरूप ही बदल गया। भारत की संस्कृति पर समय–समय में अनेक संस्कृतियां ने अपना प्रभुत्व जमाया हैं। मुस्लिम संस्कृति के प्रभाववंश हिन्दी में कुछ ऐसे शब्द आ मिले जिन्हैं हम उर्दू फारसी के शब्दों के नाम से जानते हैं। हिन्दी के क्रिया पदों तक में मुस्लिम भाषा का प्रभाव स्पष्ट ही देखा जा सकता हैं। इसी प्रभाव के परिणाम स्वरूप ''क'', ''ज'' ध्वनियों का प्रयोग बढ़ा हैं।

अंग्रेजी और पुर्तगाली भाषाओं के प्रभाव भी स्पष्ट ही हिन्दी पर देखे जा सकते हैं। अंग्रेजी के मोटर, रेल और पोस्ट ऑफिस उर्दू के वजीर, सिफारिश, बैचेनी, कागज़ किताब आदि तथा पुर्तगालियों के कमरा, अलमारी, चूल्हा, तवा और रोटी आदि शब्द हिन्दी के अपने हो गए हैं और इनके इस अपनेपन ने भाषा को परिवर्तन की राह पर लाकर खड़ा कर दिया हैं।

3. <u>सादृश्य के कारण</u> :– कहते हैं खरबूजे को देखकर खरबूजा रंग बदलता हैं। इसी प्रकार भाषा में भी शब्द या वाक्य दूसरे शब्द या वाक्य की सदृशता पर उसी प्रकार के बन जाते हैं।

किसी भाव या अर्थ की अभिव्यक्ति के कारण सादृश्य के सहारे से नए शब्दों का सृजन हा जाया करता हैं और इस नए सृजन में भाषा परिवर्तन की राह पकड़ती हैं। उदाहरण के लिए– ''विमलेश की लड़की कमलेश'' में अंग्रेजी का सादृश्य मिलता तो वह वाक्य बना– ''कमलेश सुपुत्री विमलेश। हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के स्थान पर अध्यक्ष हिन्दी विभाग का प्रयोग अंग्रेजी में (Head of the Department) के सादृश्य निर्मित हैं।

इसी प्रकार– आर्ट कॉलेज–आठ कॉलेज यूनिवर्सिटी–अनवरसिटी हास्पिटल–अस्पताल, टाइम–टेम आदि।

4. <u>भौतिक विकास</u> :– भौतिक दृष्टि से हुए परिवर्तन ने भाषा को बदल डाला हैं। ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में उसकी प्रगति के साथ भाषा की ध्वनियां शब्दकोष तथा वाक्य रचना मे पर्याप्त परिवर्तन हो रहें हैं विभिनन प्रकार की जो शब्दावली दिखाई देती हैं वह इस बात का प्रमाण हैं। विज्ञान के वरदान स्वरूप जहाँ अभी भी आवागमन के साधन उपलब्ध नहीं हैं वहाँ के निवासियों को नए शब्दों की जानकारी नहीं हैं। वास्तव में हम यही कह सकते हैं कि भौतिक विकास से भाषा में जो परिर्वतन आता हैं। वह न केवल उल्लेखनीय हैं अपितु अविस्मरणीय भी हैं।

5. <u>वैयक्तिक प्रभाव</u> :– महान् व्यक्तियों का प्रभाव भी भाषा पर पड़ता हैं। स्वामी दयानंद सरस्वती महात्मा गांधी आदि जैसे महान् व्यक्तियों के भावों व विचारों का प्रभाव भी भाषा में पड़ा। साहित्यिक क्षेत्र में तुलसी, कबीर आदि का व्यक्त्वि भी ऐसा ही था। तुलसी के प्रभाव से अवधी महात्माजी के प्रभाव से उर्दू, संस्कृत, अरबी, फारसी आदि शब्दों का भी प्रभाव पड़ा।

6. <u>वैज्ञानिक प्रभाव</u> :– आधुनिक तथा तकनीकी के इस युग में भाषा भी वैज्ञानिक तथा शब्दावली से समृद्ध हो गयी हैं। जिसको हम भाषा पर वैज्ञानिक प्रभाव कह सकते हैं। ड़ ञ, ण् न् म् इन पाँचों अनुनासिका के स्थान पर केवल अनुस्वार () का प्रचलन होने लगा जो इसी का उदाहरण हैं।

7. <u>साहित्यिक प्रभाव</u> :– समय समय पर साहित्यिक परिवर्तन होता रहता हैं। कभी वह वीरों का स्तुति गाान करता हैं तो कभी ईश्वर की भक्ति में अपना मन लगा देता हैं। कभी वह नारी की सौन्दर्य भावना को तो कभी श्रृंगार में रम जाता हैं। हर परिवर्तन एक नए प्रयोग की ओर प्रमुख होता रहता हैं। यह साहित्यिक प्रभाव जब अभिजात्य वर्ग की भावनओं में प्राधान्य रहता हैं तो भाषा भी सुसंस्कृत, परिमार्जित तथा शुद्व रहती हैं। कबीर की ''सधुक्कड़ी'' भाषा का प्रयोग इसका एक श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

निष्कर्ष :– इस प्रकार हम देखते हैं कि भाषा की परिवर्तनशीलता निरन्तर बरकरार रहते हुए भी ग्रहण योग्य बनी रहती हैं। जिस प्रकार भोजन मे अलग व्यंजनों का हमारे शरीर के बाहरी व भौतिक अंगों पर अलग अलग प्रभाव पड़ता हैं उसी प्रकार भाषा में परिवर्तनशीलता हमें भाषा को ग्राह्य व अधिक उन्नतशील भाषा का परिचय कराती हैं। इन उपर्युक्त उदाहरणों के अतिरिक्त ऐतिहासिक प्रभाव, जातीय प्रभाव, भौगोलिक प्रभाव भी इसमें अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रशन5. भाषा के विविध रूपों का परिचय दीजिए।

उत्तर भूमिका :— भाषा वह माध्यम हैं या साधन हैं जिसके द्वारा हम जो सोचते हैं तथा अपने विचारों को उससे व्यक्त करते हैं। यह एक ऐसी इकाई हैं जिसका संबंध व्यक्ति से लेकर समष्टि तक हैं। संसार का साधारण व्यक्ति जो एक कोने में पड़ा हैं वह किसी भाषा का प्रयोग करता हैं और एक विश्व विख्यात व्यक्ति भी किसी विशेष भाषा का प्रयोग करता हैं। काल भेद स्थान—भेद, स्तर भेद, देश—विदेश भेद आदि के आधार पर भाषाओं की अनेकरूपता दृष्टिगोचर होती हैं।

<u>भाषा विभाजन के आधार</u>

विभिन्न आधारों पर भाषा को निम्नलिखित प्रकार से वगीकृत किया जा सकता हैं, जो निम्न लिखित छह प्रकार के हैं—

भाषा विभाजन का आधार

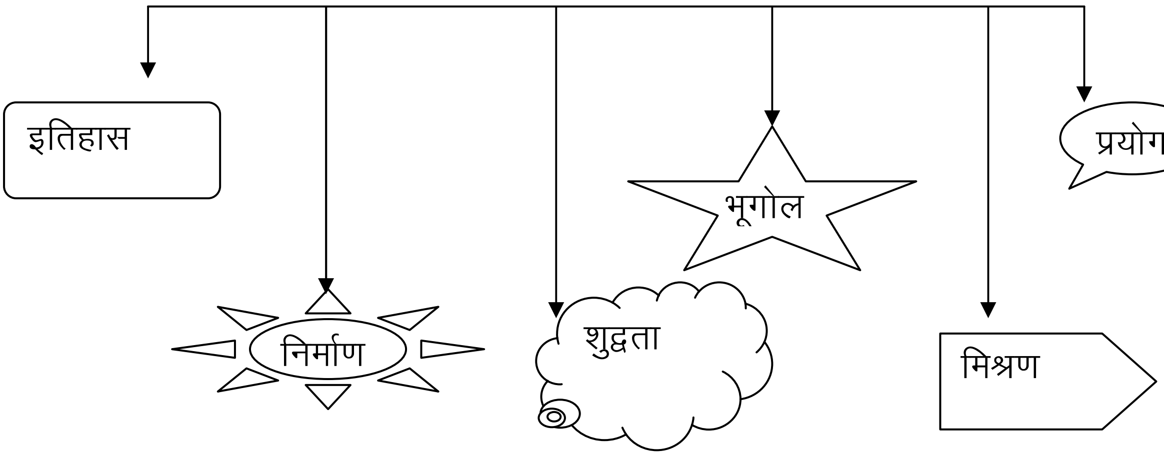

1. <u>इतिहास</u> :— इसके आधार पर मूलभाषा प्राचीन भाषा मध्य कालीन भाषा, आधुनिक भाषा आदि का उल्लेख किया जाता हैं।
2. <u>भूगोल</u> :— भाषा का सबसे छोटा रूप व्यक्ति बोली का हैं। उसके बाद स्थानीय भाषा या बोली, उपबोली बोली, उपभाषा या बोली वर्ग मिलकर भाषा का निर्माण करती हैं।
3. <u>प्रयोग</u> :— इसके आधार पर बोलचाल की भाषा, साहित्यिक भाषा, जातिय भाषा, व्यवसायिक भाषा, दफ्तरी भाषा, राजभाषा राष्ट्रभाषा, गुप्त भाषा, जीवित भाषा, मृतभाषा आदि रूप होते हैं। सहायक संपूरक, परिपूरक, सम्पर्क तथा समतुल्य भाषा नाम के भाषा रूप भी प्रयोग पर आधारित हैं।
4. <u>निर्माण</u> :— इसके आधार पर सहज भाषा, कृत्रिम भाषा।
5. <u>मानकता शुद्धता</u> :— आधार पर मानक या परिनिष्ठित भाषा, अमानक भाषा, अपभाषा आदि।
6. <u>मिश्रण</u> :— पिजिन तथा क्रियोल दो भेद होते हैं।

इन प्रकारों के अलावा अनेक ऐसे गौण आधार हैं जिनसे भाषा के विविध रूपों का विवेचन मिलता हैं जैसे— संस्कृति, सुबोधता ग्राह्यता आदि के आधार पर भाषा अनेक भेद व उपभेद किये जा सकते हैं। परन्तु इस आधार पर किये गये भेदों का अध्ययन प्रचलित नहीं हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

<u>भाषा के विविध रूप</u>

मनुष्य समाज में रहता हैं यह स्वाभाविक वह नित्य अनेक व्यक्तियों के सम्पर्क में आता हैं। तथा विज्ञान विभिन्न प्रकार की भाषा से परिचित होता हैं। सभी मनुष्य की भाषा एक सी नहीं होती। इस प्रकार भाषा के अनेक रूप हमारे सामने आते हैं जिनका विवेचन इस प्रकार हैं–

भाषा के विविध रूप

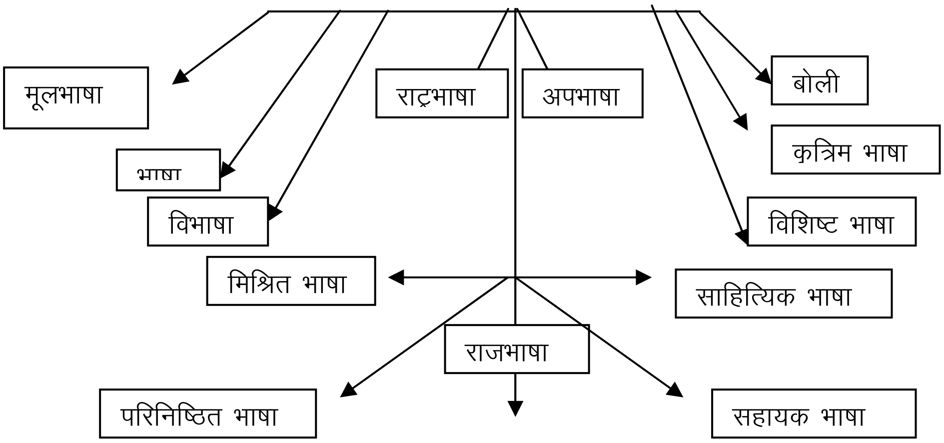

1. **<u>मूल भाषा</u>** :– भाषा की उत्पत्ति अत्यन्त प्राचीन काल में उन स्थानों में हुई होगी जहाँ बहुत से लोग एक साथ रहते रहें हैं ऐसे स्थानों में किसी एक स्थान की भाषा जो आरंभ में उत्पन्न हुई होगी, तथा आगे चलकर जिससे ऐतिहासिक और भौगोलिक आदि कारणों से अनेक भाषाएँ, बोलियाँ तथा उपबोलियां आदि बनी होंगी, मूल भाषा कही जायेगी। संसार में उतने ही भाषा–परिवार माने जायेंगे, जितनी कि मूल भाषाएँ मानी जायेंगी।
2. **<u>अपभाषा</u>** :– जैसा की नाम से ही स्पष्ट हैं कि यह भाष का वह रूप हैं जिसे परिनिष्ठित एवं शिष्ट भाषा की तुलना में विकृत या अपभ्रष्ट समझा जाता हैं। भाषा के आदर्श रूप की तुलना में इसमें अधोलिखित विशेषताएं मिलती हैं–
   1. अपरिनिष्ठित रूपों का प्रयोग, जैसे करा, (किया), मेरे को, (मुझे या मुझको), गवा (गया) आदि।
   2. अपरिनिष्ठित वाक्य–रचना, जैसे हिन्दी में ''मैनें जाना'' हैं या मुझ पर रूपये नहीं हैं। आदि
   3. अश्लीलता जैसे परिनिष्ठित हिन्दी में अश्लील समझे जाने वाले शब्दों का प्रयोग।
   4. परिनिष्ठित भाषा द्वारा अगृहित मुहावरों आदि का प्रयोग।
3. **<u>विशिष्ट भाषा</u>** :– इस प्रकार की भाषा का मूल रूप तो आदर्श रहता हैं लेकिन अर्थ प्रयोग और मुहावरों आदि में वर्ग विशेष की छाप रहती हैं।
4. **<u>व्यक्ति बोली</u>** :– व्यक्ति विशेष की बोली भाषाका एक लघुतम एवं संकीर्णतम् रूप हैं। जिस प्रकार संसार की प्रत्येक वस्तु क्षण–प्रतिक्षण बदलती रहती हैं। वैसे ही व्यक्ति की बोली में कुछ परिवर्तन होते ही रहते हैं। अतः व्यक्ति बोली का सही अभिप्राय समय विशेष में व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त भाषा ही हैं।
5. **<u>मिश्रित भाषा</u>** :– जिसमें एक से अधिक भाषाओं का मिश्रण हैं। बन्दरगा हो आदि पर ऐसी भाष प्रायः सुनाई पड़ती हैं। चीन के कुछ नगरों में प्रयुक्त ''पिजिन इंगलिश'' इसका अच्छा उदाहरण हैं। भूमध्य सागर के बन्दरगाहों में प्रयुक्त सबीर भाषा या मारीशस की क्रियोल भी इसी श्रेणी की हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

6. <u>राष्ट्र भाषा</u> :– इसका शाब्दिक अर्थ हैं राष्ट्र की भाषा। जो भाष समूचें राष्ट्र में अधिकाधिक व्यक्तियों के लिए विचार विनिमय एवं पारस्परिक व्यावहारिकता का माध्यम हैं। उसे राष्ट्र भाषा कहते हैं। शासन की दृष्टि से एक राष्ट्र में कई राज्य या विभाग हो सकते हैं, उन विभिन्न विभागों की अलग अलग भाषाएँ होती हैं किन्तु जिस भाषा के माध्यम से एक विभाग या भाषा के लोग दूसरे विभाग या भाष के लोगों से व्यवहार करते हैं– वह राष्ट्र भाषा कहलाती हैं।

प्रो0 राजकुमार शर्मा के शब्दों में :– ''जब कोई प्रान्तीय भाषा राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक कारणोंवश इतनी उन्नतएवं व्यवह्रत हो जाती हैं कि अपने प्रान्त के अतिरिक्त अन्य प्रान्तों में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण देश में परिगृहित हो जाती हैं तब उसे राष्ट्रभाषा कहते हैं।''

7. <u>राजभाषा (Official Language</u>):– किसी देश या प्रदेश के राजकाज या शासन में जिस भाषा का उपयोग होता हैं उसे राजभाषा कहा जाता हैं। किसी देश की शासन सेवाओं को दो भागों में बाँटा जा सकता हैं– (1) केन्द्रीय सेवाएँ और (2) प्रान्तीय सेवाएँ। प्रान्तीय सेवाओं के लिए प्रान्तीय भाषा का प्रयोग होता हैं किन्तु केन्द्रीय सेवाओं के लिए प्रयुक्त भाषा ''राजभाषा'' कहलाती हैं। उदाहरणार्थ मराठी महाराष्ट्र की, गुजराती–गुजरात, बांगला–बंगाल की राजभाषा हैं।

8. <u>उपभाषा (Sub Language</u>) :– किसी एक सीमित क्षेत्र में बोली जाने वाली अधिकतम मिलती जुलती बोलियों के उसी विशिष्ट क्षेत्र की परिनिष्ठित भाषा से भिन्न समूह को उपभाषा कहते हैं। डॉ0 सरोदे पाटिल के शब्दों में– ''कभी कभी भाषाओं के अर्न्तगत कुछ ऐसे बडे उपरूप मिलते हैं जिनमें हर एक के अर्न्तगत कई बोलियाँ होती हैं– उपभाषा कहलाती हैं।''

उपभाषा कोई भाषा या बोली नहीं हैं अपितु यह कई बोलियों के समूह का अमूर्त रूप हैं। हिन्दी भाषा क्षेत्र में कुल पांच उपभाषाएँ हैं–

हिन्दी भाषाएँ क्षेत्र की उपभाषाएँ

पश्चिमी हिन्दी उपभाषा के अर्न्तगत>ब्रज, खड़ी बोली, बाँगरू, बुंदेली और कन्नौजी बोलियां आती हैं।

राजस्थानी हिन्दी> मारवाड़ी > जयपुरी>मेवाती>मालवी।

पहाड़ी हिन्दी > गढ़वाली > कुमाऊँनी।

पूर्वी हिन्दी>अवधी>बघेली>छत्तीसगढ़ी।

बिहारी हिन्दी>भोजपुरी>मगही>मैथिली।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

इस प्रकार एक भाष के अर्न्तगत अनेक उपभाषाएँ हो सकती हैं।

9. **बोली** :– बोली और विभाषा को लेकर पर्याप्त मतभेद हैं। बोली भाषा नही वरन् भाषा का वह रूप हैं जो सीमित क्षेत्र में बोला जाता हैं या घरों में बोली जाने वाली भाषा को बोली कहा जा सकता हैं बोली की परिभाषा डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने इस प्रकार दी हैं– ''बोली किसी भाषा के ऐसे सीमित क्षेत्रीय रूप को कहते हैं जो ध्वनि, रूप वाक्य गठन शब्द समूह तथा मुहावरे आदि की दृष्टि से उस भाषा परिनिष्ठित तथा अन्य क्षेत्रीय रूपों से भिन्न होता हैं किन्तु इतना भिन्न नहीं कि अन्य रूपों के बोलने वाले उसे समझ न सकें। साथ ही जिसके अपने क्षेत्र में कहीं भी बोलने वालों के उच्चारण, रूप रचना, वाक्य गठन अर्थ शब्द समूह तथा मुहावरों आदि में कोई स्पष्ट और महत्वपूर्ण भिन्नता नहीं होती हैं।''

10. **बोली व विभाषा** :– विभाषा बोली का ही विकसित रूप हैं। जब कोई बोली अपना क्षेत्र विस्तृत कर परिमार्जित तथा शिष्ट रूप में आ जाती हैं तथा एक बड़े प्रान्त के निवासियों की बोली बन जाती हैं तब उसे विभाषा का रूप प्राप्त होता हैं। इसके पीछे किसी साहित्यकार का हाथ होता तो ब्रज के घरों में बोली जाने वाली सूर जैसे कवियों के हाथों पड़ी तो वह साहित्य मे अवतरित हुई और विभाषा नामधारी बन गयी इसी प्रकार अवधी तुलसीदासजी द्वारा बोली के महत्त्व का कारण ?

    1. धार्मिक श्रेष्ठता से बोली महत्व प्राप्त करती हैं।
    2. बोलने वालों की महत्ता भी बोली को महत्त्व देती हैं।
    3. राजनीति का आश्रय पाकर भी व साहित्यकारों की प्रशंसा व प्रेरणा से भी बोली विभाषा का रूप ले लेती हैं।

11. **कृत्रिम भाषा** :– कत्रिम भाषा परम्परागत या स्वभाव सिद्ध नहीं हैं। यह भाषा की सुबोधता और सुगमता को लक्ष्य रखकर बनाई गई हैं। इसी दृष्टि से डॉ0 जेमन हाफ की बनाई एस्परूतो भाषा विश्व में सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं, विश्व भर में इसका प्रचार हैं?

12. **गुप्त या कुट भाषा** :– इसका प्रयोग प्रायः सेना गुप्तचर विभाग, चोरों, डाकुओं, क्रांतिकारियों तथा लड़कों आदि में होता हैं। इसका प्रमुख उद्देश्य अपनी बात को अनपेक्षित लोगों को न मालूम होने देना हैं। जैसे–
    दामोदर– उदर या फेटे में दाम या धन हैं
    नारायण – नाले में चलो या नाले में हैं।
    परसाद दो – जहर दो आदि।

13. **सहायक भाषा** :– वह भाष जो सामाजिक संप्रेषण के लिए प्रयुक्त न होकर ज्ञानवर्धन के लिए प्रयुक्त होती हैं। जैसे संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, अवेस्ता आदि क्लासिकी भाषाएँ। इसे पुस्तकालीय भाषा भी कहते हैं।

14. **अन्तर राष्ट्रीय भाषा** :– इसी प्रकार शासन या अन्य किसी प्रभाव से जब किसी भाषा का प्रयोग एक से अधिक राष्ट्रों में होने लगता हैं, तो उसे अन्तरराष्ट्रीय भाषा का पद प्राप्त हो जाता हैं जैसे– आजकल अंग्रेजी अंतराष्ट्रीय भाषा हैं।

15. **भाषा व बोली** :– भाषा का क्षेत्र व्यापक होता हैं तो बोली सीमित । (1) एक भाषा की अनेक बोलियां बोलने वाले परस्पर एक दूसरे को समझ लेते हैं। लेकिन अन्य भाषा को और उसकी बोलियों को समझने के लिए विशेष प्रयत्न एवं गहरे अध्यापन की आवश्यकता होती हैं। (2) बोली की अपेक्षा भाषा को अधिक मान्यता प्राप्त हैं। (3) बोली किसी भाषा से ही उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार दोनों में मॉ–बेटी का संबंध हैं। (4) भाषा शिक्षा, शासन और साहित्य रचना के काम की चीजें हैं किन्तु बोली दैनिक जीवन में व्यवहार योग्य होती हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

16. <u>बोली, विभाषा, भाषा तथा राष्ट्रभाषा का अन्तर</u> :– अब यदि इन सबका संक्षेप में अन्तर देखें तो पता चलता हैं कि बोली प्रतिदिन बोली जाने वाली घरू भाषा होती हैं। जिसका क्षेत्र सीमित होता हैं। विभाषा बोली का विकसित रूप हैं। जिसकी सीमा बहुत कुछ भूगोल स्थिर करता हैं भाष विभाषा का संस्कृत रूप होता हैं जो अधिक व्यापक क्षेत्र में प्रचलित होती हैं और जिसकी सीमा सभ्यता संस्कृति और जातीय भावों पर निर्भर करती हैं सबसे ऊपर राष्ट्र भाषा होती हैं। जो सर्व आम और सर्वाधिक प्रचलित भाषा का विकसित रूप हैं और जिसका क्षेत्र सम्पूर्ण देश होता हैं। उक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता हैं कि स्थानीय भाषा को बोली, प्रान्तीय भाषा को विभाषा, टकसाली भाषा को भाषा और देशव्यापी भाषा को राष्ट्रीय भाषा कहते हैं।

उपर्युक्त बिन्दुओं के अतिरिक्त भाषा के और भीरूप हैं जिनमें– जीवित भाषा, मृत भाषा,स्त्री भाषा, जाति भाषा, पुरूष भाषा, बच्चों की भाषा, संपूरक, परिपूरक समतुल्य आदि ऐसी अनेक भाषाएँ हैं जो इस भाषा मे अपना स्थान रखती हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.1 ध्वनि की परिभाषा और उसके वैज्ञानिक आधार का विश्लेषण कीजिएं

उत्तर. **भूमिका** :– ध्वनि (हवनन)? विज्ञान भाषा विज्ञान का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंग हैं। ध्वनि–विज्ञान के अध्ययन के कारण ही भाषा के समस्त अंगो का वैज्ञानिक अध्ययन किया जा सकता हैं। ध्वनि विज्ञान वर्णनात्मक भाषा विज्ञान की आत्मा हैं। ध्वनि विज्ञान की महत्ता असाधारण हैं। भाषा विज्ञान के सुप्रसिद्ध विद्वान जॉर्ज सैम्पसन (George Sampsen) कहते हैं कि–

> ''ध्वनि विज्ञान से अनभिज्ञ भाषा शिक्षक वैसे ही निर्रथक हैं जैसे शरीर–रचना–विज्ञान से अनभिज्ञ चिकित्सक हैं।''

भाषा की लघुतम इकाई ध्वनि हैं और भाषा का निर्माण ध्वनि–समूहों से होता हैं। 'ध्वनि' शब्द संस्कृत का हैं। संस्कृत में 'ध्वन शब्दने' एक धातु हैं, उसी धातु से ध्वनि से ध्वनि नाम पहचाना जाता हैं। सामान्यतः कानों में पड़ने वाला कोई भी शब्द ध्वनि यंत्र के प्रमुख अवयव ध्वनि उत्पादन व योगदान, ध्वनि क्या हैं? किस प्रकार उत्पन्न होती हैं, ध्वनि संप्रेषण, आदि विषयों का निरूपण किया जाता हैं।

<u>ध्वनि का अर्थः</u>–

किसी भी वस्तु से उत्पन्न किसी भी प्रकार की आवाज को सामान्य रूप से ध्वनि कहते हैं। इस दृष्टि से ध्वनि का अर्थ व्यापक और विस्तृत हो जाता हैं। भाषा विज्ञान के अंतर्गत ध्वनि केवल मनुष्य के मुख से निःसृतत आवाज को ही माना गया हैं। ध्वनि के भाषा वैज्ञानिक अर्थ में केवल व्यक्तवाक् का ही अंतर्भाव होता हैं, अवयक्त वाक् का नहीं। भाषा का मूल उद्देश्य विचार भावों का विनिमय हैं। इसका मूलाधार हैं व्यक्त–वक्। भाषा में सार्थक ध्वनियों का प्रयोग होता हैं निर्रथक ध्वनियों का नहीं। जहाँ तक भाषा विज्ञान में प्रयुक्त ध्वनि शब्द का अर्थ हैं वहाँ तक इस परिभाषा से काम नहीं चलता। यहाँ साधारण ध्वनि से पृथक ध्वनि की आवश्यकता होती हैं इसलिए ध्वनि के दो भेद होते हैं।–

<u>ध्वनि के भेद</u> :–

भाषाध्वनि ध्वनि ग्राम

(Speech Sound) (Phoneme)

<u>भाषा ध्वनि</u> :–

वह ध्वनि हैं जिसे मनुष्य अपने मुँह से नियत स्थान से निश्चित प्रयत्न द्वारा किसी ध्येय को स्पष्ट करने के लिए उच्चरित करे और श्रोता उसे उसी अर्थ में ग्रहण करें। प्रत्येक मनुष्य भाषा ध्वनि का उच्चारण सदा एक ही ढंग से नहीं करता। एक ही शब्द को पाँच बार उच्चरित करें तो उसका उच्चारण पाँच प्रकार का होगा।

<u>ध्वनिग्राम</u> :–

ध्वनि ग्राम मिलती–जुलती अनेक भाषा ध्वनियों की वह प्रतीक ध्वनि हैं जिसका खण्ड हो सके। 'काम' शब्द में क् आ म् अ–ये चार ध्वनिग्राम अथवा ध्वनि तत्व हैं।

संस्कृत में ध्वनि विज्ञान का नाम 'शिक्षा शास्त्र' इस प्रकार ध्वनि का अर्थ, भाषा ध्वनि व ध्वनि व ध्वनि ग्राम का विवेचन किया गया।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

<u>ध्वनि की परिभाषा</u> :–

विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने मतानुसार ध्वनि की परिभाषाएँ दी हैं जो इस प्रकार हैं–

(1) <u>प्रो0 डेनियल जोन्स (Daniel Jonè)</u>:–''ध्वनि मनुष्य के विकल्प परिहीन नियत स्थान और निश्चित प्रयत्न द्वारा उत्पादित और श्रोतेद्रिय–द्वारा अविकल्प रूप से गृहीत शब्दावली हैं।''

(2) <u>प्रो0 राजकुमार शर्मा</u> :–''किसी वस्तु की क्रिया का ऐसा फल जो सुना जा सके, ध्वनि कहा जा सकता हैं। पानी में पत्थर गिरने अथवा दो वस्तुओं के टकराने अथवा घर्षण से जो आवाज उत्पन्न होगी उसे हमारे कान ग्रहण करेंगे। अतः उसे ध्वनि कहैंगे।''

(3) <u>डॉ0 सुनीति कुमार चटर्जी</u> :– ''मानव के ध्वनि यन्त्र द्वारा उत्पादित और निश्चित श्रावक गुणों से युक्त ध्वनि को ही भाषा–ध्वनि या भाषण ध्वनि कहा जाता हैं।''

(4) <u>डॉ0 भोलानाथ तिवारी</u> :–''भाषा ध्वनि जिसे मनुष्य अपने मुँह के नियत स्थान से निश्चित प्रयत्न द्वारा किसी ध्येय को स्पष्ट करने के लिए उच्चरित करे जिसे श्रोता उसी अर्थ में ग्रहण करें।''

(5) <u>बाबू श्यामसुन्दर</u> :–''भाषा ध्वनि संकेतों का समूह मात्र हैं। इसी से ध्वनि में अर्थ, शब्द और भाषा सभी का अन्तर्भाव हो जाता हैं। ध्वनि का यह अर्थ बड़ा और व्यापक हैं।''

ध्वनि अध्ययन के विभिन्न वैज्ञानिक आधार

भाषा की सबसे छोटी इकाई वाक्य हैं परन्तु उसकी लघुतम इकाई भाषा ध्वनि हैं। ध्वनियों के संबंध में विचार करने से पता चलता हैं कि शुरू से इनकी तीन स्थितियाँ रहती हैं–उच्चारण, प्रसरण, श्रवण। इसी आधार पर ध्वनि विज्ञान की मुख्यतः तीन शाखाएँ मानी जाती हैं–

(1) <u>औच्चारणिक ध्वनि विज्ञान</u> :–Articalatory Phoneties औच्चारणिक ध्वनि विज्ञान में उच्चारण और उससे संबंद्ध बातों का अध्ययन किया जाता हैं। इसको औच्चारिका और शारीरिक ध्वनि विज्ञान भी कहा जाता हैं। वक्ता अपने वाग्यंत्र अर्थात्, जीभ, कंठ, मुख विवर, दाँत, कोमल तालु, स्वरयंत्र, जिहवा आदि अवयवों की सहायता से ध्वनियों की उत्पति करता हैं। इसमें ध्वनि यत्रों का विस्तार से अध्ययन और ध्वनियाँ वाग्यंत्र के किस–किस अवयवो से मुखरित होती हैं, का सम्पूर्ण रूप से विश्लेषण किया जाता हैं।

(2) <u>सांवहनिक या प्रासरणिक ध्वनि विज्ञान</u>:–(Acoustic Phonetics) इसमें उच्चारण के फलस्वरूप बनने वाली ध्वनि–लहरों का अध्ययन होता हैं। इस अध्ययन में प्रायः काइमोग्राफ, स्पेक्टोग्राफ, ऑसिलोग्राफ आदि यंत्रो की सहायता ली जाती हैं। भौतिकी में तो उसे केवल ध्वनि विज्ञान ही कहा जाता हैं। इसे सांचारिकी तरंगीय या प्रसारणिक ध्वनि विज्ञान भी कहते हैं। इसमें ध्वनि–तरंग मुख और नासिका में उत्पन्न होकर वायु पहुँचती हैं। इसके अन्तर्गत इस बात का अध्ययन किया जाता हैं कि कैसे ध्वनि लहरों द्वारा वक्ता के मुहँ से श्रोता के कान तक ले जायी जाती हैं। ऐसा होता हैं कि फेफड़े से चली हवा ध्वनि–यंत्रो की सक्रियता के कारण आन्दोलित होकर निकलती हैं और बाहर की वायु में अपने आन्दोलन के अनुसार एक विशिष्ट कम्पन से लहरें पैदा कर देती हैं। ये लहरें ही सुनने वाले के कान तक पहुँचती हैं और वहाँ श्रवणेन्द्रिय में कम्पन पैदा कर देती हैं। सामान्यतः इन ध्वनि लहरों की चाल 1100–1200 फीट प्रति सेकेंड होती हैं ज्यों–ज्यों ये लहरें आगे बढ़ती हैं, इनकी तीव्रता घटती जाती हैं। इसी कारण दूर के व्यक्ति को ध्वनि धीमी सुनाई देती हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

इस प्रकार अनेक यंत्रो की सहायता से भौतिक शास्त्र में इन लहरों का बहुत गम्भीर अध्ययन किया गया।

(3) श्रावणिक ध्वनि विज्ञानः– (Auditory Phonetics) इसको श्रोतिकी या श्रोतिक ध्वनि विज्ञान भी कहते हैं। इसमें इस बात का अध्ययन होता हैं कि हम सुनते कैसे हैं। हमारा कान तीन भागों में बँटा हैं–(1)बाह्य कर्ण (2)मध्यवर्ती (3)अभ्यंतर कर्ण कह सकते हैं। बाह्य कर्ण के भी दो भाग किये जा सकते हैं एक तो वह भाग हैं जो ऊपर टेढ़ा–मेढ़ा दिखाई देता हैं। दूसरा भाग छिद्र या कर्ण नलिका के बाहरी भाग से आरम्भ होकर भीतर तक जाता हैं। इस भाग की या कर्ण नलिका की लम्बाई लगभग एक इंच होती हैं। नलिका के भीतरी छिद्र पर एक झिल्ली होती हैं जो बाह्य कर्ण को मध्यवर्ती कर्ण से जोड़ती हैं।

मध्यवर्ती कर्ण एक छोटी सी कोठरी हैं जिसमें तीन छोटी–छोटी अस्थियाँ होती हैं। इन अस्थियों का एक सिरा बाह्य कर्ण की झिल्ली से जुड़ा रहता हैं और दूसरी ओर इसका संबंध अभ्यन्तर कर्ण के बाहरी छिद्र से होता हैं। इसके पीछे अभ्यंतर कर्ण का प्रारम्भ होता हैं। इस भाग में शंख के आकार का एक अस्थि समूह होता हैं। इसके खोखले भाग में उसी आकार की झिल्लियाँ होती हैं। इन दोनों के बीच में एक प्रकार का द्रव्य भरा रहता हैं। इस भाग के भीतरी सिरे की झिल्ली से श्रावणी शिरा के तन्तु आरम्भ होते हैं जो मस्तिष्क से संबंध रखते हैं। ध्वनि की लहरें जब कान में पहुँचती हैं तो बाह्य कर्ण की भीतरी झिल्ली पर कम्पन्न उत्पन्न करती हैं। इस कम्पन्न का प्रभाव मध्यवर्ती कर्ण की अस्थियों द्वारा भीतरी कर्ण के द्रव पदार्थ पर पड़ता हैं और उसमें लहरें उठती हैं जिसकी सूचना श्रावणी शिरा के तन्तुओं द्वारा मस्तिष्क में जाती हैं और हम सुन लेते हैं।

ध्वनि की उपयोगिता :–

भाषा के अध्ययन में ध्वनि–विज्ञान अनेक प्रकार से उपयोगी होता हैं–

(1) ध्वनि विज्ञान का उपयोग किसी भाषा को सीखने या सिखाने में बड़ा उपयोगी होता हैं। इसके द्वारा भाषा को शुद्ध रूप में सीखा जा सकता हैं। प्राचीन काल में इसे शिक्षा वेदाड. नाम दिया जाता था।

(2) इसके द्वारा भाषा को सीखने सिखाने में यह बात स्पष्ट रूप से समझाई जा सकती हैं कि सीखने वाला किसी ध्वनि (वर्ण) का उच्चारण कौन से उच्चारणयोगी अवयव से करें तथा उच्चारण के समय कैसे प्रयत्न करे।

(3) ध्वनि विज्ञान का उपयोग भाषा को शुद्ध–शुद्ध लिखने में भी किया जा सकता हैं। पहले वर्णों का सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त करके उनके लिए वैज्ञानिक दृष्टि से काल्पनिक लिपि चिह्न बनाये जाय और बाद में उनका उपयोग भाषा विशेष को शुद्ध लिखने में किया जाय।

(4) ध्वनि–विज्ञान के द्वारा वर्णों का सूक्ष्म परिचय तथा उनका पारस्परिक भेद स्पष्ट होने से यह बात सहज ही ज्ञात हो जाती हैं कि बोलचाल में, कालान्तर में 'एक ध्वनि (वर्ण) के स्थान पर दूसरी ध्वनि (वर्ण) कैसे आ जाती हैं, उदाहरणार्थः–

जगत+जननी से––जगज्जननी या तत्+गच्छति से ––तद्गच्छति कैसे हो जाता हैं।

(5) ध्वनि विज्ञान के द्वारा किसी प्राचीन भाषा की ध्वनियों के उच्चारण को भी जाना जा सकता हैं।

(6) ध्वनि विज्ञान से परिचित भाषा वैज्ञानिक जब किसी भाषा के शब्दों का इतिहास खोजती हैं,तो वह उस शब्द की परिवर्तित या विकसित वर्तनी से भ्रम नहीं पड़ता हैं।

इस प्रकार ध्वनि विज्ञान भाषा वैज्ञानिकों के साथ समान पाठकों के लिए भी बड़ा उपयोगी हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.2 ध्वनि का वर्गीकरण किन आधारों पर होता हैं ? विस्तार से प्रकाश डालिए।

उत्तर. किसी भी ध्वनि के उच्चारण में मुख्यतया तीन तत्वों का अन्तर्भाव पाया जाता हैं–डॉ0 पीताम्बर सरोदे के अनुसार–

(1) ध्वनि मुख से किस प्रकार बाहर निकलती हैं और उस श्रवणीयता की मात्रा कितनी हैं अर्थात् श्रोता उसे दूर से सुना सकता हैं या केवल पास आकर ही सुनता हैं।

(2) ध्वनि किस वाक्अवयव द्वारा या किस स्थान से उच्चरित हैं।

(3) ध्वनि–निर्मिति के समय वाक अवयवों को कौन से प्रयत्न करने पड़े, अर्थात् वायु का निरोध और निस्सरण किस प्रकार होता हैं।

इन तीनों बातों के आधार पर ध्वनि–वर्गीकरण के प्रमुख तीन आधार माने जा सकते हैं जिसका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार हैं।–

(1) <u>**श्रवणीयता**</u> :– इसका तात्पर्य हैं ध्वनियों के या वर्णो के सुने जाने की योग्यता या सामर्थ्य। प्रत्येक भाषा के ध्वनि में कुछ ध्वनियाँ तो ऐसी होती हैं, जो सुनने में दूसरी ध्वनियों की अपेक्षा अधिक परिस्फुट अर्थात् स्पष्ट होती हैं और उन्हें श्रोता अपेक्षकृत अधिक दूर से भली–प्रकार सुन सकता हैं। श्रवणीयता के आधार पर ध्वनियों के तीन वर्ग बनाये हैं।

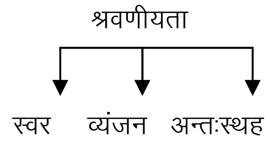

Downloaded notes from www.hindinotes.com

ध्वनियों के वर्गीकरण के आधार

- श्रवणीयता
  - (क) स्वर
  - (ख) व्यंजन
  - (ग) अतस्थः
- उच्चारण स्थान
  - काकल्य ध्वनियाँ
  - जिह्वा मूलीय
  - कण्ठया
  - कोमलतालव्य
  - निसक्य
  - कण्ठतालव्य
  - कण्ठोष्ठय
  - मूर्धन्य
  - तालव्य
  - वर्स्त्य
  - दन्त्य
  - दन्तोष्ठय
  - द्वयोष्ठय
- उच्चारण प्रयत्न
  - अभ्यन्तर प्रयत्न
    - स्पर्श संघर्षी
    - स्पर्श
    - संघर्ष
    - अनुनासिक
    - पार्श्विक,
    - लुण्ठित
    - उत्क्षिप्त
    - अर्द्धस्वर
  - बाह्य प्रयत्न
    - संवृत्त
    - अर्द्धसंवृत्त
    - अर्द्धविवृत्त
    - विवृत्त

(1) **स्वर** :–डॉ0 मंगलदेव शास्त्री के अनुसार– ''स्वर ऐसी सघोष आवाज को कहते हैं जिसके उच्चारण में वायु के प्रवाह की गति मुख से बिना किसी रूकावट के होती हैं और किसी प्रकार का सुनने में आने वाला मौखिक अवयवों का घर्षण नहीं होता हैं।''

–तुलनात्मक भाषाशास्त्र तृतीय सं.पृ.173

इस प्रकार स्वर वे ध्वनियाँ हैं, जिनके उच्चारण में मुख विवर सदैव कम या अधिक खुला रहता हैं। यह स्वय ध्वनि स्वरों के उचारण में मुख विवर में जिह्वा विभिन्न आकारों को धारण करके श्वासवायु की निकलने की स्थिति में अन्तर कर देती हैं। तथा ऊपर या नीचे होकर मुख–विवर को कम या अधिक खुला हुआ कर देती हैं। इसकी विशेषता हैं कि स्वरों का उच्चारण देर तक किया जा सकता हैं। इनको अपेक्षाकृत दूर तक सुना भी जा सकता हैं।

(2) **व्यंजन** :–श्रवणीयता के आधार पर ध्वनियों का दूसरा वर्ग व्यंजन कहलाता हैं। व्यंजन वे ध्वनियाँ हैं, जिनके उच्चारण में स्वरतंत्र से बाहर निकलती हुई श्वास वायु, मुख नासिका के सन्धि स्थल या मुख विवर में कहीं न कहीं अवरूद्ध होकर या संघर्षित होकर मुख या नासिका से बाहर निकलती हैं। व्यंजनों के उच्चारण में जिह्वा आदि (करण) तालु

Downloaded notes from www.hindinotes.com

आदि का स्पर्श करते हैं। यही कारण हैं कि व्यंजनो को सामान्यतः स्पर्श तथा स्फोट ध्वनियाँ भी कहा जाता हैं। व्यंजनो का स्वरों के बिना उच्चारण कठिन होता हैं–

''अन्वग् भवति व्यज्जनम्''

(3) **अंतस्थ** :–श्रवणीयता के आधार पर ध्वनियों का तीसरा वर्ग अंतस्थ कहलाता हैं। कभी–कभी किसी कम परिस्फुट स्वर के बाद अपेक्षाकृत अधिक परिस्फुट स्वर आ जाने से पहला स्वर बहुत ही हस्व उच्चारित होता हैं। इस प्रकार उच्चारित स्वर अंतस्थ कहलाते हैं और व्यवहार में उनका वर्गीकरण अंतस्थ वर्ग में ही होता हैं, उदाहरणार्थ–य्, व् अंतस्थों के उच्चारण में जिहवा (करण) उच्चारण स्थान को पूर्णतया स्पर्श न करके उसके समीप तक पहुँचती हैं और इस प्रकार पूर्ण स्पर्श न होने से इन्हें स्पर्श नहीं कहा जा सकता यह स्वराघात वहन नहीं करते, और ना ही स्वरों के समान दूर तक सुने जा सकते हैं।

(2) **उच्चारण–स्थान के अनुसार ध्वनियों का वर्गीकरण** :–फेफड़ों से निसृत साँस वाकयंत्र के जिस स्थान पर रूककर 'ध्वनि' में परिवर्तित हो जाती हैं वह ध्वनि का स्थान कहलाता हैं। उदाहरणार्थ–''बाहर आती हुई साँस यदि काकल के पास रूककर ध्वनि में बदल, जाती हैं तो वह स्थान के अनुसार काकल्य कहलाती हैं। डॉ0 कर्णसिंह ने इन उच्चारण स्थान ध्वनियों को 12 माना हैं वहीं डॉ0 देवेन्द्र नाथ शर्मा इनकी संख्या 7 ही बताई हैं–

(1) काकल (2) कण्ठ (3) तालु (4) मूर्धा (5) वर्त्स (6) दन्त (7) ओष्ठ्य ।

और इसी प्रकार डॉ0 पीताम्बर सरोदे ने इनकी संख्या 11 मानी हैं। नासिक्य को छोड़कर बाकी सारी मानी हैं।

इनका वर्गीकरण इस प्रकार हैं–

क्र.सं.	वर्ग	स्थान (वागवयव)	ध्वनि
1.	काकल्य	काकल	ह, विसर्ग (:)
2.	जिहवामूलीय	जिहवामूलक तथा कंठ –का पिछला हिस्सा	क़, ख़, ग़
3.	कंठ्य	(अ) कंठ	अ, आ
		(ब) कंठ का पिछला व जिहवा का भी	क, ख, ग, घ
		(क) कंठ, नासिका	ङ्
4.	कंठन्तालत्य	कंठ तथा तालू	ए, ऐ
5.	कंठोष्ठ्य	कंठ तथा ओष्ठ	ओ, औ
6.	मूर्धन्य	(अ) मूर्धा तथा जिहवा की नोक	ट्, ठ्, ड्, ट्, ण्,
		(ब) मूर्धा तथा जिहवानोक	ऋ, व्
7.	तालव्य	कठोर, तालु तथा जिहवोंपाग्र	इ, ई, च, छ, ज, झ, प, श्
8.	वत्स्थ	वत्स्थ तथा जिंहवानोक	ने, न्ह, ल्, ल्ह, र्, रह,

Downloaded notes from www.hindinotes.com

			स्, ज
9.	दन्तय	ऊपर नीचे के दाँतों की पंक्ति का भीतरी भाग तथा जिहवानोक	त्, थ, द्, ध्
10.	दन्तौष्ठ्य	ऊपर के दाँत तथा नीचे का ओष्ठ	व्, फ्
11.	द्वयोष्ठ्य	दोनों ओष्ठ	उ, ऊ, प्, फ्, ब्, भ्, म, म्ह, ब्
12.	नासिक्य	नासिका से उच्चारित	(ˆ) अं

इस प्रकार ये सब ध्वनियाँ उच्चारण स्थान से उच्चरित होने वाली ध्वनियाँ हैं।

(3) उच्चारण प्रयत्न के अनुसार ध्वनियों का वर्गीकरण :–

वागवयो द्वारा वायु का अवरोध–अनवरोध ही प्रयत्न कहलाता हैं। प्रयत्न विशेष रूप से दो प्रकार का होता हैं–

(1) अभ्यन्तर प्रयत्न तथा (2) बाह्य प्रयत्न।

(1) **अभ्यन्तर प्रयत्न** :–मुखविवर के भीतर जो प्रयत्न किए जाते हैं वे अभ्यन्तर प्रयत्न कहलाते हैं। ओष्ठ्य और कंठ के मध्य का भाषा मुख विवर कहलाता हैं। अभ्यंतर प्रयत्न के भी अनेक विद्वानों ने अलग–अलग वर्गीकरण किया हैं। डॉ0 पीताम्बर सरोदे इसके 3 भाग मानते हैं। वह अभ्यन्तर भाग हैं–1.संवृत्त 2. अर्द्ध संवृत्त 3. अर्द्ध विवृत्त मानते हैं वहीं डॉ0 राजकुमार शर्मा इसके 4 भाग मानते हुए अभ्यन्तर में–1. स्पष्ट 2. ईषस्पृष्ट 3. विवृत्त तथा 4. संवृत्त मानते हैं। इनका वर्गीकरण इस प्रकार हैं–

(1) स्वर्श–स्पर्श ध्वनियों में मुखविवर में एक उच्चारण (करण जैसे जिहवा, औष्ठ आदि) दूसरे उच्चारण वयव (स्थान जैसे तालु, कण्ठ, औष्ठ, दन्त आदि) का स्पर्श करता हैं। इस स्पर्श के कारण ये ध्वनियाँ स्वर्श कही जाती हैं। साथ ही इन ध्वनियों में दो उच्चारणवयों के स्पर्श से पहले वायु क्षण भर को अवरूद्ध हो जाती हैं तथा पुनः स्फोट सहित बाहर निकलती हैं, अतः ये ध्वनियाँ स्फोट भी कहीं जाती हैं–

(क) क ख ग घ (क वर्ग) उस प्रकार–

(त) वर्ग त थ् द् ध्

(ट) वर्ग ट् ठ् ड् ढ्

(प) वर्ग प् फ् ब् भ्

ये ध्वनियां स्पर्श मानी गयी हैं। सस्कृत में ये सभी ध्वनियां 25 ध्वनियों स्पर्श मानी गयी हैं।

''कादयो मावसानाः स्पर्शाः'' सिद्धान्त कौमुदी।

(2) संघर्षी :–संघषी ध्वनियों में मुखविवर संकरा हो जाने के कारण वायु संघर्ष करती हुई बाहर निकलती हैं। स्वर्श ध्वनियों की भांति इनके उच्चारण में न तो स्पर्श होता हैं और न ही स्फोट। हिन्दी की स् श् ष् ह् विसर्ग (:) व तथा विदेशी में प्रयुक्त ख् ग् ज् फ् आदि ध्वनियां संघर्षी हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(3) स्पर्श संघर्षी :—जैसे इनके नाम से स्पष्ट हैं इनके स्पर्श तथा संघर्ष दोनों विशेषताएँ मिलती हैं। इनका आरम्भ स्पर्श से होता हैं तथा बाद मे वायु संघर्ष करती हुई मुख से बाहर निकलती हैं हिन्दी की— च छ् ज् झ् (च) वर्ग की चार ध्वनियाँ स्पर्श संघर्षी हैं।

(4) अनुनासिक :—जिन ध्वनियों का उच्चारण करते समय श्वासवायु मुख विवर के साथ—साथ नासिका विवर से भी निकले वे ध्वनियों अनुनासिक कहीं जाती हैं।

''मुखनासिका वचनो5नासिकः'' अष्टाध्यायी।

हिन्दी की ड., न, म्, न्ह, तथा म्ह ध्वनियाँ अनुनासिक हैं। संस्कृत में ''भ'' म्, ड., ण, न अनुनासिक कहीं जाती हैं। साथ ही सभी स्वर अनुनासिक भी कहैं जाते हैं।

(5) पार्श्विक :—जिन ध्वनियों के उच्चारण में जिहवा ऊपर के मसूड़ो का स्पर्श करती हुई श्वास वायु का मार्ग, इस प्रकार बना देती हैं कि श्वास वायु जिहवा के दोनों पार्श्व से होकर बाहर निकलती हैं, वे ध्वनियाँ पार्श्विक कहलाती हैं हिन्दी की ल् तथा ल्ह् ध्वनियाँ पार्श्विक हैं।

(6) लण्ठित :—जिन ध्वनियों के उच्चारण में जिह्वा बेलन की भाँति गोल होकर जिहवानोक से वर्स्व को जल्दी—जल्दी कई बार स्पर्श करती हुई श्वासवायु निकालने देती हैं, वे लुण्ठित ध्वनियाँ होती हैं। हिन्दी में—र् रह् ध्वनियाँ ऐसी ही हैं।

(7) उत्क्षिप्त :—जिन ध्वनियों के उच्चारण में जिह्वा की नोक शीघ्रता से उठकर उच्चारण स्थान (तालु तथा मूर्धा) की स्पर्श करे वे उत्क्षिप्त ध्वनियाँ होती हैं— ड्, ढ्।

(2) <u>बाह्य प्रयत्न</u> :—वह प्रयत्न हैं जो मुख विवर से बाहर अर्थात् नासिक्यं स्वर तन्त्रियों तथा उर या श्वास नलिका में होता हैं। बाह्य प्रयत्न कहलाता हैं। डॉ0 कर्ण सिंह ने ये चार भाग माने हैं—1. संवृत्त 2. अद्धसंवृत्त 3. अर्द्ध विवृत्त 4. विवृत्त। डॉ0 राजकुमार शर्मा ने अपनी पुस्तक में डॉ0 देवेन्द्र नाथ शर्मा का मत दिया हैं— वे बाह्य में 11 ध्वनियाँ मानते हैं 1. विवार 2. संवार 3. श्वास 4. नाद 5. अघोष 6. घोष 7. अल्प्राण 8. महाप्राण 9. उदात्त 10. अनदान्त 11. स्वरित
इनका विवेचन इस प्रकार हैं—

(1) संवृत स्वर :—मुख द्वार के संकुचित होने पर जो स्वर निकलते हैं उन्हें संवृत स्पर कहते हैं— इ,ई और ऊ,उ।

(2) अद्धविवृत्त :—जब मुख द्वार आधा खुला होता हैं तब जो स्वर निकलते हैं, उन्हें अर्द्धविवृत स्वर कहते हैं जैसे—ऐ और औ।

(3) अर्द्ध संवृत स्पर :—जब मुखद्धार अर्द्ध संकुचित होता हैं, तब जो स्वर निकलते हैं वे अर्द्ध संवृत कहलाते हैं जैसे—ए और ओ।

(4) विवृत स्वर :—मुख द्वार जब पूर्णतः खुला होता हैं तब जो स्वर ध्वनियाँ उच्चारित हो वो स्वर विवृत कहलाती हैं। जैसे—अ,आ।

निष्कर्ष :—संक्षेप में कह सकते हैं कि ध्वनियों के वर्ग के आधार तो तीन हैं किन्तु विशेष महत्व स्थान और प्रयत्न को ही मिला हैं। डॉ0 द्वारिका प्रसाद इस संदर्भ में कहते हैं कि—

''भाषा विज्ञान में स्थान तथा प्रयत्नों और कारण को आधार न बनाकर केवल स्थान और प्रयत्न के आधार पर ही ध्वनियों का वर्गीकरण किया जाता हैं।''

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

अतः ध्वनियों के वर्गीकरण स्थान उन प्रयत्न के आधार पर ही किया जाना चाहिए और किया भी जाता हैं। ध्वनि के क्षेत्र में आजकल और भी अधिक काम हो रहा हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.1 ध्वनि परिवर्तन और उसके कारणों पर पर्याप्त प्रकाश डालिए ?

उत्तर. परिर्वन प्रत्येक सत्ता का सहज गुण हैं । जीवित भाषा के साथ भी यही बात होती हैं। भाषा के जीवन का यह महत्त्वपूर्ण गुण परिर्वन–विकार अथवा विकास भी कहा जाता हैं। यह परिर्वन अथवा विकार प्रत्येक व्यक्ति करता हैं। भाषा का उदेश्य हैं– पारस्परिक भाव–विनियम। अतः मूल रूप की रक्षा करते हुए ही जाने में अथवा अनजाने में घटित भाषा का परिवर्तन स्वीकार किया जाना चाहिए । समृद्ध भाषा में व्याकरण आदि की व्यवस्था इसी का परिणाम हैं। इस व्यवस्था के कारण साहित्यिक हो और चाहैं असाहित्यिक,परिवर्तन स्वाभाविक हैं व अनिवार्य गुण भी हैं।

ध्वनि परिवर्तन के कारण :– ध्वनि परिवर्तन सम्बन्धी सभी कारणों का ज्ञान अभी तक नहीं हो सका हैं तथा परिस्थितियों के अनुसार ज्ञात कारणों की संख्या मे भी परिवर्तन होता रहता हैं। इसलिए ध्वनि विकार दो प्रकार के कारण हैं– पहले वे जो शब्द के बाहरी वातावरण में हैं और धीरे–धीरे ध्वनि पर प्रभाव डालते हैं । दूसरे वे जो शब्दो के भीतर ही विद्यमान हैं और इनमें भीतर से ही परिवर्तन का कारण उपस्थित करते हैं ।

पहले वाले को बाह्य तथा दूसरे को आन्तरिक या अभ्यन्तर कारण कहते हैं ।

दो वर्गों में प्रस्तुत इनका विवेचन निम्नलिखित प्रकार से हैं ।

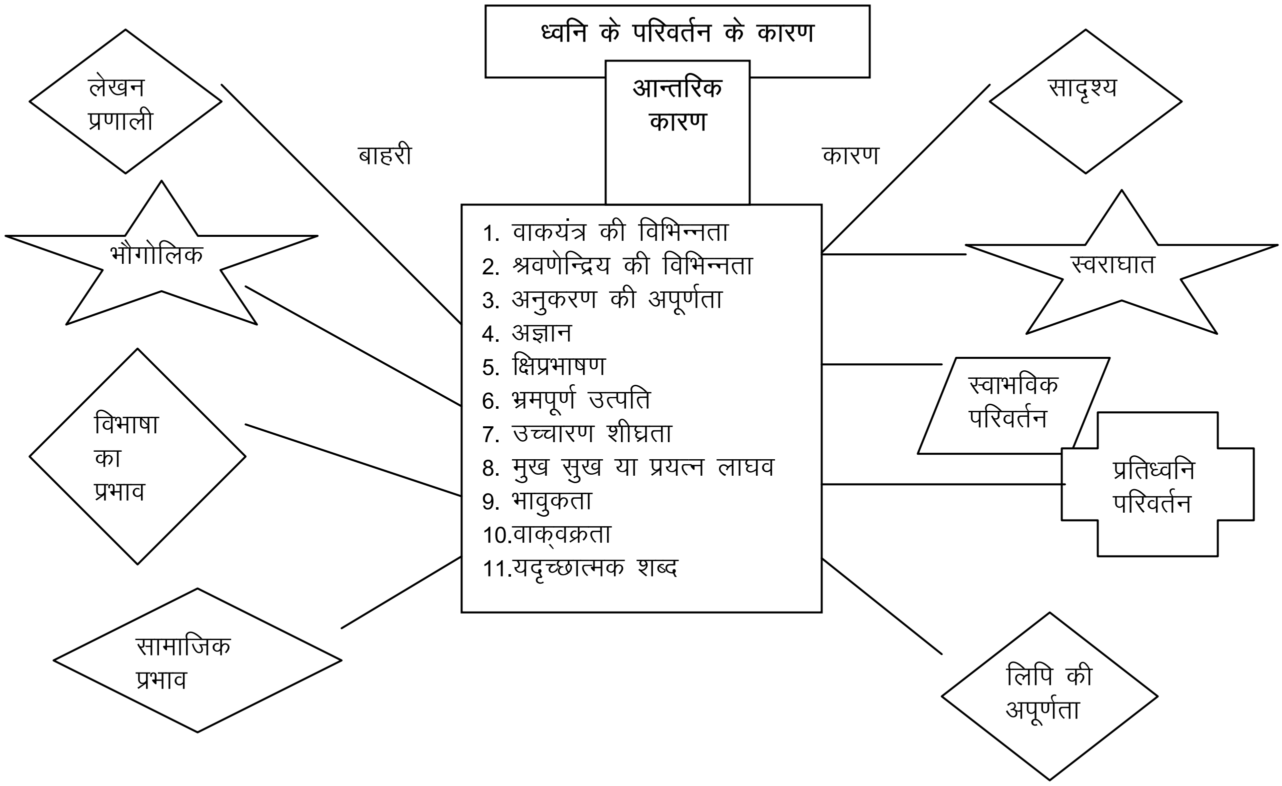

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(1) आन्तरिक कारण :–

(1) वकयंक की विभिन्नता :– किन्हीं दो व्यक्तियों का वाक्यंत्र ठीक एक प्रकार का नहीं होता, अतः किसी एक ध्वनि का उच्चारण भी दो व्यक्ति एक ही ढंग का नहीं कर सकते । प्रत्येक के उच्चारण में अन्तर मिलेगा । जब यही अन्तर कुछ समय बाद बढ़ जाता हैं तो स्पष्ट हो जाता हैं कि "ऋ" और "रि" तथा "श" और "ष" के उच्चारण इसी प्रकार धीरे–धीरे परिवर्तन होकर समान बन गए होंगे ।

(2) श्रवणेन्द्रिय की विभिन्नता :– भाषा जन्म के साथ नहीं आती इसे व्यक्ति सुनकर ही सीखता हैं । अतः श्रवणेन्द्रिय की भिन्नता भी धीरे–धीरे परिवर्तन में सहायक होती हैं । यह अत्यन्त सूक्ष्म कारण हैं इसलिए यह वाक्यंत्र भी भिन्नता से मिलकर ही चलता हैं । थोड़ा कहने में अन्तर और थोड़ा सुनने में अन्तर दोनों मिलकर बड़ा अन्तर उत्पन्न कर देते हैं जो काफी समय बाद बिल्कुल स्पष्ट हो जाता हैं ।

(3) अनुकरण की अपूर्णता :– अनुकरण किसी को सुनकर होता हैं । यह पूर्ण नहीं हो पाता । अतः हम ठीक उसी प्रकार नहीं बोलते जैसे कि दूसरे बच्चो में यह अपूर्णता स्पष्टतः देखी जाती हैं । बड़ों में भी यह अपूर्णता मिलती हैं,पर सूक्ष्म रूप में। कभी–कभी यह अपूर्णता एक ध्वनि को धीरे–धीरे स्थानान्तरित करती हैं और कभी–कभी विदेशी शब्दों को आगे–पीछे कर देती हैं । जैसे अंग्रेजी के 'कनेक्शन' का 'कनेक्शन' "लाइब्रेरी" का लायनरेल रिक्रूट रंगरूट, टूयूशन का टूशन, केप्टन का कप्तान और फारसी के इन्तकाल का हिन्दी में अन्तकाल, दस्तख्त का दस्कत आदि । ब्राह्मण का बामन भी इसी का उदारण हैं ।

(4) अज्ञान :– अज्ञान के कारण विदेशी शब्दों अथवा देशी शब्दों का उच्चारण अशुद्ध हो जाता हैं । यह अपूर्ण अनुकरण जैसा ही कारण हैं । अज्ञान के कारण ही अंग्रेजी ध्वनि थ,द, का उच्चारण दंत्य संघर्षी के बजाय दूंत्य स्पर्शी की भांति करने लगे हैं? इसी प्रकार संस्कृत शब्दों के कितने ही "व" आज "ब" बन गये हैं ।

(5) क्षिप्र भाषण :– कभी–कभी अनजाने ही अथवा विवशता या स्वभावश भाषण मे क्षिप्रता आ जाती हैं । क्षिप्र भाषण मे वक्ता ध्वनियों का उच्चारण स्पष्ट रूप से नहीं कर पाता। अतः शब्दों मे प्रयुक्त अनेक ध्वनियॉ लुप्त हो जाती हैं, अनेक ध्वनियॉ आधे रूप में उच्चारण की जाती हैं तथा अनेक ध्वनियॉ में परिवर्तन हो जाता हैं । इस प्रकार क्षिप्र भाषण के कारण ध्वनियों का उच्चारण अस्पष्ट होता हैं तथा भाषा में ध्वनिलोप,ध्वनि–भ्रातजाया से भौजाई, बाबूजी से बाऊजी, मास्टर साहब से मास्साब आदि इसी के परिणाम हैं।

(6) भ्रमपूर्ण व्युत्पति :– यह कारण अज्ञान जैसा ही हैं । यहॉ एक शब्द विशेष के अज्ञान से नहीं अपितु अनेक मिलते–जुलते शब्दों के कारण ध्वनि परिवर्तन होता हैं । फारसी का इन्तकाल हिन्दी में अन्तकाल इसी भ्रम के कारण हुआ हैं । हिन्दी में अन्त का अर्थ आखिरी और काल का अर्थ समय हैं । अतः समझा यह गया कि दोनों को मिला देने से अन्तकाल बन गया ।

(7) उच्चारणात्मक शीघ्रता :– शीघ्रता के कारण भी ध्वनि परिवर्तन हो जाता हैं साहित्य में लिखा जाता हैं "पण्डित जी" पर बोलते हैं "पण्डी जी" लिखते हैं मास्टर साहब पर बोलते हैं मास्साब । अंग्रेजी के कान्ट,शान्ट,हैंवन्ट आदि इसी के उदाहरण हैं ।

(8) प्रयत्नलाघव या मुखसुख :– यह परिवर्तन के समस्त कारणों में महत्त्वपूर्ण हैं । मनुष्य प्रत्येक क्षेत्र में कम से कम प्रयास में अधिक से अधिक फल चाहता हैं । मुख को सुख देने के लिए वह यथा सम्भव प्रयास करता हैं ।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

कभी–कभी इस प्रयास को करने के लिए वह कई ध्वनियों का उच्चारण छोड़ देता हैं तो कुछ में नई ध्वनियॉ जोड़ देता हैं । जैस Talk, Knife, Knight walk psychology आदि में ल, क, प आदि की ध्वनियॉ सुविधा के लिए नई जोड़ी गई – स्कूल, स्टेशन आदि में "इ" की ध्वनि ।

(9) **भावुकता** :– भावुकता के शब्दों को बिगाड़ कर विकृत रूप दे दिया जाता हैं । चाचा का चच्ची, चचिया, बेटी का बिटटो बच्चा का बच्चु, पुचकार का पुच्ची आदि ।

(10) **वाक्वकृता** :– कभी–कभी अपनी वाणी को वकृता देते समय लोग बनकर बोलने लगते हैं और शब्दो की दुर्दशा कर देते हैं । उदाहरणार्थ–क्या कर रहा हैं ? को किया कैरिया ऐ ? बोलो मत को – बोला मती करै आदि ।

(11) **यदृच्छात्मक शब्द** :– यदृच्छात्मक शब्द प्राचीन काल से ही भाषा का अंग रहें हैं । महाभाष्यकार पंतजलि मे शब्दों के चार भेद माने हैं–जातिवाचक, गुणवाचक क्रियावाचकता यदृच्छात्मक यह शब्द अपनी इच्छानुसार जोड़ लिए जाते हैं, व्याकरण के अनुसार नहीं । हिन्दी मे रोटी–वोटी, पानी–वानी, नाश्ता–वाश्ता, सुबह–बुबह आदि ।

(11) **मात्रा, सुर तथा बलाघात** :– इन तीनों में बलाघात का महत्व सर्वाधिक हैं । प्रायः देखने में आता हैं कि बलाघात के कारण जिस ध्वनि के उच्चारण पर अधिक बल दिया जाता हैं उसके समीप की ध्वनि दुर्बल पड़ जाने से, बाद में लुप्त हो जाती हैं जैसे–अभ्यन्तर से भीतर में अ ध्वनि का लोप हो गया ।

इसी प्रकार सुर के कारण भी परिवर्तन इस प्रकार हैं–

कुष्ठ से कोढ़ तथा बिल्व–बेल।

जब दो दीर्ध मात्राऍ साथ–साथ आ जाती हैं तो उनका उच्चारण कठिन होने के कारण भी एक मात्रा प्रायः हस्व हो जाती हैं जैसे–बाजार–बजार, आकाश–अकास आदि ।

(2) **बाह्य कारण** :–

(1) **सामाजिक कारण** :– सामाजिक परिस्थितियों के प्रभाव से भी ध्वनि परिवर्तन होता हैं यदि सामाजिक परिस्थिति बिगड़ी हुई हैं तो और दुःखपूर्ण हैं तो ध्वनियों का झुकाव संवृत की ओर अधिक होगा । यदि उत्तेजनापूर्ण हैं तो विवृत्त की ओर । यदि सुख ? शान्ति का वातावरण होगा तो अशुद्ध ध्वनियॉ विकसित नहीं हो पाएगी और ध्वनि परिवर्तन बहुत कम होगा ।

(2) **भौगोलिक प्रभाव** :– भौगोलिक प्रभाव अनेक प्रकार से पड़ता हैं । शीत स्थानों में विवृत्त से संवृत्त की ओर परिवर्तन होता हैं । गर्म देशों में संवृत से विवृत्त की ओर ध्वनियॉ बढ़ती हैं । यदि पहाड़ो से घिरा हुआ स्थान हैं तो ध्वनियों का विकास बिना किसी बाह्य आघात के स्वतंत्रता–पूर्वक होता हैं ।

(3) **लेखन प्रणाली** :– यदि लिखने के ढंग में परिवर्तन आ जाता हैं तो उच्चारण भी बदल जाता हैं । अतः ध्वनियॉ परिवर्तन स्वतः ही हो जाती हैं मध्य युग में "रपू" में "रू" और "बू" का सन्देह होने के कारण "ब"का प्रयोग होने लगा थोड़े दिनों में "ब" का उच्चारण "ख" हो गया जिसके प्रभाव से–बरखा, भाखा पाखड आदि प्रयुक्त हुए । अंग्रेंजी में व का प्रयोग नामों जातियों के अन्त में होता हैं जैसे–Rama, Mishra, Gupta, Ashoka आदि । अतः हिन्दी में भी उसी रामा, गुप्ता, बुद्धा, अशोका आदि बोलने लगे ।

(4) **सादृश्य** :– कुछ शब्दों में ध्वनि परिवर्तन सादृश्य के कारण हो जाता हैं जैसे पैतीस के सादृश्य पर सैतीस में अनुनासिकता आ गयी हैं । संस्कृति में द्वादश के स्थान पर एकादश बन गया । इसी प्रकार क ध्वनि के सादृश्य पर सुख में भी क् ध्वनि आ गयी हैं और सुक्ख बोला जाने लगा ।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(5) **स्वराघात** :– स्वराघात दो प्रकार के होते हैं–संगीतात्मक तथा बलात्मक । दोनों के कारण ही ध्वनि परिवर्तन होता हैं । संगीतात्मक में ऊँचा स्वर देने के लिए मुंह को फैलाना पड़ता हैं इस प्रकार इ का ए और उ का आ हो जाता हैं । बलात्मक स्वराघात में किसी एक ध्वनि पर बल दिए जाने से उसकी निकटवती ध्वनियॉ क्षीण हो जाती हैं और बाद में समाप्त हो जाती हैं डाइरेक्टर का डिरेक्टर आदि ।

(6) **स्वाभाविक परिवर्तन** :– कुछ ध्वनियॉ स्वाभाविक रूप से परिवर्तित होती हैं । अधिक प्रयोग से कुछ शब्दों की ध्वनियॉ घिसकर दूसरा रूप धारण कर लेती हैं जैसे–भया का भैया, वतन्ते–बावन्ते आदि । फारसी में स का ह होना जैसे सप्ताह का हफ्ता ।

(7) **लिपि की अपूर्णता** :– बहुत से ध्वनि विकार इसलिए भी हो जोते हैं कि सभी लिपियों में सभी भाषाओं की प्रति ध्वनि को अंकित करने वाले ध्वनि चिन्ह नहीं होते ओर यदि किसी लिपि में किसी विदेशी ध्वनि को अंकित करने का प्रयास किया जाता हैं तो उसको पढ़ने वाले कुछ का कुछ पढ़ जाते हैं । जिससे उनमें ध्वनि विकार आना स्वाभाविक हैं । देवनागरी लिपि ह्रस्व ओ (व) और हस्व ए (म) के लिए ध्वनि चिन्ह नहीं हैं । इसलिए यहॉ callege को कोई कालिज, कालेज तो कोई कौलिज लिखता हैं । जिससे सहज ध्वनि परिवर्तन हो जाता हैं ।

अतः लिपि की अपूर्णता के कारण भी अनेक ध्वनि विकार आ जाते हैं ।

निष्कर्ष :– उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कह सकते हैं कि ध्वनि परिवर्तन किसी एक कारण से नहीं होता हैं उसके अनेक कारण हैं । इन कारणों में से कुछ कारणों का विवेचन किया गया हैं । भाषा परिवर्तन की राह से गुजरती हैं और इसी कारण ध्वनियों में विविध तरह का परिवर्तन आ जाता हैं ।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न 4. ध्वनि परिवर्तन की दिशाओं को सोदाहरण स्पष्ट कीजिए ?

उत्तर. ध्वनि परिवर्तन मुख्यतः दो प्रकार से होता हैं पहला–स्वयंभू अर्थात् स्वाभाविक अपने आप और दूसरा पदोद्भूत अर्थात् अन्य बाह्य प्रभावो से । स्वयंभू परिवर्तन भाषा के प्रवाह में ही हो जाते हैं । इसके लिए कोई विशेष अवस्था अथवा परिस्थिति की आवश्यकता नहीं होती हैं । अनुनासिकता आ जाना इसी का उदारहण हैं ।

<u>ध्वनि परिवर्तन की दिशाएँ</u>:– परोद्भूत ध्वनि परिवर्तन कारण सहित होते हैं,उनके लिए विशेष अवस्था अथवा परिस्थिति की आवश्यकता होती हैं । कारणों के अन्तर्गत गिनाए समस्त परादभूत ध्वनि परिवर्तन का ही उदाहरण प्रस्तुत करते हैं । अतः दूसरे प्रकार के ध्वनि परिवर्तन का ही विश्लेषण किया जाता हैं । इसके अनुसार परिवर्तन की 15 दशाऐं स्थिर की गई हैं ।

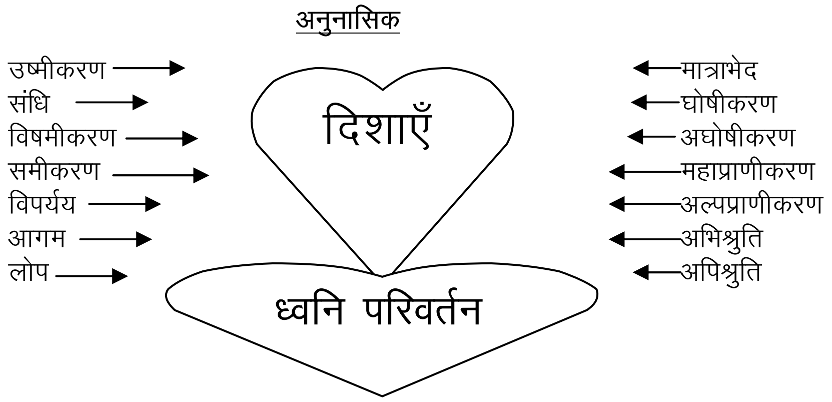

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(1) लोप :– (Elision) बोलने में शीघ्रता करने से अथवा स्वराघात से कुछ ध्वनियों का लोप हो जाता हैं । लोप तीन प्रकार का होता हैं (क) स्वरलोप (ख) व्यंजन लोप (ग) अक्षर लोप । इन तीनों के फिर तीन–तीन भेद हो सकते हैं–(1) आदिलोप (2) मध्य लोप (3) अन्तलोप । अतः लोप के नौ वर्ग हुए, तीन स्वर संबंधित तीन व्यंजन संबंधी और तीन अक्षर संबंधित ।

(1) आदि स्वर लोपः– अनाज –नाज

अभ्यंतर – भीतर

अहाता – हाता

एकादश – ग्यारह

उद्‌गार – डकार

(2) मध्य स्वर लोपः– अरथी – अर्थी

नरक – नर्क

अंग्रजी मेंः– DO NOT -DON'T

CANNOT - CAN'T

(3) अन्त स्वर लोपः– आम् – आम

दूर्वा – दूब

परीक्षा – परख

वार्ता – बात

बाहु – बॉह

Assisto - Assist

Affaire - affair

(1) आदि व्यंजन लोपः–संस्कृत शब्दों के आदि व्यंजन ज,श,स, का प्रायः हिन्दी में लोप हो जाता हैं जैसे–

ज्वलन – बलना

श्मसान – मसान

स्थाली – थाली

स्थान – थान

स्नेह – नेह

(2) मध्य व्यंजन लोपः–संस्कृत शब्दों के मध्य में आने वाले क,ग,च,ज,त,द,न,प,फ,य,र,ल,व,ष तथा विसर्ग (:) हिन्दी में प्रायः लुप्त हो जाते हैं –

चिक्कण – चिकना	उत्पति – उपज
कुक्कुर – कूकर	अनद्ध – आध
दुग्ध – दूध	ननान्दा – ननद
सूची – सूई	पिप्पल – पीपल

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(2) अन्तः व्यंजन लोपः—संस्कृत शब्दों के अन्त में आने वाले ब,य,र, तथा विसर्ग (:) हिन्दी में प्रायः लुप्त हो जाते हैं, जैसे—

मूल्य – मोल

नित्य – नित

व्याघ्र – बाघ

(1) आदि अक्षर लोपः—

व्याकुल – आकुल Defence - Fence

त्रिशूल – शूल

अबरेशम – रेशम

(2) मध्य अक्षर लोपः—

शादबाश – शाबाश

गेहुँचना – गोचना

(3) अन्त अक्षर लोपः—

माता – माँ

मौक्तिक – मोती

(2) <u>आगम</u> :— आगम के द्वारा नई ध्वनि शब्द में आ जाती हैं इसका प्रधान कारण उच्चचरण सुविधा होती हैं । इसके भी लोप की भाँति नौ भेद हैं ।

(1) आदिस्वरागमः—शब्द के प्रारम्भ में स्वर आ जाने को कहते हैं । यह स्वर ह्रस्व होता हैं । फारसी तथा फ्रेंच के लगभग उन सभी शब्दों में आदि स्वरागम हो जाता हैं जिनके आरम्भ में स,श,ष ध्वनियाँ होती हैं । हिन्दी अंग्रेजी में भी यही प्रवृत्ति मिलजी हैं जैसेः—

स्कूल का इस्कूल

स्पोर्ट का इस्पोर्ट

(2) मध्यस्वरागमः—संस्कृत शब्दों के हिन्दी रूपों में प्रायः अ,इ,उ का आगम हो जाता हैं जैसेः—

कर्म – काम

मिश्र – मिसिर

स्मरण – सुमिरन आदि ।

(3) अन्तस्वरागमः—संस्कृत शब्दों के हिन्दी रूपों के अन्त में प्रायः आ तथा उ का आगम हो जाता हैं जैसेः—

गुरू – गुरूआ

गल – गला

जी – जीउ आदि ।

(1) आदि व्यंजनागमः— ओष्ठ – होठ

आरंज – नारंज

(2) मध्य व्यंजनागमः—प्रायः "क" का हिन्दी में आगम हो जाता हैं—

सुख से सुक्ख

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(3) अन्त व्यंजनागमः–संस्कृत शब्दों के हिन्दी रूपों के अन्त में प्रायः क,ब,ल,ह,ड का आगम हो जाता हैं जैसे अमूल्य से अमोलक, वीरूत से बिरवा आदि ।

(3) **विपर्यय** :– किसी शब्द में किसी वर्ग अथवा अक्षर के उलटफेर अथात् इधर–उधर हो जाने को विपर्यय कहते हैं । यह तीन प्रकार का होता हैं:–(1) स्वर विपर्यय (2) व्यंजन विपर्यय (3) अक्षर विपर्यय ।

(1) स्वर विपर्ययः–अमिरजी से इमरती, अम्लिका से इमली ।

(2) व्यंजन विपर्ययः–चिह्न से चिन्ह, ब्रम्ह से ब्रह्म ।

(3) अक्षर विपर्ययः–इसके उदाहरण वैसे तो कम हैं पर कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं –महाजन से मजाहन ।

(4) **समीकरण** :– समीकरण द्वारा एक ध्वनि दूसरी ध्वनि को इस प्रकार प्रभावित करती हैं कि उसे अपना ही रूप दे देती हैं । यह दो प्रकार का होता हैं– पुरोगामी व पश्चगामी । ये दोनों स्वर व व्यंजन में देखे जो सकते हैं:–

(क) स्वर समीकरणः– पुरोगामी समीकरणः–प्रथम स्वर दूसरे स्वर को प्रभावित करती हैं जैसे–खुरपी–खुरूपी ।
पश्चगामीः–प्रथम स्वर प्रथम को ही प्रभावित करता हैं जैसे– इक्षु–उक्खु, अंगुली–उंगली

(ख) व्यंजन समीकरणः– पुरोगामी समीकरणः–पहली ध्वनि पहली ध्वनि को प्रभावित करती हैं जैसे–चक्र–चक्क,लग्न–लग्ग,यस्स–जस्स आदि ।

पश्चगामी समीकरणः–इसमें दूसरी ध्वनि पहली ध्वनि को प्रभावित करती हैं– शर्करा–शक्कर,नील–लील आदि ।

(5) **विषमीकरण** :– यह समीकरण का उलटा हैं । इसमें दो ध्वनियॉ एक–सी रहती हैं और एक के प्रभाव से या मुख सुख के लिए एक ध्वनि अपना स्वरूप बदल देती हैं ।

(क) स्वर विषमीकरणः–
परोगामीः–प्रथम स्वर ज्यों का त्यों रहता हैं दूसरा बदल जाता हैं तिलक–तिकली
पश्चामीः–इसमें प्रथम स्वर में विकार आता हैं – मुकुट–मउर,नुपूर–नुउर ।

(ख) व्यंजन विषमीकरणः–
पुरोगामीः– लांगूल–लंगूर, पश्चगामीः– दरिद्र–दलिद्धर आदि ।

(6) **संधि** :– सन्धि के कारण कुछ व्यंजन जैसे प,व,य,म आदि उच्चारण में स्वर के समीप होने से स्वर में बदल जाते हैं और फिर अपने से पहले के व्यंजन में मिल जाते हैं कभी–कभी ध्वनि बदल जाती हैं कि पहचान में ही नहीं आती हैं जैसे–पत्नी–सोत,शत–सौ । इनके परिवर्तन की विधि यह हैं– सपत्नी सवतं सउत सौत, शत–अस सब सऊ सो ।

(7) **ऊष्मीकरण** :– कभी–कभी ध्वनियॉ ऊष्म में बदल जाती हैं उदाहारणार्थ–केन्टुम वर्ग की भाषाओं की "क" ध्वनि शतक वर्ग में इसी दिशा को प्राप्त हो गई हैं ।

(8) **अनुनासिकता** :– कुछ शब्दों में अकारण ही अनुनासिकता आ गई हैं । यदि इसका कोई कारण हो सकता हैं तो वह मुख सुख हैं । इसी कारण कुछ ध्वनियॉ ऐसी आ गयी हैं–सर्प–सॉप,ऊष्ट–ऊट,यूक–यूॅ ।

(9) **मात्रा भेद** :– मात्रा भेद में कभी स्वर दीर्ध से हस्व और कभी हस्व से दीर्ध हो जाते हैं इन पर स्वराघात का प्रभाव माना जाता हैं क्योंकि यह स्वयंभू ही होना संभव नहीं ।

दीर्ध से ह्रस्वः– नारंगी–नरंगी,आलाप–अलाप, ।
ह्रस्व से दीर्धः– अक्षत –आखत,अंकुश–ऑकुस ।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(10) **घोषीकरण** :– उच्चारण की सुविधा के कारण कुछ ध्वनियॉ अघोष से घोष हो जाती हैं जैसेः–मकर–मगर,शाक–साग,धूक–धुग्धु,काक–काग आदि ।

(11) **अघोषीकरण** :– यह घोषीकरण का उल्टा हैं इसके उदाहरण बहुत कम हैं । पैशाची प्राकृत में अवश्य इसके उदाहरण मिल जाते हैंः–गगन–गकन,मेघ–मेख आदि ।

(12) **महाप्राणीकरण** :– अल्प्राण ध्वनियों का महाप्राण हो जाना महाप्राणीकरण होता हैं । जैसेः–पुष्ठ का पीठ,वृश्चिक का बिच्छु,गृह का घर आदि ।

(13) **अल्प्राणीकरण** :– कुछ शब्दों में महाप्राण का अल्प्राण हो जाना अल्प्राणीकरण होता हैं जैसेः–धधामि का दधामि,भोधामि का बोधामि हो जाना ।

(14) **अभिश्रुति** :– किसी स्वर अर्द्ध स्वर या शब्द में सब अपिनिहित के कारण आया हुआ स्वर परिवर्तित हो जाता हैं तो उसे अभिश्रुति कहते हैं । इसका उदाहरण जर्मेनिक भाषा में हैंः–डंपद का डंपदप और फिर डमद हो गया डंपदप में प्रथम अपिनिहित के कारण हैं जिसका परिवर्तन डमद की म में हो गया ।

(15) **अपिश्रुति** :– व्यंजनों की अपरिवर्तित दशाओं केवल स्वर में अन्तर होने से अर्थ परिवर्तन हो जाने का अपिश्रुति कहते हैं । अपिश्रुति अरबी के लगभग सभी शब्दों में पाई जाती हैं ।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न 5.बलाघात और स्वराघात (सुर)को उदाहरण देकर समझाइए ?

उत्तर. ध्वनि गुण के अन्तर्गत मात्रा और आघात आते हैं । किसी भी ध्वनि के उच्चारण में या उच्चारण छोड़कर मौन रहने में समय की जो मात्रा लगती हैं उसे भाषा के अध्ययन में मात्रा कहते हैं । आघात शब्द एक्सेन्टु के प्रति शब्द के रूप प्रयुक्त किया गया हैं ? अंग्रेजी में एक्सेन्टु का प्रयोग भाषा विज्ञान में प्रमुख रूप से 3 अर्थो में मिलता हैंः–

(1) पामर आदि भाषा विज्ञानवेत्ताओं के अनुसार यह मात्रा स्वरलहर, बलाघात ध्वनि प्रक्रिया तथा ध्वनि प्रकृति आदि अनेक इसके अन्तर्गत आती हैं।

(2) दूसरे अर्थ में प्रेटर,पेई,गेनर आदि इसे "मात्रा बलाघात" का समानार्थी मानते हैं ।

(3) तीसरे अर्थ में बलाघात, सुर या स्वराघात केवल ये दो ही चीजें इसके अन्तर्गत आती हैं। और यही अर्थ अधिक प्रचलित और मान्य हैं ।

इस प्रकार आघात दो प्रकार के होते हैंः–

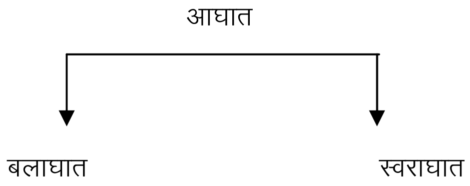

(1) **बलाघातः–** बोलते समय प्रायः यह देखा जाता हैं कि वाक्य के सभी अंशों पर बराबर बल नहीं दिया जाता हैं । कभी किसी अंश पर बल होता हैं तो कभी किसी अंश पर इसी प्रकार एक शब्द की भी सभी ध्वनियों पर बराबर बल या आघात नहीं पड़ता हैं । शब्द जब एक से अधिक अक्षरों का होता हैं तो इन अक्षरों पर भी बल बराबर नहीं पड़ता एक पर अधिक होता हैं तो दूसरे या दूसरों पर कम । इसी बल जोर या आघात को बलाघात कहते हैं । भाषा की कोई भी ध्वनि पूरी तरह बलाघातशून्य नहीं होती हैं ।

भेदः–सभी भाषा वैज्ञानिकों ने बलाघात के दो भेद स्वीकार किए हैं–शब्द बलाघात और वाक्य बलाघात किन्तु **डॉ0 भोलानाथ तिवारी** ने निम्न भेद किए हैंः–

(1) <u>ध्वनि बालाघातः–</u> वह बलाघात जो किसी एक ध्वनि स्वर या व्यंजन पर हो । यदि किसी अक्षर में एक से अधिक ध्वनियॉ हो तो उनमें एक ध्वनि उस अक्षर का शिखर होती हैं और शेष गहर । बलाघात उस शिखर पर होगा ।

(2) <u>अक्षर बलाघात</u> :– यह वह बलाघात हैं जो अक्षर पर होता हैं । अधिक अक्षरों में से किसी एक पर बलाघात होता हैं । अंग्रेजी के ऑपर्टयूनिटी Coppor lunity में 5 अक्षर हैं । तुलनात्मक दृष्टि से प्रथम बलाघात तीसरे अक्षर पर द्वितीय पहले पर, तृतीय पॉचवें पर, चतुर्थ दूसरे पर और पंचम चौथे पर हैं । अक्षर बलाघात ही बलाघात हैं ऐसा भाषा वैज्ञानिकों ने स्वीकारा हैं ।

(3) <u>शब्द बलाघात</u> :– शब्द विशेष पर यह बलाघात होता हैं । कभी–कभी किसी विशेष शब्द पर बलाघात होता हैं–मोहन को तुमने मारा "या" तुमने उसे डण्डों से मारा । इससे शब्द बलाघात की स्थिति को समझा जा सकता हैं । डॉ0 तिवारी के अनुसार तीन बातें ध्यान देने योग्य हैं–

(1) इस रूप में बालराघात निश्चित न होकर मुक्त या अनिश्चित हैं । यहॉ वक्ता को छूट होती हैं उसे वह अपनी आवश्यकतानुसार डाल सकता हैं ।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(2) इस बलाघात का सीधा संबंध अर्थ से हैं । थोड़ा भी हैंर–फेर करने से अर्थ बदल जाएगा ।

(3) शब्द बलाघात संज्ञा,सर्वनाम,विशेषण,प्रधान क्रिया और क्रिया विश्लेषण पर हो सकता हैं ।

(4) वाक्य बलाघातः–सामान्य वार्ता के दौरान प्रायः सभी वाक्य बलाघात की दृष्टि से लगभग बराबर होते हैं,किन्तु कभी–कभी आश्चर्य, भावावेश,आज्ञा, या प्रश्न आदि से सम्बन्द्व होने पर कुछ वाक्य अपने आस–पास के वाक्यों से अधिक जोर देकर बोले जाते हैं । वाक्य बलाघात के लिए–

राम–तुम जो भी कहो, मैं नहीं जा सकता ।

श्याम–वाह यह तो अच्छी रही । जिस पतरी में खाओ उसी में छेद करों और उस पर कहो कि नहीं जा सकता जाओगे कैसे नहीं ? हाथ उठाकर भागने की दिशा में फेंकते हुए भाग जाओ नांलायक कहीं के ।

यहॉ "भाग जाओ" पर बलाघात हैं ।

अर्थ के आधार पर बलाघात के भेदः–अर्थ की दृष्टि से बलाघात दो प्रकार का होता हैं–सार्थक बलाघात व निरर्थक बलाघात ।

(1) सार्थक बलाघात :– जिसका अर्थ से संबंध अनविार्य रूप से होता हैं । शब्द बलाघात इसी प्रकार का हैं । इसका दूसरा रूप बलाघात प्रधान भाषाओं में अक्षर बलाघात पर दिखाई देता हैं । उदाहरणार्थ –पोली शब्द पर में "ली" पर होने से विशेषण होने के कारण इसका अर्थ "बहुत" होगा ।

(2) निरर्थक बलाघात :– जिसके परिवर्तन से अर्थ नहीं बदलता निरर्थक बलाघात कहालाता हैं । हिन्दी में कमल में म के अ पर बलाघात हैं, किन्तु बोलने वाला उसके स्थान पर क के अ पर यदि बलाघात दे तो अस्वाभाविक होकर भी वह अर्थ में परिवर्तन नहीं ला सकता ।

इसी प्रकार निश्चय व अनिश्चय के आधार पर भी भेद किए गए हैं और येस्पर्सन ने परम्परागत मनौवैज्ञानिक और शारीरिक मनोवैज्ञानिक, बलाघात के रूप में भी भेद किए हैं । जोन्स तथा अन्य विद्वानों ने Subjectivestron और स्पष्ट Objectivestron दो भेद माने हैं ।

डॉ0 तिवारी के शब्दों में यही कहा जा सकता हैं कि बलाघात मूलतः शक्ति की वह मात्रा हैं जिसमें ध्वनि शब्द या वाक्य का उच्चारण किया जाता हैं और शक्ति आधिक्य के कारण ही अपेक्षतया अधिक बलाघात युक्त ध्वनि अक्षर या शब्द आदि आसपास की अन्य ध्वनियों आदि से अधिक मुखर होती हैं ।

बलाघात के लिए निन्नांकित शारीरिक प्रयत्नों का सहारा लेना पड़ता हैं–

(1) बलाघात की मात्रा के अनुपात में फेफड़े से काम लेना पड़ता हैं

(2) उच्चारण अधिक शक्ति से किया जाता हैं ।

(3) मॉसपेशियों को अधिक दृष्ता या तनाव के साथ पारिवालित किया जाता हैं उनमें सामान्य शैथिल्य नहीं रहता हैं ?

(4) कभी–कभी बलाघात के साथ–साथ मात्रा को बढ़ाने एंवम स्वर तन्त्रियों के कंपन को तीव्र और अधिक करने आदि के लिए भी प्रयत्न करने पड़ते हैं ।

(2) **स्वराघातः**–जब किसी ध्वनि पर विशेष बल या जोर देकर उसका उच्चारण किया जाता हैं, तब उसे आघात कहते हैं । अंग्रेंजी में यह एक्सेंट कहलाता हैं और भाषा विज्ञान की शब्दावली में इसे स्वराघात या बलाघात कहते हैं । यह आघात या स्वराघात मुख्यतः तीन प्रकार का होता हैंः–

(1) संगीतात्मक (2) बलात्मक (3) रूपात्मक

Downloaded notes from www.hindinotes.com

<u>स्वराघात</u>

स्वराघात का आधार स्वर यन्त्र में स्थित स्वर तन्त्रियों का कम्पन हैं तथा कम्पन का आधार स्वर तंन्त्रियों का कम या अधिक तनाव या फैलाव हैं । स्वर तंत्रियों के अधिक या कम तना हुआ होने पर फेफड़ो से आती हुई वायु से कम्पन अधिक या कम होती हैं– तथा स्वर ऊँचा या नीचा हो जाता हैं ।

(1) <u>संगीतात्मकता</u>ः–संगीत के आरोह और अवरोह के समय जिस तरह स्वरों में उतार–चढ़ाव देखा जाता हैं उसी तरह भाषा के शब्दों या वाक्यों अथवा उद्यात्मक पंक्तियों के उच्चारण में जो ध्वनिगत उतार–चढ़ाव प्रतीत होता हैं उसी को संगीतात्मक स्वराघात कहते हैं । संगीतात्मक स्वराघात केवल घोष ध्वनियों में ही देखा जाता हैं,अघोष ध्वनियों में नहीं। क्योंकि अघोष ध्वनियों के उच्चारण में स्वर तंत्रियों के अन्तर्गत तनिक भी तनाव उत्पन्न नहीं होता हैं । उदात, अनुदात और स्वरित स्वरों के प्रयोग द्वारा "संगीतात्मक" स्वराघात को अत्यधिक मात्रा में अपनाया जाता हैं ।

संगीतात्मक स्वराघात का सर्वाधिक प्रयोग यहॉ वेद मन्त्रों में ही होता रहा हैं प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं के विकसित होते ही इसका लोप हो गया और तब से अब तक भारतीय भाषाओं में संगीतात्मक बलाघात का प्रायः अभाव सा ही चला आ रहा हैं इतना अवश्य हैं कि कभी–कभी बोलचाल के लिए प्रश्नवाचक वाक्य में संगीतात्मक स्वराघात अवश्य मिल जाता हैं । जैसे –क्या तुम घर जाओगी? वाक्य में जाओगी का उच्चारण कुछ ऊँचे स्वर में होता हैं । अतः यह संगीतात्मक स्वराघात हैं ।

(2) <u>बलात्मक स्वराघात</u>ः–बलात्मक स्वराघात का संबंध फेफड़े से हैं । अतः इसमें सुर ऊँचा–नीचा नहीं किया जा सकता इसमें केवल बल के साथ उच्चारण ही होता हैं किस पर बलात्मक व स्वराघात होता हैं । हिन्दी के सवैयों और कवितों में, विशेष रूप से डिंगल में रचित छन्दों में, बलात्मक स्वराघात मिलता हैं । गणों का स्वरूप नियत होने पर ब्रज अवधी और खड़ी बोली में भी सवैयों में दीर्घ वर्ग हस्वत इसी स्वराघात के कारण हो जाते हैं । गाथी भाषा में बलात्मक स्वराघात के कारण संस्कृत के पिता रह गए । इसमें अन्तिम आ पर बल था ं बलात्मक स्वराघात अंग्रेजी के शब्दों में अर्थ परिवर्तन का कारण भी बन जाता हैं । उदाहरणार्थः–"कनडक्ट" शब्द ले सकते हैं इस शब्द में यदि बलाघात आरम्भ में होगा तो यह संज्ञा होगा और यदि बलाघात हटा कर डी पर कर दिया जाए तो यह क्रिया होगा ।

हिन्दी में शब्दों के उपान्त पर बलाघात होता हैं । अतः अन्तिम अक्षर हल हो जाते हैं ।

(3) <u>रूपात्मक स्वराघात</u>ः–इसमें न तो स्वर ऊँचा–नीचा होता हैं और न अधिक बल दिया जाता हैं इस स्वराघात को रूपात्मक स्वराघात कहते हैं । यह स्वर तंत्रियों की बनावट पर आधारित हैं । प्रत्येक व्यक्ति की शारीरिक संरचना में भेद होता हैं स्वर तंत्रियों भी एक–सी नहीं होती किसी की बड़ी तो किसी की छोटी होती हैं यही कारण हैं कि व्यक्तियों की पहचान उनकी आवाज से हो जाती हैं । यह रूपात्मक स्वराघात के ही कारण होता हैं ।

इस प्रकार स्वराघात का संबंध भाषा से न होकर केवल बोलने में ध्वनि मात्र से हैं । अतः इसका महत्व अधिक नहीं हैं । प्रमुख भेद दो ही हैं – संगीतात्मक तथा बलात्मक स्वराघात ।

<u>निष्कर्षः–</u> इस प्रकार संक्षेप में कह सकते हैं कि भाषा में ध्वनियों के उच्चारण के लिए ध्वनि गुणों का ज्ञान परमावश्यक हैं। इससे हम किसी भाषा–विशेष को सीखने में उसकी ध्वनि गुणों का ध्यान रख सकते हैं। स्वराघात व बलाघात का उपयोग कुछ भाषाओं में अधिक और कुछ भाषाओं में न्यून दिखाई देता हैं। उदाहरण के लिए अवेस्ता,लैटिन आदि प्राचीन भाषाओं में तथा अंग्रेजी,रूसी आदि आधुनिक भाषाओं में बलाघात की प्रधानता हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

संसार की कुछ भाषाओं में बलाघात की मात्रा कम हैं। अघोष ध्वनियों में इसकी स्थिति कम रह जाती हैं। हिन्दी में भी यही प्रवृत्ति हैं।

प्रश्न.6 "ध्वनि नियम" से आप क्या समझते है ? कतिपय ध्वनि नियमों को स्पष्ट समझाइये।

उत्तर. ध्वनि नियमः—जब कोई क्रिया कुछ विशेष परिस्थितियों में प्रत्येक देश और प्रत्येक काल में समान रूप से होती हैं तो उसे नियम कहते हैं। जिस प्रकार प्रकृति के अनेक कार्यों को देखकर कुछ सामान्य और विशेष नियम बनाये जाते हैं उसी प्रकार ध्वनियों में होने वाले परिवर्तनों के आधार पर ध्वनि नियम बनाये जाते हैं। नियमों में एकरूपता जब अधिकांश स्थलों पर मिलती हैं तो उसके आधार पर ध्वनि—नियम स्थिर किये जाते हैं, किन्तु प्राकृतिक नियम और ध्वनि नियम में अन्तर यह हैं कि "ध्वनि नियम" प्राकृतिक नियमों के समान सार्वदेशिक एवम् सार्वकालिक नहीं होते बल्कि उनका कार्य क्षेत्र सीमित और काल निश्चित होता हैं।

डॉ0 मंगलदेव व शास्त्री के अनुसार—

भिन्न—भिन्न भाषाओं में एक ही काल में तथा एक ही भाषा में भिन्न—भिन्न कालों में होने वाले ध्वनि विकारों को ठीक—ठीक रूप से तुलनात्मक परीक्षा करने से हम निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ये विकार सामान्यतः सभी भाषाओं में पाए जाते हैं तथा प्रत्येक भाषा की ध्वनियों में इन विकारों के घटित होने के कुछ नियम निश्चित हुआ करते हैं। इन्हीं को ध्वनि नियम कहा जाता हैं।

डॉ0 पी.डी.गुणे कहते हैं—

ध्वनि नियम सर्वथा पूर्ण नहीं होते हैं और उनमें देशकाल की सीमा होती हैं।

श्री टी.जी.टकर के अनुसार—

'A Phonetic law of a language is statement of the regular practice of that language at a particular time in regard to the treatment of a particular sound or groab of sound in a particular setting'

आर्थात् किसी भाषा के ध्वनि परिवर्तन संबंधी नियम से अभिप्राय उस कथन से हैं जिसमें किसी विशेष ध्वनि काल और विशेष परिस्थिति में उस भाषा के विशेष वर्ण या वर्ण समूह मे नियमित रूप से होने वाले परिवर्तनों का उल्लेख होता हैं।

डॉ0 भोलानाथ तिवारी के मतानुसार—

किसी विशिष्ट भाषा की कुछ विशिष्ट ध्वनियों में किसी विशिष्ट काल और विशिष्ट दशाओं में हुए नियमित परिवर्तन या विकार को भाषा का ध्वनि नियम कहते हैं।

प्रो0 राजकुमार शर्मा के अनुसार—

ध्वनि नियम वस्तुतः एक निश्चित काल के भीतर होने वाले किसी एक भाषा के अथवा किन्हीं अनेक भाषाओं के ध्वनि विकारों का कथन मात्र हैं।

अतः प्रत्येक ध्वनि नियम में सदैव निम्नलिखित तथ्य स्मरणीय हैं या महत्त्वपूर्ण माने जा सकते हैं—

(क) वह नियम किस काल से सम्बन्धित हैं?

(ख) किस भाषा अथवा भाषाओं पर घटित होता हैं?

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(ग) किस प्रकार सीमाओं के भीतर वह कार्य करता हैं?

उपर्युक्त विवेचन को देखते हुए ध्वनि–नियम की निम्नलिखित विशेषताओं की ध्यान में रखना आवश्यक हैं–

(1) यद्यपि ध्वनि–नियम भौतिक विज्ञान आदि के नियमों की भाँति सुनिश्चित तथा व्यापक नहीं होते,तथापि ध्वनियों में होने वाला परिवर्तन बहुत सीमा तक नियमित ही होता हैं। इसी आधार पर ध्वनि–विज्ञान विज्ञान कहलाता हैं।

(2) एक बार प्रारम्भ हुआ ध्वनि–परिवर्तन कभी रूकता नहीं हैं,अपितु दिशा विशेष में अग्रसर होता रहता हैं।

(3) प्रत्येक ध्वनि–नियम का संबंध काल विशेष से होता हैं उससे भिन्न काल की ध्वनियों पर वह सार्थक नहीं होता हैं।

(4) प्रत्येक ध्वनि–नियम देश–विशेष से संबंध रखता हैं,उससे बाहर की भाषा–ध्वनियों पर वह लागू नहीं होता हैं।

(5) प्रत्येक ध्वनि परिवर्तन प्रारम्भिक काल में एक प्रवृत्ति के रूप में होता हैं,जब प्रवृत्ति स्थायी हो जाती हैं,तो वह ध्वनि–नियम बन जाती हैं।

अतः प्रत्येक ध्वनि नियम किसी भाषा की भूतकाल की ध्वनियों से संबंध रखता हैं पहले वह प्रवृत्ति के रूप में रहता हैं धीरे–धीरे स्थायी बन जाने पर प्रवृत्ति नियम का रूप ले लेती हैं। इस प्रकार किसी भी ध्वनि–नियम को भौतिक विज्ञान आदि के नियमों की भाँति सुनिश्चित तथा सार्वदेशिक–सार्वकालिक नहीं माना जा सकता हैं।

कुछ प्रसिद्ध ध्वनि–नियम

(1)	ग्रिम–नियम	(2)	ग्रासमान नियम
(3)	वर्नर नियम	(4)	सादृश्य नियम
(5)	तालव्य नियम	(6)	मूर्धन्य नियम
(7)	ग्रीक नियम	(8)	लैटिन नियम

<u>ग्रिम नियमः–</u>

ध्वनि–नियमों के अन्तर्गत प्रसिद्ध ध्वनि नियम ग्रिम नियम हैं। इस नियम की ओर ग्रिम से पूर्व भी संकेत किया जा चुका था,किन्तु इसके संबंध में पूरे विवरण और विस्तार के साथ तथ्यों का विश्लेषण ग्रिम ने ही किया। यही कारण हैं कि यह नियम ग्रिम के ही नाम से प्रसिद्ध हो गया। ग्रिम ने 1919 ई. में जर्मन भाषा का व्याकरण छपवाया। जब उसका दूसरा संस्करण निकला तो उसमें ग्रिम ने जर्मन भाषा का वर्ण परिवर्तन संबंधी नियम प्रकाशित कराया। यही आगे चलकर ग्रिम नियम कहलाया।

पहले उसे निर्दोष माना गया। उसका परिष्कृत नियम जिस रूप में प्रचलित हैं उसका परिचय अपेक्षित हैं। ग्रिम के दो भाग हैं–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

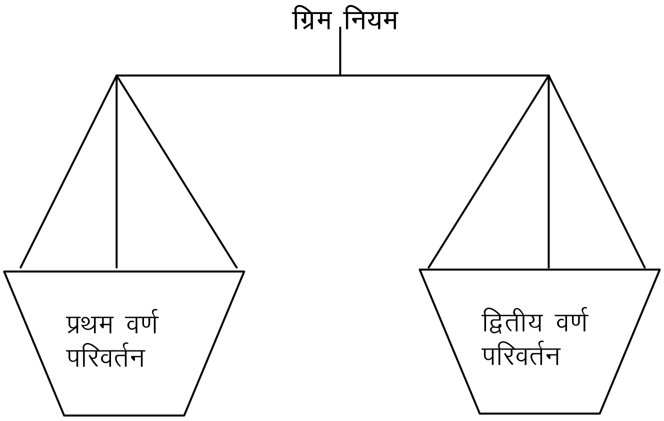

"प्रथम वर्ण परिवर्तन का उद्वेश्य क्लासिकल वर्ग की भाषाओं का निम्न जर्मन वर्ग की भाषाओं से संबंध दिखाना हैं। यह वर्ण परिवर्तन ईसा से बहुत पहले निम्न जर्मन वर्ग की भाषाओं के अलग–अलग विकसित होने से पहले ही हो चुका था। द्वितीय वर्ग परिवर्तन का उद्धेश्य निम्न जर्मन वर्ग की भाषाओं का उच्च जर्मन वर्ग की भाषाओं से संबंध दिखाना हैं। यह दूसरा परिवर्तन उत्त्री जर्मनी से एंग्लों–सेक्शनों के पृथक होने के बाद ईसा की सातवीं शदी के आस–पास हुआ। इसका विशेष संबंध केवल ट्यूटानिक भाषाओं से हैं।

<u>प्रथम वर्ण परिवर्तन</u> :– ग्रिम नियम के प्रथम वर्ण परिवर्तन और द्वितीय वर्ण परिवर्तन का परिचय डॉ0 तिवारी और प्रो0 जगदीश नारायण बंसल के निबन्ध के आधार पर दिया जा रहा हैं–

प्रथम वर्ण परिवर्तन में मूल भारोपीय भाषा के कुछ स्पर्श (व्यंजन वर्णों का एक भेद) परिवर्तित हो गए थे अर्थात् मूल भारोपीय के क वर्ग त वर्ग और प वर्ग के चतुर्थ तृतीय और प्रथम वर्ण निम्न जर्मन शाखा में क्रमशः तृतीय प्रथम और द्वितीय हो जाते हैं। केवल द्वितीय वर्ण की ध्वनियाँ स्वर्श न रहकर ऊष्म हो जाती हैं। इसे इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता हैं–

(क) मूल भारोपीय के ध् घ् भ् निम्न जर्मन में ग् द् ब् हुए।

(ख) मूल भारोपीय के ग् द् ब् निम्न जर्मन में क् त् प् हुए।

(ग) मूल भारोपीय के क् त् प् निम्न जर्मन में ख् (ह्) थ् फ् ध् घ् भ् ।

इसके स्पष्टीकरण के लिए सुविधा के दृष्टिकोण से मूल भारोपीय तथा निम्न जर्मन के स्थान पर क्रमशः संस्कृत और अंग्रेजी से उदाहरण ले रहें हैं–

(क)	घ् ध् भ्	से	ग् द् ब्
	धन	से	Gong
	से विधुर से	Widower	
	भ्रु	से	Brow
(ख)	ग् द् ब् से	क् त् प्	
	गौ	सू	Cow

Downloaded notes from www.hindinotes.com

द्वौ	से	Lwo
बाधन्	से	Pain
(ग) क् त् प्	से	ख् (ह) थ् फ्
कः	से	Who (मूलतः hwo&oks)
तनुः	से	Thin
पद	से	Foot

द्वितीय वर्ण परिवर्तन :– इस वर्ण परिवर्तन में ग्रिम ने निम्न जर्मन तथा उच्च जर्मन मे हुए परिवर्तन समझाये। दूसरा परिवर्तन इस प्रकार हुआ।

निम्न जर्मन		उच्च जर्मन
ग्,द्,ब्	से	क्,त्,प्
क्,त्,प्	से	ख् (ह) स्,फ्
ख (ह) थ्,फ्	से	ग्,द्,ब्
ध्,ध्,भ्		

स्पष्ट ही यह नियम सुलझा हुआ हैं,परन्तु ग्रिम भी इस नियम के सभी उदाहरण प्रस्तुत न कर सके।

प्रो0 बंसल ने ठीक ही लिखा हैं किः–'इस नियम के अपवाद इतने अधिक थे कि दूसरा वर्ण परिवर्तन अवैज्ञानिक प्रतीत हुआ'।

यही कारण हैं कि ग्रिम के इन दोनों नियमों मे से प्रथम वर्ण परिवर्तन को ही स्वीकार किया गया,यद्यपि उसमें भी बहुत से अपवाद पाये गये। इनके समाधान के लिए कई नियमों और उपनियमों का पता लगाया गया। स्वंय ग्रिम ने भी इस नियम से संबंधित कुछ आपत्तियों का समाधान करते हुए उपनियम बनाये शेष को ग्रिम परवर्ती विद्वान 'ग्रासमान' तथा 'वर्नर' ने समझाया वास्तव मे इन परवर्ती विद्वानों के नियम ग्रिम नियम के ही उपनियम माने जाते हैं।

ग्रिम के उपनियमः–ग्रिम नियम संयुक्त वर्णों में नहीं लगता हैं। उसका संबंध असंयुक्त वर्णों से हैं। अतः कूल भारोपीय के+स्क+स्त+रूप के क् त् प् से स् संयोग के कारण कोई विकार नहीं होता। इसी प्रकार मूल भारोपीय के+क्त+और+प्त में भी त् अधिकृत रहता हैं। उदाहरणार्थ 'अष्टों' से ।बीज (अख्ट) तथा 'नत्ता' से छपजि (निफट) ।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.1 शब्द और पद निर्माण की प्रक्रिया को समझाते हुये शब्द और पद के अन्तर को स्पष्ट कीजिए?

उत्तर. भाषा विज्ञान का वह अंग,जिसके अन्तर्गत शब्दों,शब्द रचनात्मक प्रत्यायों,पदों,पद–रचनात्मक प्रत्ययों का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण विवेचन किया जाता हैं,रूप विज्ञान कहलाता हैं। रूप (फॉर्म,आकृति) का अध्ययन सतही तथा आन्तरिक (गहन) दोनों स्तरों पर किया जाता हैं। रूपवादी सतही अध्ययन को महत्व देते हैं जबकि अर्थविज्ञानी गहन अध्ययन को भी प्रश्रय देते हैं। अध्ययन सामग्री तथा क्षेत्र की दृष्टि से रूपविज्ञान के दो भाग हैं–

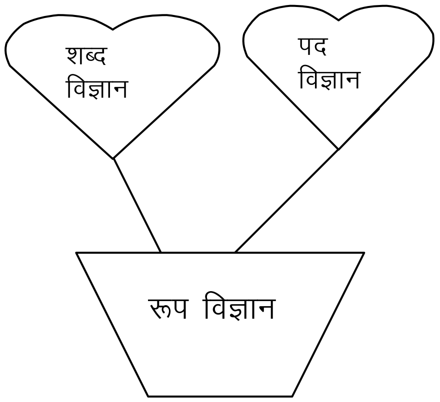

1. **शब्द विज्ञान**:–भाषा हमारे विचारों एवं भावों की अभिव्यक्ति का सबसे बड़ा व सशक्त माध्यम हैं और शब्द उसकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण इंकाई हैं। जिस व्यक्ति का शब्द भण्डार जितना ही अधिक होगा,वह अपनी अभिव्यक्ति में उतना ही अधिक सफल सिद्ध होगा। जिस भाषा में जितना अधिक शब्द भण्डार होगा,वह उतनी ही अधिक सम्पन्न एवं लोकप्रिय भाषा होगी। अतः शब्द के विभिन्न रूपों एवं प्रकारों का सम्यक् ज्ञान भाषा के सफल प्रयोक्ता की सबसे पहली आवश्यकता हैं।

(1) **शब्द का महत्व** :– 'वाक्यपदीय' के रचयिता महर्षि 'भतृहरि' ने तो शब्दों का महत्व प्रतिपादित करते हुए यहाँ तक कहा हैं–

शब्दवेवाश्रिता शक्तिविश्वस्यास्य निबन्धनी।
यन्नेत्रः प्रतिभात्याय भेद रूपः प्रतीयते ।

अर्थात् इस संसार को निबद्ध करने वाली सशक्ति शब्दों में ही आश्रित हैं। शब्दों के माध्यम से देखने के कारण ही व्यक्तियों की आत्मा भिन्न–भिन्न प्रतीत होती हैं।

भतृहरि ने लिखा हैं–

तस्मादयः शब्द संस्कारः सा सिद्धि परमात्मनः
तस्य प्रवृत्ति तत्वज्ञः तद ब्रहामृत मश्नुतें।

अर्थात्–शब्द का संस्कार करना परमात्मा की सिद्धि प्राप्त करना हैं। जो शब्द की प्रवृत्ति के तत्व को जान लेता हैं वह ब्रह्य के अमरत्व को जान लेता हैं।

(2) शब्द विषयक विभिन्न मतः–शब्द के विषय में विभिन्न मत प्रचलित हैं। इन मतों को डॉ0सरनाम सिंह शर्मा ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी भाषाः रूप विकास' में बड़े कौशन के साथ प्रस्तुत किया हैं अतः उनके द्वारा प्रस्तुत विभिन्न मतों का वर्णन इस प्रकार हैं–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

<u>कपिल का मत</u>:–साँख्य तत्वज्ञान के आद्य पुरूष कपिल मुनि ने शब्द को प्रकृति का विकार बतलाया हैं। प्रकृति जड़ हैं,व्यापक हैं। आकाश प्राकृतिक हैं और उसकी उत्पत्ति शब्द तन्मात्रा से हुई हैं। तन्मात्रा की कल्पाना 'परमाणु' शब्द से ही हो सकती हैं।

<u>गौतम–कणाद का मत</u>:–न्याय दर्शन के अग्रणी गौतम मुनि से तथा वैशेषिक दर्शन के पुरोधा कणाद मुनि ने शब्द को आकाश का गुण बतलाया हैं। कदम्बगोलक न्याय अथवा वागचितरंग न्याय से शब्द को उससे प्रसारित माना हैं।

<u>जैन मत</u>:–जैन मत मुख्यतः दो तत्वों को स्वीकारता हैं:–चेतन और जड़। जड़ के दो रूप हैं एक मूर्त और दूसरा अमूर्त। पुदगल मूर्तकोटी का जड़ कहलाता हैं और आकाश अमूर्त कोटि का । शब्द मूर्तिमान हैं,इसलिए जड़ पुदगल का विशेष प्रकार का परिणाम हैं।

मूल दव्यग्राही दाव्यार्थिक नय की दृष्टि से 'शब्द' नित्य कहलाता हैं। और परिणाम–ग्राही पयार्थिक नय दृष्टि से शब्द अनित्य माना जाता हैं।

बौद्धमतः–बौद्ध परम्परा की दृष्टि से समग्र विश्व पंच स्कन्धात्मक हैं। उनमें से रूप स्कन्ध में 'शब्द' का समावेश यह मत शब्द के भौतिक स्वरूप को स्वीकारता हैं।

<u>पतंजलि और भर्तृहरि का मत</u>:–महान वैयाकरण पतंजलि ने और वाक्यपदीय के प्रणेता भर्तृहरि ने स्फोटरूप निरवयव शब्द को नित्य कहा हैं और मुखादि द्धारा ध्वन्यमान शब्द को अनित्य कहा हैं। इन दोनों वैयाकरणों ने शब्द का परमाणु होना स्वीकार किया हैं।

'अनादिनिधंन शब्द ब्रह्यतत्वं,यद् अक्षरम्।

विर्वतेअर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः।

अर्थात्–'अनादि,अनन्त और अक्षरात्मक शब्द ब्रहा रूप में विवर्त पाता हैं और उससे जगत की प्रक्रिया चल रही हैं।

इस प्रकार महर्षियों ने शब्द तत्व के दर्शन को अलग–अलग दृष्टियों से निरूपित किया हैं।

<u>शब्द निर्माण प्रक्रिया</u>:–शब्द बनाने के लिए उपसर्ग (पूर्व प्रव्यय) और प्रत्यय दोनों ही आवश्यकतानुसार जोड़े जाते हैं। उपसर्ग जोड़ने से मूल के अर्थ में परिवर्तन हो जाता हैं जैसे–विहार,संहार परिहार आदि में प्रत्यय जोड़कर उसी के अर्थ के शब्द या पद बनाए जोते हैं।

<u>शब्द व पद में अन्तरः–</u>

पहले पहल व्याकरणाचार्यों ने शब्द को पद नाम से ही पुकारा था। यही कारण हैं कि भर्तृहरि ने पद व्यवहार के अन्तर्गन अनेक पुराने आचार्यों का मत उद्धृत करते हुए लिखा हैं–

'कोई आचार्य पद के चार भेद करता हैं नाम आख्यत,उपसर्ग और निपात तथा कोई आचार्य कर्म प्रवचनीय की पृथक् सत्ता मानकर पद के पाँच भेद करता हैं'।

इससे स्पष्ट हैं कि जिन पूर्ववर्ती आचार्यों के मतो को भर्तृहरि ने उद्धृत किया हैं,वे शब्द को ही पद मानते रहैं हैं,परन्तु शब्द और पद में पर्याप्त अन्तर होता हैं–

(1) शब्द पूर्ण तथा स्वतन्त्र होता हैं जबकि पद वाक्य के अनुकूल होने के कारण परतन्त्र होता हैं।

(2) शब्द के साथ विभक्ति व परसर्गों का योग नहीं होता जबकि पद का निर्माण ही विभक्ति एवं परसर्गो द्धारा होता हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(3) शब्द वाक्य में प्रयुक्त होने के लिए सर्वथा अयोग्य होता हैं,जबकि पद में वाक्य के अन्तर्गत प्रयुक्त होने की पूर्ण योग्यता होती हैं।

(4) डॉ0कर्ण सिंह ने लिखा हैं–'कभी–कभी मूल शब्द तथा वाक्य प्रयुक्त पद या रूप में कोई स्वरूपगत भेद दिखाई नहीं पड़ता हैं। ऐसे स्थलों पर सदैव यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि शब्द वाक्य में प्रयुक्त हैं और उसका अन्वय ठीक हो रहा हैं तो वह पद ही हैं शब्द नहीं क्योंकि मुख्य नियम यही हैं कि बिना पद बने किसी भी मूल शब्द का वाक्य में प्रयोग ही नहीं हो सकता हैं।

(5) डॉ0 देवेन्द्रनाथ शर्मा ने शब्द और पद के अन्तर को संक्षेप में किन्तु स्पष्टतया समझाया हैं–'संस्कृत के आचार्यों ने शब्द के दो भेद किए हैं–शब्द और पद । शब्द से उनका तात्पर्य विभक्ति रहित शब्द से हैं जिसे प्रतिपादिक भी कहते हैं। पद शब्द का प्रयोग उस शब्द के लिए किया जाता हैं जिसमें विभक्ति लगी हैं'।

शब्द और पद के उपर्युक्त विवेचन से इन दोनों का स्वरूप स्पष्ट हो जाता हैं। इस स्पष्ट विवेचन से यह भी स्पष्ट हो जाता हैं कि इन दोनों में कितना अन्तर हैं। वास्तविकता यह हैं कि शब्द और पद मूल रूप से एक होते हुए भी अलग–अलग होते हैं। उनमें अन्तर इतना हैं कि शब्द असिद्ध प्रयोग होते हैं और पद सिद्ध प्रयोग।

(3) <u>पद विज्ञान</u> :– कोई शब्द किसी वाक्य में 'प्रयुक्त होकर तभी अर्थबोध एंव भार वहन में समर्थ होता हैं जब वहाँ विभक्ति प्रत्यय या परसर्ग का संयोग प्राप्त करके पद बन जाता हैं। इस दृष्टि से 'पद' शब्द से अधिक महत्त्वपूर्ण होता हैं,क्योंकि जब तक कोई शब्द पद नहीं बनता तब तक वह भावबोधन एवं वहन में सर्वथा असमर्थ ही रहता हैं। अतः शब्द के उस रूप को 'पद' कहते हैं जो विभक्ति प्रत्यय या परसर्ग का संयोग ग्रहण कर तथा किसी वाक्य में प्रयुक्त होकर अर्थ ओध एवं भाव बोध में सर्वथा समर्थ होता हैं। इस दुष्टि से हाथी,सरोवर,कमल,तोड़ना केवल शब्द हैं जबकि हाथी ने सरोवर में,कमलों को,तोड़ा से चारों पद हैं क्योंकि ने,में को विभक्तियाँ तथा आ प्रत्यय का संयोग हुआ हैं और इन विभक्तियों एवं प्रत्यय ने उक्त शब्दों को पद की योग्यता प्रदान की हैं।

(1) <u>पद निर्माण प्रक्रिया</u>:–पद निमार्ण की अनेक पद्धतियाँ हैं प्रमुख रूप से पद निर्माण के लिये प्रकृति और प्रत्यय की आवश्यकता होती हैं। प्रकृति में प्रत्यय के योग से जो शब्द बनता हैं,उसके आरम्भ में उपसर्ग और अन्त में विभक्ति लगा कर अर्थ भेद किया जाता हैं । प्रकृति से दो प्रकार के प्रत्यय लग कर पद की रचना होती हैं वे दो प्रत्यय हैंः–

(1) सुबन्तः–प्रकृति या प्रातिपदिक+सुप् प्रत्यय।

जैसे–रामः–राम+सु(स्)।

सभी संज्ञा और विशेषण शब्दों में सुप् प्रत्यय लगते हैं। उपसर्ग और अवयवों के बाद भी सुप् लगते हैं,परन्तु उनका लोप हो जाता हैं।

(2) तिङन्तः–धातुओं से तिङ् प्रत्यय (ति,तः,अन्ति आदि) लगते हैं। धातु+तिङः प्रत्यय–तिङ्त। जैसे पठति–पठ्+अ+ति(वह पढ़ता हैं),धातुओं से तिड प्रत्यय लगते हैं। तिड् प्रत्यय लगने पर ही उनको प्रयोग हो सकता हैं,क्योंकि इनमें पद बनाने वाले प्रत्यय सुप् और तिड् नहीं लगे हैं।

निष्कर्षः–उक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट हो जाता हैं कि शब्द और पद में पर्याप्त अन्तर हैं। शब्द विभक्ति रहित होते हैं जबकि पद विभक्ति सहित होते हैं। पद निर्माण की पद्धति महत्वपूर्ण हैं। संस्कृत एवं हिन्दी की पद निर्माण पद्धति अत्यन्त वैज्ञानिक और सिद्धान्तों पर आधारित हैं। भाषा विज्ञान की दृष्टि से इसका विशेष महत्त्व हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.2 सम्बन्ध तत्व और अर्थ तत्व के सम्बन्ध को व्यक्त करते हुए संबंध तत्व के प्रकारों व कार्यों का उल्लेख करो?

उत्तर. वाक्य में अर्थ तत्व तथा सम्बन्ध तत्व की स्थिति अनिवार्य रूप से होती हैं। अर्थ तत्व मूल रूप होने के कारण अधारभूत मान जाता हैं। जब उससे सम्बन्ध तत्व की सहायता से परिवर्तन उत्पन्न किया जाता हैं तब विशिष्ट अर्थ बोध के ही कारण वह पद कहलाता हैं। अतः पद रचना में संबंध तत्व का विशेष महत्व हैं। ये संबंध तत्व विभिन्न भाषाओं में अपनी परम्परा के अनुसार मिलते हैं। संबंध तत्व का प्रमुख कार्य होता हैं वाक्य में अर्थ तत्वों का पारस्परिक संबंध निर्देश। उदाहरण के लिए यह वाक्य ले सकते हैं–'कृष्ण ने दुशासन को चक्र से मारा'। इस वाक्य में कृष्ण,दुशासन, चक्र से मारना शब्द अर्थ तत्व हैं और ने,को, से प्रत्यक्ष संबंध तत्व हैं। मारा,से संबंध बतलाना हैं,को,और,से क्रमशः दुशासन तथा चक्र का संबंध स्थापित करते हैं।

<u>अर्थ तत्व और संबंध तत्व</u> :– प्रत्येक वाक्य का निर्माण पदों से होता हैं। कभी–कभी किसी वाक्य में एक ही पद होता हैं किन्तु अधिकांश वाक्यों का निमार्ण कई पदों से होता हैं। वाक्य विधायक उन पदों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता हैं कि उनमें कुछ ध्वनियाँ ऐसी होती हैं,जो केवल शब्दार्थ का बोध कराती हैं ओर कुछ ध्वनियाँ उन शब्दार्थों के पारस्परिक संबंध की द्योतक होती हैं। जैसे 'राम ने रावण को बाण से मारा'। वाक्य में चार पद आए हैं–राम ने,रावण को,बाण से,मारा। इन पदों में से राम,रावण,बाण और मारना ध्वनियाँ तो इस वाक्य के शब्दार्थ का बोध कराने वाली हैं,जबकि ने,को,आ, ध्वनियाँ किसी विशिष्ट अर्थ की द्योतक नहीं हैं,अपितु वाक्य में प्रयुक्त राम,रामण,बाण और मारना शब्दों के पारस्परिक संबंध की द्योतक हैं क्योंकि ध्वनियाँ ही यह बतलाती हैं कि इस वाक्य में राम कर्ता हैं,रावण कर्म हैं,बाण करण हैं और मारा भूत काल की क्रिया हैं। इस प्रकार यह सिद्ध हैं कि प्रत्येक वाक्य में दो प्रकार की ध्वनियाँ का प्रयोग होता हैं कुछ ध्वनियाँ वाक्य के विचार या अर्थ का बोध कराती हैं और कुछ ध्वनियाँ ज्ञान कराती हैं। इनमें से जो ध्वनियाँ केवल अर्थ या विचार का बोध कराती हैं उन्हें अर्थ तत्व या अर्थ मात्र कहते हैं और जो ध्वनियाँ उन अर्थ तत्वों के पारस्परिक संबंध की द्योतक होती हैं उन्हें संबंध तत्व कहते हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

<u>अर्थतत्व व संबंध तत्व का संबंध</u> :–

संसार की समस्त भाषाओं में संबंध तत्व एक ही प्रकार के नहीं होते। अतः विभिन्न भाषाओं के अर्थ तत्व और संबंध तत्व के संबंध भी भिन्न पाए जाते हैं। निम्नांकित संबंध तत्वों का विवेचन सामान्य रूप से किया जा रहा हैं–

(1) **<u>पूर्ण योग</u>**:–अर्थ तत्व व संबंध तत्व जब परस्पर इतने संयुक्त रहते हैं कि एक ही शब्द से दोनों तत्व प्रकट हो जाते हैं। तो पूर्ण संयोग कहा जाएगा। भारोपीय तथा समेटिक परिवार की भाषाएँ पूर्ण संयोग संबंध तत्व के सर्वोतम उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

अरबी भाषा के कुतुब को ही लीजिए। इसमें तीन व्यंजन हैं–क–त्–ब! इन तीनों व्यंजनों के बीच में विभिन्न अर्थ वाले शब्द बनते हैं तथा–

क्+अ+त्+इ+ब्–कातिब।

क्+इ+त्+अ+ब्–किताब।

क्+उ+त्+उ+ब्–कुतुब।

यदि इसमें प्रत्यय लगावें तो और भी शब्द बन सकते हैं,जैसे–

म+कतब–मकतब

त+कतब–तकतब

कतब+त्–कतबत

(2) <u>अपूर्ण संयोग</u>:–भाषाओं में जब अर्थतत्व से संबंध तत्व इस प्रकार जुड़ा रहता हैं कि मिले रहते हुए भी संयोग अपूर्ण रहता हैं और दोनों तत्व पृथक सत्र रखते हैं जब उसे अपूर्ण संयोग कहते हैं। अंग्रेजी की निर्बल क्रियाएँ इसका अच्छा उदाहरण हैं, जैसे–

Hope+ed	=	Hoped
Like+ed	=	Liked
Ask+ed	=	Asked
Talk+ed	=	Talked
Kill+ed	=	Killed
Thank+ed	=	Thanked

आदि ऐसे कई उदाहरण हैं।

तुर्की:–अट्+लट्–अट्लर

यज्+मक्–यज्मक्

कन्नड़:–सेवक+रू–सेवकरू

सेवक+रन्नु–सेवकरन्नु

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(3) वियुक्त रूप (स्वतंत्र रूप):–कुछ भाषाएँ ऐसी भी हैं जिनमें अर्थ तत्व और संबंध तत्व बिल्कुल अलग रहते हैं। दोनों का अस्तित्व संबंध होते हुए भी पृथक् रहती हैं। चीनी तथा बँटू परिवार की भाषाएँ में पूर्ण शब्द तथा रिक्त शब्द मिलते हैं। रिक्त शब्दों का प्रयोग अधिक न होते हुए भी काफी होता हैं। इसका उदाहरण हैं–'वो ती उल्तसु' यहाँ वो और उलत्सु अर्थ तत्वों के मध्य तभी संबंध तत्व हैं,जिसकी सत्ता स्वतंत्र हैं। हिन्दी में ने,को, से आदि अंग्रेजी में ts,in,on आदि ऐसे ही उदाहरण हैं।

रिव–बी रेन–ए बी वी–ये सफेद औरतें।

यहाँ 'बी' बहुवचन सूचक संबंध तत्व हैं। बंटू परिवार की सोबिया भाषा का भी उदाहरण लिया जा सकता हैं।

मु–वन्तु मु–लोट––सुन्दर आदमी

यहाँ 'मु' एकवचन का संबंध तत्व हैं।

<u>हिन्दी में संबंध तत्व</u> :– हिन्दी में संबंध तत्व अनेक प्रकार के मिलते हैं। से,में,का,की,ने आदि रिक्त शब्द मिलते हैं। कर्ता,क्रिया,कर्म, का स्थान वाक्य में निश्चित सा ही रहता हैं। ये स्थान द्वारा प्रकट होने वाले संबंध तत्व के उदाहरण हैं। कभी स्वराघात व बलाघात के कारण भी वाक्य का अर्थ बदल जाता हैं,जैसे–घोड़ा राम ने खरीदा में घोड़ा पर बल दिया जाए तो एक अर्थ होगा और राम पर बल दिया जाय तो अर्थ बदल जाएगा। अपूर्ण संयोग के भी उदाहरण बहुत मिलते हैं। जैसे–बादल+ओ––बादलों में स्वर व्यंजन के परिवर्तन द्वारा अर्थ तत्व तथा संबंध तत्व का पूर्ण संयोग भी मिलता हैं । यहाँ दोनों को अलग नहीं किया जा सकता उदाहरणार्थ–'जा' से 'गया' को ले सकते हैं। वियुक्त रूप भी बहुत मिलता हैं, जैसे–हम+ने––हमने, तुम+ने––तुमने, तुम+को––तुमको आदि।

अपश्रुति के उदाहरण भी मिलते हैं,जैसे काला से काली, गरम से गरमी आदि।

इस प्रकार ज्ञात होता हैं कि हिन्दी में वियुकत रूप तथा स्थान बोध वाले संबंध तत्वों का प्राधान्य होते हुए भी लगभग सभी प्रकार के संबंध तत्व मिल जाते हैं।

<u>संबंध तत्व के प्रकार</u> :– पद रचना के अन्तर्गत उदाहरर्णाथ वाक्य में संबंध तत्वों को देखने से ज्ञात होता हैं कि किस संबंध तत्व अनेक प्रकार के होते हैं डॉ0 भोलानाथ तिवारी के अनुसार ये इस प्रकार के हैं:–

इनके अति रिक्त भी अनेक प्रकार पाए जाते हैं,किन्तु अधिक प्रचलित केवल ये ही हैं,इनका विवेचन इस प्रकार हैं–

(1) <u>शब्द का स्थान</u>:–चीनी आदि अयोगात्मक भाषाओं में वाक्य में शब्द का स्थान से ही संबंध तत्व का प्रकाशन हो जाता हैं।–

न्गो तानी–मैं तुझे मारता हूँ ।(कर्ता)

नी तान्गा–तू मुझे मारता हैं।(कर्म)

यहाँ 'न्गो' शब्द वाक्य में अपने स्थान से ही क्रमशः 'कर्ता' तथा 'कर्म' बन रहा हैं।

अंग्रेजी आदि योगात्मक कर्म की भाषाओं में भी ऐसे ही उदाहरण मिल जाते हैं।

हिन्दी–लड़डू बन रहा हैं। (कर्ता)

मै लड्डू खाता हूँ। (कर्म)

अंग्रेजी–Ram Killed Ray.(कर्ता)

Ray Killed Ram. (कर्म)

Downloaded notes from www.hindinotes.com

संस्कृत,हिन्दी तथा अंग्रेजी के कुछ समासयुक्त पदों में भी स्थान के कारण संबंध तत्व के प्रकट होने से शब्दों का विशिष्ट अर्थ होता हैं, जो उनके स्थान को बदल देने पर नहीं रहता हैं–

संस्कृत–ग्राममल्लः––ग्राम का मल्ल (पहलवान)

मल्लग्रामः––मल्लो(पहलवानों)का ग्राम

हिन्दी– कार्यगृह––कार्य का घर (स्थान)

गृह कार्य––घर का कार्य

अंग्रेजी– Gold Medal––सोने का तमगा।

Medal Gold––तमगे का सोना।

उपर्युक्त सभी पदों में शब्दों का स्थान बदल देने से उनका अर्थ भी बदल जाता हैं।

(2) <u>शून्य संबंध तत्व</u>ः–कभी–कभी कोई शब्द अपने मूलरूप में ही वाक्य में प्रयुक्त दिखाई पड़ता हैं। संस्कृत में प्रथमः विभक्ति एकवचन में प्रयुक्त सरित,मरूत,भदी,स्त्री वारि आदि संज्ञा शब्द अपने मूल में (प्रतिपादिका) ही दिखलाई पड़ते हैं। संस्कृत में इन्हें बल प्रदान करने के लिए प्रत्यय तो होता हैं क्योंकि बिना विभक्ति के शब्द का संस्कृत में प्रयोग नहीं हो सकता,किन्तु उपर्युक्त प्रयोगों में 'सु' प्रत्यय का लोप कर दिया जाता हैं। अतः ऐसे स्थलों में भाषा वैज्ञानिक शून्य विभक्ति या शून्य संबंध तत्व माने जाते हैं।

हिन्दी में पढ़,लिख,हंस,रो,गा आदि क्रियाओं के आज्ञासूचक रूप भी ऐसे ही हैं।

अंग्रेजी में Go,Do आदि का प्रयोग I,You We आदि के साथ बिना किसी संबंध तत्व के ही होता हैं।

(3) <u>स्वतंत्र शब्द</u>ः–अनेक भाषाओं में संबंध तत्व का काम स्वतंत्र शब्दों से लिया जाता हैं।

(1) संस्कृत के–इति, एवं, अर्थ आदि अत्यव शब्द ।

(2) हिन्दी के परसर्ग–ने, की, से, के लिए, से (अपादान), का, में आदि।

(3) चीनी के रिक्त शब्द–त्सि(––का), यु(––को), त्सुंग (––से) और लि (––पर) आदि।

(4) अंग्रेजी के–to,from,on,in आदि शब्द इसी प्रकार के हैं।

(4) <u>ध्वनि प्रतिस्थापन</u> ः– यह भी तीन रूपों में मिलता हैं–

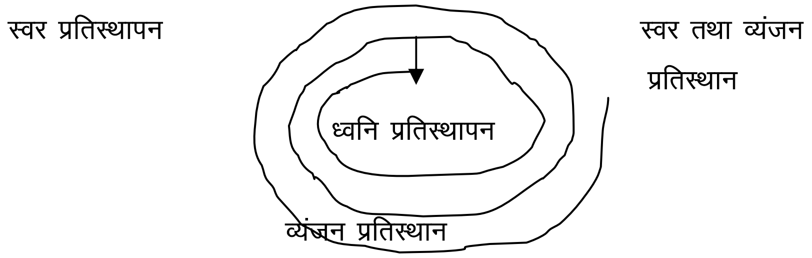

(1) <u>स्वर प्रतिस्थापन या अपश्रुति</u>ः–कभी–कभी शब्द में केवल स्वर परिवर्तन के द्वारा ही संबंध तत्व को प्रकट किया जाता हैं–

संस्कृत में 'देव से दैव' 'पुत्र से पौत्र' 'दशरथ से दशरथि' हिन्दी में लिख से लिखा, पढ़ से पढ़ा मर से मरा आदि। अंग्रेजी में Sing से Sang और Sung,Song,Come से Came, Tooth से जममजी आदि।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

अरबी आदि अन्तर्मुखी विभक्ति प्रधान भाषाएँ इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

(2) <u>व्यंजन प्रतिस्थापन</u>ः–अंग्रेजी में Advice से ।कअपेम तथा Send से Sent आदि इसी प्रकार के उदाहरण हैं।

(3) <u>स्वर तथा व्यंजन प्रतिस्थापनः–</u>संस्कृत में पच् से अपाक्त (लुड.) हिन्दी में 'जा' से 'गया' अंग्रेजी में Go से Went आदि उदाहरण इसी कोटि के हैं।

(5) <u>ध्वनि द्विरावृतिः–</u>मूल शब्द के मध्य या अन्त में कुछ ध्वनियों की द्विरावृति से भी यदा–कदा संबंध तत्व का काम लिया जाता हैं। एक अफीकी भाषा का यह उदाहरण हैं–

(इरिक)––चलना। किन्तु–

(इरिकरिक)––वह चलता हैं।

संस्कृत तथा ग्रीक में भी कुछ उदाहरण मिलते हैं। वैदिक भाषा में–

द्याविद्यवि––प्रतिदिन, यॉंहॉं द्यवि की द्विरावृति से प्रति का भाव प्रकट किया गया हैं ।

(6) <u>ध्वनि वियोजन</u>ः–इसी को ध्वनि न्यूनन भी कहा जा सकता हैं। कुछ भाषाओं में संबंध तत्व को प्रकट करने के लिए मूलशब्द की कुछ ध्वनियों को निकाल दिया जाता हैं। फ्रॉंसीसी भाषा में ऐसे उदाहरण हैं–

स्त्रीलिंग लिखित रूप – Petite

उच्चारित रूप – Pti –छोटा हैं।

पुल्लिंग लिखित रूप – Petit

उच्चारित रूप – Pti

(7) <u>उप सर्ग,पूर्वसर्ग आदि सर्ग या पूर्व प्रत्ययः–</u>कुछ भाषाओं में मूलशब्द के आदि (पूर्व) में कुछ जोड़कर संबंध तत्व का काम लिया जाता हैं। जैसे संस्कृत में भूतकाल में क्रिया के पूर्व 'अ' जोड़ा जाता हैं–अगच्छत––अपठत––पढ़ा।

अफ्रिकी बन्तु परिवार की काफिरी भाषा में यह विशेषता प्रमुख रूप से मिलती हैं– कु––सम्प्रदान कारक का चिहन ।

कुति–हमको––ति–––हम

कुनि–उनको––नि–––उन

(8) <u>मध्य सर्ग, मध्य प्रत्ययः–</u>मूल शब्द के मध्य में संबंध तत्व सूचक प्रत्यय जोड़ दिया जाता हैं। भुण्डा परिवार की भाषा संथाली में इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं।

दल––मारना

दपल––परस्पर मारना 'प' से बहुवचन को

मंक्षि––मुखिया सूचित किया जाता हैं।

मपझि––अनेक मुखिया

(9) <u>अन्तसर्ग,अंत्यप्रत्यय,विभक्ति या प्रत्ययः–ये</u> संबंध तत्वों में सर्वाधिक प्रचलित हैं। संस्कृत में 'सुपु' और 'तिड.' प्रत्यय अन्त में ही आते हैं, तथा उनसे ही अधिकांश पद बनते हैं।

संस्कृत में–

बालकः(सु)––बालकः(कर्ता एक वचन)

बालक अम्––बालकम्(कर्म,एक वचन)

Downloaded notes from www.hindinotes.com

पठ+ति(प्) पठति, इत्यादि

हिन्दी में–

हो+ता या गा––होता या होगा आदि।

अंग्रेजी में–

Loving या ly= Loving या Lovely आदि ।

(10) **ध्वनिगुणः–**

(1) मात्रा–जैसे हिन्दी में–

मिटना से मिटाना–यहाँ हस्व अ के स्थान परदीर्थ

मरना से मारना–आ होने से अर्थ बदल गया हैं।

(2) सुर–द्धारा संबंध तत्व कोसु प्रकट करने के लिए 'चीनी' आदि अयोगात्मक भाषाएं विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। वैदिक तथा ग्रीक भाषाओं में भी यह विशेषता विद्यमान थी। इन्द्रशत्रु उदाहरण में वैदिक भाषा की यहीं विशेषता ज्ञात होती हैं। शब्द में सुर का स्थान बदल जाने से यहाँ उसके संबंध तत्व में भी परिवर्तन हो जाता हैं। परिणामस्वरूप अर्थ भी भिन्न हो जाता हैं।

(3) बलाघातः–संस्कृत आदि भाषाओं में भी पहले इसका महत्व रहा आजकल अंग्रेजी मेंः–

Conduct O पर बलाघात से संसपद तथा

Conduct U पर क्रियापद माना जाता हैं।

इस प्रकार इन दस प्रकारों के अलावा अन्य प्रकार भी मिल सकते हैं खोजने पर इस में सन्देह नहीं हैं। इस प्रकार संबंध तत्वों के अनेक प्रकार विश्व की भाषाओं में प्रचलित हैं।

संबंध तत्व के कार्य :–

संबंध तत्व का कार्य भाषा में प्रधान रूप से पुरूष,वचन,काल तथा लिंग को अभिव्यक्त करना हैं। इनका परिचय इस प्रकार हैं–

(1) पुरूष संख्या में तीन होते हैं–उत्तम,मध्यम तथा अन्य। क्रिया रूपों का परिवर्तन पुरूष के अनुसार हो जाता हैं। पुरूष के प्रभाव से क्रिया में जो परिवर्तन होता हैं वह कभी तो स्वरों–व्यंजनो आदि के बदलने से हो जाता हैं और कभी विभक्ति का परिवर्तन करना पड़ता हैं। प्रथम के उदाहरण हिन्दी के 'वह जाएगा' तुम जाओगे, मैं जाऊँगा आदि में मिलते हैं और दूसरे के उदाहरण संस्कृत के भूति,भूसि,भूमि के रूप में मिल सकते हैं। अंग्रेजी में पुरूष के अनुसार क्रिया नहीं बदलती वचन से बदलती हैं। जैसे–Ieat,you eat,They eat, में eat क्रिया अपरिवर्तित रूप में रहती हैं।

(2) वचन–वचन दो होते हैं–एकवचन,बहुवचन परन्तु संस्कृत तथा लिथुआ नियन जैसी कुछ भाषाओं में द्विवचन और अफ्रीकी की कुछ भाषाओं में त्रिवचन भी मिलता हैं। वचन का संबंध संज्ञा,सर्वनाम तथा क्रिया से रहता हैं। संस्कृत जैसी प्राचीन भाषाओं में और हिन्दी जैसी आधुनिक भाषाओं में विशेषण का भी संबंध वचन से होता हैं।

बहुवचन के भाव को अभिव्यक्ति देने के लिए अधिकतर एक वचन के रूप में प्रत्यय जोड़ देते हैं। प्रत्येक संज्ञा,क्रिया तथा विशेषण में लगते हैं। हिन्दी में 'ओ' 'ए' यों, तथा या प्रत्यय लगते हैं। यथा–

संज्ञाः–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

एकवचन	बहुवचन
बच्चा	बच्चों,बच्चे
लड़की	लड़कियाँ,लड़कियों
रास्ता	रास्तों,रास्ते
घर	घरों

<u>क्रिया</u>:—

एकवचन	बहुवचन
किया	किए
गया	गए
पाया	पाए
सुना	सुने

<u>विशेषण</u>:—

एकवचन	बहुवचन
अच्छा	अच्छे
बुरा	बुरे
भला	भले
ठण्डा	ठण्डे

<u>सर्वनाम</u>:—

(बहुवचन बनने में रूप बदल जाते हैं)

एकवचन	बहुवचन
मैं	हम
मुझे	हमें
मेरे	हमारे
तू	तुम
तुझे	तुम्हें
वह	वे
उसने	उन्होंने
मुझको	हमको

कभी—कभी प्रयोगानुसार बहुवचन बन जाने के बाद भी संज्ञा में कोई प्रत्यय नहीं लगता,जैसे—मैने दस आदमी देखे।

(3) कालः—काल के तीन भेद होते हैं—भूत,वर्तमान,भविष्य।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

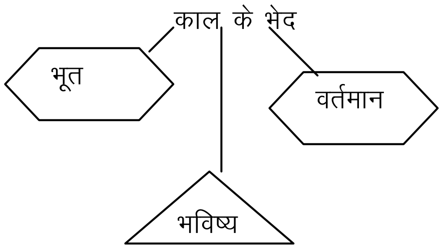

इन तीनों कालों की पूर्णता–अपूर्णता के आधार पर सामान्य अपूर्ण आदि अनेक उपभेद किए जाते हैं। क्रिया में अनेक प्रकार के संबंध तत्वों के योग के काल के विविध भेदों को प्रकट करते हैं। कहीं केवल ed को जोड़कर जैसे Talk+ed=Talked vkSj dgha Lora= शब्द जोड़कर जैसे– He Will go में Will का प्रयोग। कहीं–कहीं इतना परिवर्तन हो जाता हैं कि अर्थ तत्व तथा संबंध तत्व का भेद ज्ञान समाप्त हो जाता हैं, जैसे 'जा' से 'गया' अथवा Go से Went इसी प्रकार अनेक संबंध तत्वों के प्रयोग द्वारा काल बोध हो जाता हैं।

(4) लिंग–प्रकृतिक रूप से दो हैं, साहित्य में तीन माने गए हैं–पुल्लिंग,स्त्रीलिंग,नपुँसंकलिंक। पुल्लिंग पुरूषवाचक स्त्रीलिंग स्त्रीवाचक और नपुँसकलिंग अभयवाचक अथवा अचतेन पदार्थ वाचक माना गया हैं। सभ भाषाओं में लिंग भेद का व्यावहारिक सिद्धान्त स्वीकार नहीं किया गया हैं। उदाहरणार्थ संस्कृत में दारा (स्त्री का पर्याय) पुल्लिंग हैं और (कलत्र) नपुंसकलिंग में प्रयुक्त होता हैं।

हिन्दी में 'किताब' को नपुँसकलिंग होते हुए भी स्त्रीलिंग में रखा गया हैं। इसी प्रकार छिपकली,मक्खी,मकड़ी आदि का प्रयोग सर्वदा स्त्रीलिंग में ही होता हैं। अंग्रेजी में सूर्य को पुल्लिंग व चन्द्रमा को स्त्रीलिंग मानते हैं जबकि वास्तव में दोनो ही समान हैं।

इस प्रकार ज्ञात होता हैं कि लिंग भेद का कोई व्यावहारिक सिद्धान्त नहीं हैं। पंजाबी राजस्थानी तथा सिंधी में दो लिंग मिलते हैं। बंगाली,उड़िया,आसामी तथा बिहारी में व्याकरण संबंधी लिंग भेद नहीं मिलता हैं। भाषा में लिंग भाव व्यक्त करने के मुख्य दो ढ़ंग हैं।

(1) प्रत्यय जोड़कर। (2) स्वतंत्र शब्द जोड़कर।

प्रथम का उदाहरण हिन्दी में पुत्र से पुत्री,महैंतर से मेहतरानी आदि, अंग्रेजी में Prince से Princess,Poet से Poetess,Man से Woman आदि के रूप मिलते हैं।

स्वतंत्र शब्द जोड़कर लिंग भेद के उदाहरण अधिक नहीं मिलते। अंग्रेजी का He Goat और She Goat इसका अच्छा उदाहरण हैं।

निष्कर्षः–संबंध तत्व और अर्थ तत्व से संबंधित जो विवेचन ऊपर किया गया हैं उससे इन दोनों का संबंध और अन्तर तो स्पष्ट हो ही जाता हैं, साथ ही साथ संबंध तत्व के प्रकार और कार्यों का भी विवेचन हो जाता हैं। इस विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता हैं कि संबंध तत्व का रूप विज्ञान में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान हैं। यह एक ऐसा कार्यक्रम हैं जिसके सहारे भाषा विज्ञान में और खासकर पद विज्ञान या रूप विज्ञान को समझने में सहायता मिलती हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.3 रूप परिवर्तन की प्रमुख दिशाओं का सोदाहरण परिचय दीजिए तथा रूप परिवर्तन व ध्वनि परिवर्तन में अन्तर को समझाइये।

उत्तर. उच्चारण की दृष्टि से भाषा की इकाई 'ध्वनि' हैं और सार्थकता की दृष्टि से 'शब्द'। शब्द के दो रूप होते हैं–प्रथम के अन्तर्गत शब्द का शुद्ध मूल रूप आता हैं जो शब्दलोप में होता हैं। द्वितीय रूप वह रूप या पद कहते हैं। संस्कृत में भी वैयाकरणों ने दो रूपों की ही कल्पना की हैं। वहाँ मूल रूप को प्रतिपादित या प्रकृति कहा जाता हैं और संबंध स्थापन के लिए जोड़े जाने वाले तत्व को प्रत्यय कहा गया हैं। सीधे शब्दों में वह शब्द विभक्ति विहीन और पद विभक्ति सहित होता हैं। और यही पद रूप भी हैं। इस विवेचन के आधार पर रूप अथवा पद की परिभाषा कुछ इस प्रकार दी जा सकती हैं– वाक्य के प्रयुक्त शब्द संबंध स्थापन को रूप या पद की संज्ञा दी जाती हैं।

<u>रूप परिवर्तन व ध्वनि परिवर्तन का अन्तरः–</u> रूप विकार का संबंध शब्दों एवं पदों के परिवर्तन से होता हैं जबकि ध्वनि विकार का संबंध किसी शब्द की ध्वनियों से होता हैं। रूप विकार प्रायः सम्पूर्ण शब्द एवं पद को प्रभावित करता हैं और उसके फलस्वरूप या तो प्राचीन शब्द लुप्त हो जाता हैं या किसी नय रूप का विकास हो जाता हैं जबकि ध्वनि विकार के परिणामस्वरूप न तो कोई शब्द लुप्त होता हैं और न किसी नए पद का विकास होता हैं अपितु प्राचीन शब्द का स्परूप परिवर्तित हो जाता हैं। जैसे– अग्नि का आग बन जाना। ध्वनि ध्वनियों के लुप्त होने से आग शब्द बना हैं और इसमें अग्नि शब्द की ध्वनि भी किसी मात्रा में विद्यमान हैं। परन्तु रूप कि स्थान पर एक नया रूप ही प्रचलित हो जाता हैं। जैसे– संस्कृत के अग्नये और अग्नेः इन दोनों रूपों के स्थान पर पालि में एक अग्गिरस रूप का प्रचार होना अथवा संस्कृत के वायवे और वायोः रूपों के स्थान पर पालि में एक वाउस्स रूप का प्रयोग होना।

ध्वनिपरिवर्तन पद की केवल किसी विशिष्ट ध्वनि में होता हैं,किन्तु रूप परिवर्तन से पूरा पद ही प्रभावित होता हैं। जैसे–संस्कृत–हिन्दी

ध्वनि परिवर्तन––अतसी–––तीसी––––केवल आदि स्वर अ का लोप

रूप परिवर्तन––गो––––गाय––––पूरा पद ही बदल गया हैं।

ध्वनि परिवर्तन का क्षेप विस्तृत तथा रूप परिवर्तन का क्षेत्र संकुचित होता हैं। ध्वनि परिवर्तन के बाद पुराने रूपों का प्रचलन समाप्त हो जाता हैं, क्योंकि पुरानी ध्वनि को समाप्त करके ही नई ध्वनि आती हैं, जबकि रूप परिवर्तन होने के बाद नये रूपों कें साथ पुराने रूप भी चलते हैं।

<u>रूप परिवर्तन की दिशाएँ</u>

रूप परिवर्तन की मुख्य रूप से दो ही दिशाएँ हैं।

अधिकतर विद्वानों ने इसके दो ही दिशाएँ मानी हैं–

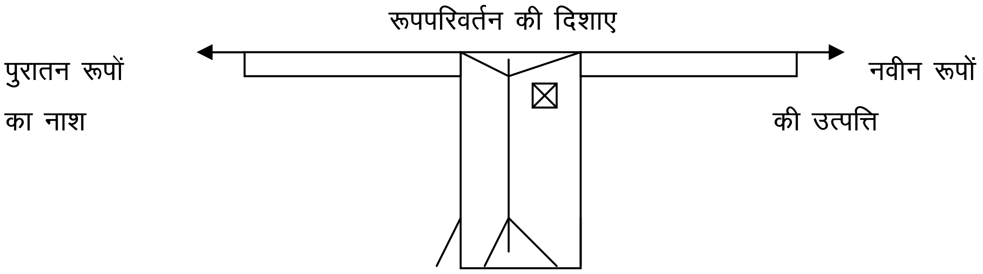

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(1) **पुरातन रूपों का नाश** :– रूप परिवर्तन या रूप विकास की प्रथम दिशा हैं–पुराने रूपों का नाश लोप या परिवर्तन। मानव का यह स्वभाव हैं कि जब किसी भाषा में पुराने तथा नए अनेक रूप एक साथ चलते रहते हैं तो पुराने तथा अपवाद रूप में प्राप्त रूपों का धीरे–धीरे विनाश हो जाता हैं। उदाहरण के लिए यदि वैदिक भाषा पर दृष्टि डालें तो हमें ज्ञात होता हैं कि उसमें शब्द रूपों तथा धातुओं में बहुत विविधता थी अर्थात् एक ही अर्थ में अनेक रूप प्रचलित थे। आगे चलकर संस्कृत में उपर्युक्त रूपों में नियम द्वारा एकरूपता आई या लाई गई जिससे अनेक वैदिक अपवाद रूपों का लोप हो गया हैं।

इसके पश्चात् संस्कृत में अकारान्त शब्दों की संख्या अधिक थी, किन्तु इकारान्त तथा उकारान्त शब्द भी थे और इन अकारान्त,इकारान्त तथा उकारान्त शब्दों के रूप भिन्न थे, किन्तु प्राकृत काल में इस भिन्नता को भी समाप्त कर दिया गया तथा इकारान्त,उकारान्त शब्दों के रूप भी अकारान्त जैसे ही होने लगे। इसके अतिरिक्त संस्कृत में चतुर्थी विभक्ति एकवचन तथा पष्ठी विभक्ति एकवचन के रूपों में पर्याप्त विभिन्नता थी, किन्तु प्राकृत काल में इन दोनों ही विभक्तियों में शब्द के रूप बिल्कुल ही समान होगा।

उदाहरणार्थ–

संस्कृत	संस्कृत	प्राकृत
चतुर्थी एकवचन	पष्ठी एकवचन	चतुर्थी–पष्ठी एकवचन
अकारान्त पुत्र––पुत्राय	पुत्रस्य	पुत्र––पुत्रस्य
इकारान्त अग्नि––अग्नये	अग्नेः	अग्नि––अग्गिरस
उकारान्त वायु––वायवे	वायोः	वाउ––वाउस्स

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट हैं कि संस्कृत की अपेक्षा प्राकृत में रूप भैविध्य और भी कम हो गया हैं।

इसके आगे अपभ्रंशकाल तथा आधुनिककाल में भी यह प्रवृति चलती रही। अपभ्रंश में पुराने (संस्कृत–प्राकृत) के आठ कारक रूपों के स्थान पर केवल तीन ही प्रकार के कारक रूप मिलते हैं अर्थात्–

पुरातन रूप–(1) कर्ता (2) कर्म तथा (3) सम्बोधन (4) करण तथा (5) अधिकरण (6) सम्प्रदान (7) अपादान तथा (8) संबंध

आगे चलकर हिन्दी में केवल दो ही विभक्तियाँ रह गई हैं–

(1) अविकारी	(2) विकारी
मैं	मुझ,मुझे,मेरा,मेरे
हम	हमें,हमारा,हमारे
तू	तुझ,तुझे,तेरा,तेरे
वह	उस,उसे,उसका,उसके
वे	उन,उन्हें,उनका,उनके
लड़का	लड़के,लड़को
लड़की	लड़कियाँ,लड़कियों आदि

उपर्युक्त भारतीय भाषाओं की भाँति ही अंग्रेजी में भी पहले की अपेक्षा रूपों में कमी हुई हैं। अंग्रेजी की बली क्रियाओं के रूप बिना किसी नियम के चलने के कारण स्मरण रखने में कठिन होते हैं जैसे–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

Go-Went-Gone

Sing-Sang-Sung

बली क्रियाओं की तुलना में निर्बल (Weak) क्रियाओं के रूप एक नियम से लगाकर चलते हैं। अतः उन्हें स्मरण रखना सरल होता हैं जैसे– Call-Called-Called परिणामस्वरूप अंग्रेजी मे बली क्रियाओं के रूपों का स्थान निर्बल क्रिया के रूप लेते जा रहें हैं।

पुरातन तीन लिंगो के स्थान पर दो लिंग–पुल्लिंग स्त्रीलिंग तथा तीन वचनों के स्थान पर दो वचन–एक वचन तथा बहुवचन के प्रयोग के कारण भी अनेक रूपों का लोप हो गया हैं।

(2) <u>नए रूपों की उत्पति</u> :– रूप परिवर्तन की दूसरी दशा हैं–नए रूपों की उत्पति या आगम। अन्य क्षेत्रों की भांति भाषा में भी क्रिया प्रतिक्रिया चलती रहती हैं–रूप परिवर्तन के क्षेत्र में भी जब रूपों में बहुत अधिक एकरूपता आ जाती हैं तो रूपों के प्रयोग में भ्रम होने लगता हैं तथा अर्थ में भी अनिश्चित्ता तथा सन्देह उत्पन्न हो जाता हैं। तब प्रतिक्रियास्वरूप रूपों की एकरूपता को समाप्त करके उनमें अनेकरूपता लाने का प्रयत्न होने लगता हैं। नवीनता का आकर्षण भी इसमें सहायक होता हैं उदाहरण के लिए संस्कृत में आकारान्त स्त्री–लिंग ''लता'' शब्द के एक वचन के रूप पंचमी तथा पष्ठी विभक्ति के अतिरिक्त शेष विभक्तियों में भिन्न–भिन्न थे, किन्तु पालि (प्राकृतकाल) में तृतीया विभक्ति से लेकर सप्तमी विभक्ति तक सब रूप एक जैसे ही हो गए:–

'लता' एकवचन

तृतीय–लतया	लताय
चतुर्थी–लतायै	लताय
पंचमी–लतायः	लताय
षष्ठी–लतायाः	लताय
सप्तमी–लतायाम्	लताय

उपर्युक्त 'पालि' के रूपों में से किसी एक की भाषा में प्रयुक्त हुआ देखकर यह समझना कटिन हैं कि वह कौनसी विभक्ति का रूप हैं तथा कौन से कारक संबंध को प्रकट कर रहा हैं। अतः अर्थ की प्रतीति में कठिनाई का आना स्वाभाविक हो गया। पालि के बाद की प्राकृत में तथा अपभ्रंश में इस प्रवृति का विकास और भी अधिक हुआ हैं।

ऐसी दशा में अस्पष्टता को दूर करने की दिशा में स्वाभाविक प्रतिक्रिया हुई तथा बाद के अपभ्रंश काल में विभिन्न कारकों के अर्थ प्रकट करने के लिए मूल शब्दों के साथ सहायक शब्दों (प्रत्ययों) का व्यवहार होने लगा। उदाहरण के लिए षष्ठी में 'लताय' के स्थान पर 'लता' करके तथा सप्तमी में यही सहायक शब्द आधुनिक हिन्दी में परसर्गों (ने,को,से, का) में विकसित हो गए हैं।

इसी प्रकार क्रिया रूपों में भी भ्रम उत्पन्न होने लगा था। 'पालि' में पंच धातु के लुड लकार (सामान्य भूत) के एकवचन में,तीनों पुरूषों में एक से ही रूपों को देखकर इनमें भेद करना कठिन हैं।

प्रथम पुरूष–अपचि

मध्यम पुरूष–अपचि

उत्तम पुरूष–अपचि

Downloaded notes from www.hindinotes.com

अतः इस भ्रम को दूर करने के लिए तिङन्त रूपों के स्थानों पर कृदन्त रूपों का व्यवहार होने लगा। आगे चलकर सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति की स्पष्टता के लिए कृदन्तों के साथ सहायक संयुक्त क्रियाएँ भी जोड़ी जाने लगी।

क्रिया रूपों का विकासः–संस्कृत,अंग्रेजी,बंगला आदि कई भाषाओं में क्रियाओं के अन्तर्गत संज्ञा के लिंगानुसार परिवर्तन नहीं होते, वहाँ पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग में एक ही तरह की क्रिया का प्रयोग होता हैं। जैसे–

संस्कृत–मोहनः गच्छति (पुल्लिंग)

सीता गच्छति (स्त्रीलिंग)

अंग्रेजी–Mohan goen (पुल्लिंग)

Sita goes (स्त्रीलिंग)

बंगला–मोहन जाच्चे (पुल्लिंग)

सीता जाच्चे (स्त्रीलिंग)

परन्तु हिन्दी में क्रिया संबंधी यह न्यूनतम विकास हुआ हैं कि यहाँ संज्ञा के लिंगानुसार क्रिया में भी लिंगों का प्रयोग होता हैं और लिंगानुसार क्रिया परिवर्तित होती रहती हैं। जैसे–

मोहन जाता हैं। (पुल्लिंग)

सीता जाती हैं। (स्त्रीलिंग)

पलक फड़कता हैं। (पुल्लिंग)

नाक बहती हैं। (स्त्रीलिंग)

हाथ चलता हैं। (पुल्लिंग)

अंगुलियाँ चलती हैं। (स्त्रीलिंग)

उपर्युक्त उदाहरणें में मोहन पलक और हाथ पुल्लिंग हैं। अतएव उनके साथ क्रमशः जाता हैं,फड़कता हैं,और चलता हैं क्रिया का प्रयोग भी पुल्लिंग मे हुआ। सीता नाक और अंगुलिया स्त्रीलिंग हैं, अतएव इनके साथ क्रमशः जाती हैं, बहती हैं और चलती हैं क्रियाओं के प्रयोग भी स्त्रीलिंग में हुए।

इससे, संस्कृत में तो क्रियाओं के प्रायः संश्लिष्ट रूप ही अधिक प्रचलित थे। जैसे–गच्छति,पठति,अस्ति,ददाति,दथाति आदि। इस प्रकार संस्कृत की सश्लिष्ट क्रियाएँ हिन्दी में आकार विश्लिष्ट रूप में विकसित हो गई जैसे–

संस्कृत	हिन्दी
अहं पठासि	मैं पढ़ता हूँ।
सं: पठति	वह पढ़ता हैं।
ब्वं पठसि	तू पढ़ता हैं।

हिन्दी की क्रियाओं में यह वियोगावस्था वर्तमान काल तथा भूतकाल की क्रियाओं में अत्यधिक पाई जाती हैं। जैसे–

वर्तमान काल	भूतकाल
राम जाता हैं।	राम जाता था।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

मोहन खाता हैं। मोहन खाता था।

सीता गाती हैं। सीता गाती थी।

उपर्युक्त उदाहरणों में जाता,खाता और गाती तो कृदन्त रूप हैं वर्तमन एवं भूतकाल में समान रूप से प्रयुक्त हुए हैं किन्तु 'हैं' सहायक क्रिया वर्तमान काल की द्योतक हैं तथा 'था' 'थी' सहायक क्रियाएं भूतकाल की द्योतक हैं।

तीसरे, संस्कृत में विधि, आशी और क्रिया पति के लिए पृथक–पृथक क्रियाओं का प्रयोग होता था परन्तु हिन्दी में एक ही क्रिया उक्त तीनों भावों की व्यक्त करने के लिए विकसित हुई हैं। जिसके फलस्वरूप अब हिन्दी में क्रिया के अधिक रूपों की आवश्यकता नहीं पड़ती जैसे–

वह गुरूजनों का आदर करे (विधि)

पुत्र सुखी रहैं (आशीः)

वह घर जाए (आज्ञा)

यदि वह रात–दिन पढ़े (क्रियातिपत्ति)

अन्यरूपों का विकासः–भारतीय आर्थ भाषाओं में जहाँ संज्ञा,सर्वनाम,विशेषण और क्रिया के रूपों का नवीनतम विकास हुआ हैं, वहाँ इनके अतिरिक्त और भी कुछ नए–नए रूप विकसित हुए हैं। जैसे–बील का मत हैं कि–

''अवयव–कृदन्त कर्म वाक्य और विशेषण सम्पूर्ण भारोपीय परिवार की भाषाओं'' में नवीन विकास के अन्तर्गत आते हैं''।

जैसे अंग्रेजी में–

1. To err is human?
2. birds love to sing.
3. To respect our parents is our duty.
4. He refused to obey the order.
5. Many men desire to make money quickly.

इसी तरह हिन्दी में भी कतिपय अत्यव कृदन्तों का प्रयोग मिल जाता हैं क्योंकि यहाँ भी कुछ क्रियाएँ संज्ञा के रूप में प्रयुक्त होने लगी हैं। जैसे–

1. घूमना एक सुन्दर व्यायाम हैं।
2. अधिक बढ़ना हानिप्रद होता हैं।
3. सोना स्वास्थ्य के लिए हितकर होता हैं।
4. पढ़ना एक गुण हैं।
5. नाचना एक कला हैं।

इन रूप परिवर्तन की दिशाओं के अलावा डॉ0 भोलानाथ तिवारी ने भी रूप परिवर्तन की 9 दिशाएँ बताई हैं–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

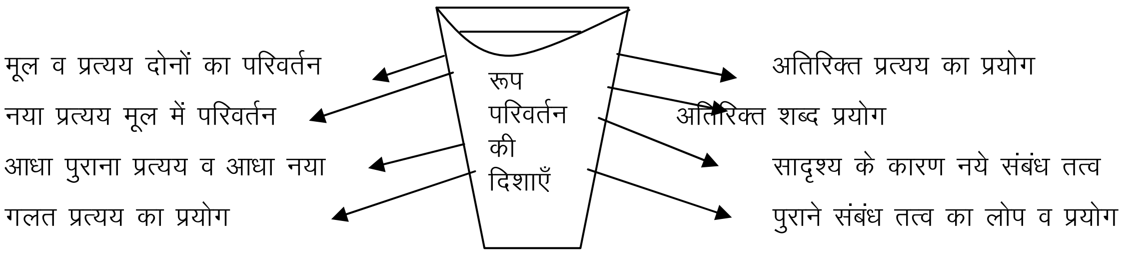

(1) <u>पुराने संबंध तत्व का लोप तथा नये का प्रयोग</u>ः—ध्वनि परिवर्तन से प्रायः पुराने संबंध तत्व जब लुप्त हैं। जाते हैं तो अर्थ की स्पष्टता के लिए नये संबंध तत्व जोड़े जाने लगते हैं जैसे—संस्कृत रामः,रामं,रामस्य,रामे आदि के स्थान पर आज रामने,राम का,राम में, आदि का प्रयोग इसी का उदाहरण हैं।

(2) <u>सादृश्य के कारण नये संबंधतत्व के साथ नये रूप</u>ः—संस्कृत अग्नेः का अग्ने होना चाहिए था, किन्तु प्राकृत में मिलता हैं अग्गिस। चला,पढ़ा आदि के सादृश्य पर क्रिया के स्थान पर करा अथवा चलिए,पढ़िए आदि के सादृश्य पर कीजिए के स्थान पर करिए आदि।

(3) <u>अतिरिक्त प्रत्यय का प्रयोग</u>ः—अर्थात् एक प्रत्यय के रहते दूसरे का भी प्रयोग जवाहरात,जवाहरातों। यहाँ बहुवचन प्रत्यय, ''आत्'' के रहते ''ओ'' भी प्रयुक्त हुआ हैं। अनेकों मे ''ओ'' प्रत्यय अतिरिक्त हैं जो वस्तुतः वही काम कर रहा हैं जो ''आत'' पर असल ''मैं'' या दर भी अतिरिक्त हैं।

(4) <u>अतिरिक्त शब्द प्रयोग</u>ः—सर्वश्रेष्ठ,सर्वोत्तम ऐसे ही तम बोधक रूप हैं।

(5) <u>गलत प्रत्यय का प्रयोग</u>ः—'इद्रियों' के स्थान पर 'इद्रिया' रूप इसी प्रकार का हैं।

(6) <u>नया प्रत्ययः—</u>प्रभावशाली के स्थान पर प्रभावी। पहले प्रभावशाली ही चलता था।

(7) <u>आधा पुराना प्रत्यय तथा आधा नया</u>ः—छठा के स्थान पर छठवाँ में 'छ' मूल शब्द हैं। 'छ' छठा का पुराना प्रत्यय हैं तथा वाँ,पाँचवा,सातवाँ आदि के सादृश्य पर आया नया प्रत्यय हैं।

(8) <u>मूल में परिवर्तन</u>ः—इससे भी रूप परिवर्तन होता हैं। मुझको के स्थान पर मेरे को अथवा तुझको के स्थान पर तेरे को में प्रत्यय वहीं हैं, केवल मूल बदल गया हैं।

(9) <u>मूल और प्रत्यय दोनों का परिवर्तन</u>ः—ऐसा कम होता हैं। अंग्रेजी में Go का भूतकाल Went इसी प्रकार का हैं।

<u>निष्कर्ष</u>ः—संक्षेप रूपों में विद्यमान एकता के स्थान पर अनेकता तथा विविधता लाने के लिए भाषा में अनेक नवीन रूपों की उत्पत्ति हुई हैं ।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.1 वाक्य किसे कहते हैं ? परिभाषा देते हुए वाक्य के अनिवार्य तत्वों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर. वाक्य विज्ञान भाषा विज्ञान की वह शाखा हैं जिससे पदों के पारस्परिक सम्बन्ध का विचार किया जाता हैं। वाक्य को प्रायः लोग सार्थक शब्दों का समूह मानते हैं जो भाव को प्रकट करने की दृष्टि से अपने आप में पूर्ण हों। कोषों तथा व्याकरणों में भी वाक्य की इसी प्रकार की परिभाषा मिलती हैं। यूरोप में इस दृष्टि से प्रथम प्रयास थ्रैक्स का हैं और भारत में पंतजलि का नाम लिया जा सकता हैं।

<u>परिभाषा</u> :– परिभाषा का कार्य पर्याप्त कठिन होता हैं किन्तु मानव मन फिर भी हर स्थिति में परिभाषा की तलाश करता ही हैं। 150 ई.पू. पंतजलि ने वाक्य की परिभाषा करते हुए कहा कि–

''पूर्ण अर्थ की प्रतीति कराने वाला शब्द समूह ही वाक्य हैं''।

भर्तृहरि ने अपने ग्रंथ ''वाक्यपदीय'' में अपने पूर्ववर्ती न्यायवादी आचायों के मतों को संकलित करते हुए, उनके द्वारा मान्य वाक्य की निम्नलिखित आठ परिभाषाएँ दी हैं।

(1) क्रियापद को वाक्य कहते हैं।

(2) क्रियापद सहित कारकादि के समूह को वाक्य कहते हैं।

(3) क्रिया तथा कारकादि समूह में रहने वाली 'जाति' को वाक्य कहते हैं।

(4) क्रियादि समूह रूप एक अखण्ड शब्द (स्फोट) को वाक्य कहते हैं।

(5) क्रियादि पदों के विशेष क्रम को वाक्य कहते हैं।

(6) क्रियादि के बुद्धिगत अखण्ड समन्वय को वाक्य कहते हैं।

(7) आकांक्षा युक्त प्रथम पद को ही वाक्य कहते हैं।

(8) आकांक्षा युक्त पृथक्–पृथक् सभी पदों को वाक्य कहते हैं।

आख्यातशब्दः संघातो जातिः संघातवर्तिनी।
एकोअनवयः शब्दः कमो बुदध्यनुसंहति।।

काव्यायन एवं पतंजलि ने भारत के प्राचीन आचार्यों के वाक्य संबंधी विभिन्न मतों का संकलन करते हुए वाक्य के चार लक्षण बताये हैं–

(1) क्रिया,अव्यव,कारक और विशेषण पद जहाँ एकत्र हों उसे वाक्य कहते हैं।

(2) जहाँ उक्त चारों पदों के साथ–साथ क्रिया विशेषण भी सम्मिलित हो तो वाक्य मानना चाहिए ।

(3) जहाँ विशेषण सहित क्रिया हो, वहीं वाक्य होता हैं।

(4) जहाँ तक क्रिया हो, उसी को वाक्य कहते हैं, जैसे–'बोलो'। यहाँ बोलो एक पूरा वाक्य हैं।

न्यायभाष्कर वात्स्यायन के विचारनुसार–

''साकाँक्ष पदों के समूह को वाक्य कहते हैं।''

आचार्य विश्वनाथ ने लिखा हैं कि–

''योग्यता,आकाँक्षा और आशक्ति से युक्त पदों के समूह को वाक्य कहते हैं।

अमरकोशकार अमर सिंह ने लिखा हैं कि–

''सुबन्त या तिड़न्त पदों के समूह को अथवा कारक युक्त क्रिया को वाक्य कहते हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

''सुपतिड़न्तचयो वाक्य क्रिया वा कारकानित्ता।''

माधव प्रसाद पाठक ने वाक्य को इस प्रकार समझाया हैं–

''वाक्य उस पद समूह को कहते हैं जो श्रोता के प्रति वक्ता के वक्तत्यभाव के बोधन में समर्थ हों।''

डॉ0 भोलानाथ तिवारी कृत परिभाषा–

''वाक्य पूरी बात की तुलना में अपूर्ण होते हुए भी अपने आप में पूर्ण,लघुत्तम स्वतंत्र भाषिक इकाई हैं।''

डॉ0 अम्बाप्रसाद 'सुमन' कृत परिभाषा–

''वाक्य भाषा की लघुतम पूर्ण स्वतंत्र इकाई हैं, जो विचार की ध्वनिमयी सार्थक अभिव्यक्ति हैं। इस ध्वनिमयी सार्थक अभिव्यक्ति में शब्द–समूह भी हो सकता हैं और एक शब्द भी।''

डॉ0 देवेन्द्रनाथ शर्मा कृत परिभाषा–

''भाषा की न्यूनतम पूर्ण सार्थक इकाई वाक्य ही हैं।''

इसके अतिरिक्त प्रचीन आचार्यों में से मीमांसानूत्रकार महर्षि जैमिनी का मत हैं कि एकार्थक पदों के समूह को वाक्य कहते हैं–

''अथैकत्वादेकं वाक्यम्।

एकार्थः पद्समूहो वाक्यम्।''

वैयाकरणों में से पाणिनि का विचार हैं कि–

''वाक्य में केवल एक तिड्न्त पद या एक क्रिया ही नहीं होती अपितु एक से अधिक क्रियाएँ भी हो सकती हैं जैसे–पचति भवति अर्थात् पाक होता हैं। इस वाक्य में दो क्रियाओं का प्रयोग हुआ हैं।

उपर्युक्त विवेचन से वाक्य की परिभाषा इस प्रकार होगी–

''व्याकरणिक दृष्टि से लघुतम पूर्ण कथन वाक्य हैं।''

अतः हम निष्कर्ष रूप में कहैंगे कि–

(1) वाक्य पूर्ण होता हैं।

(2) वाक्य शब्दों का समूह हैं, अथवा वाक्य में एक से अधिक शब्द होते हैं।

काम चलाऊ परिभाषा कुछ इस प्रकार की हो सकती हैं–

''वाक्य भाषा की वह सहज इकाई हैं जिसमें एक या अधिक शब्द (पद) होते हैं तथा जो अर्थ की दृष्टि से पूर्ण हो या अपूर्ण व्याकरणिक दृष्टि से अपने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कम से कम एक समापिका क्रिया अवश्य होती हैं।''

इस परिभाषा में निम्नांकित बातें ध्यान देने योग्य हैं–

(क) वाक्य भाषा की सहज इकाई हैं।

(ख) वाक्य में एक शब्द भी हो सकता हैं और उससे अधिक भी।

(ग) वाक्य में अर्थ की पूर्णता हो सकती हैं और नहीं भी।

(घ) वाक्य व्याकरणिक दृष्टि से पूर्ण होता हैं।

(ड.) व्याकरणिक पूर्णता कभी–कभी संदर्भ पर भी निर्भर करती हैं।

(च) वाक्य में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कम से कम एक समापिका क्रिया या भाव अवश्य होता हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि विविध संज्ञा,विशेषण,क्रिया विशेषण आदि से रहित भी वाक्य होता हैं। अथवा एक पद का भी वाक्य होता हैं। इस दृष्टि से वाक्य का लक्षण यह हो सकता हैं कि जो पद या पद समूह अभीष्ट अर्थ की प्रतीत कराने में समर्थ हो उसे वाक्य कहते हैं।

वाक्य की आवश्यकताएँ:–

वाक्य का निर्माण कुछ मूलभूत आवश्यकताओं के आधार पर होता हैं। आभाहतान्वयवाद के आधार पर पदों के योग से वाक्य की निष्पति होती हैं। कुछ लोगों ने वाक्य के लिए तीन चीजों को आवश्यक माना हैं–आकाँक्षा,योग्यता और आसक्ति। भरतीय दृष्टि से वाक्य की आवश्यकतएँ पाँच हैं–

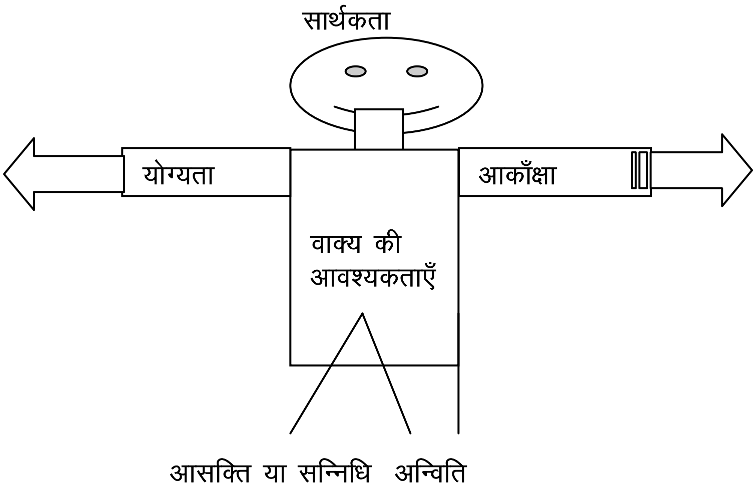

(1) सार्थकता :– सार्थकता का अर्थ हैं सार्थक शब्दों का प्रयोग या समूह। कहने का तात्पर्य हैं कि वाक्य में ऐसे शब्दों का प्रयोग होना चाहिए जो अर्थवान हो,तथा अभीष्ट अर्थ को सही रूप में व्यक्त करने की क्षमता रखते हों।

(2) योग्यता :– योग्यता का अर्थ हैं पदों के परस्पर अन्वय में बाधा का अभाव । डॉ0 देवेन्द्रनाथ की दृष्टि में बाधा दो प्रकार से पड़ सकती हैं–अर्थ या प्रतीति की दृष्टि से और अन्वय की दृष्टि से। एक का संबंध मन से हैं और दूसरे का व्याकरण से उदाहरणार्थः–

लड्डू से पेड़ उगता हैं।

किताब से आग निकलती हैं।

इन वाक्यों में प्रतिमूलक बाधा हैं क्योंकि न तो लड्डू से पेड़ उग सकता हैं और न किताब से आग निकल सकती हैं। वैसे व्याकरण ही दृष्टि से संजोये गये हैं। वे व्याकरण की दृष्टि शुद्ध हैं। इसके साथ ही इनमें अर्थगत दोष हैं। इनसे कोई सटीक अर्थ नहीं निकलता हैं। अन्वय के आधार पर बाधा वहाँ होती हैं जहाँ व्याकरण सम्मत नियमों के आधार पर पदों का विन्यास नहीं होता हैं। उदाहरणार्थ इन वाक्यों को लीजिए योग्यता का अभाव हैं–

(1) लड़का रोती हैं। (लिंग विषयक अयोग्यता)

(2) राम ने पढ़ता हैं। (विभक्ति विषयक अयोग्यता)

ये वाक्य सार्थक हैं किन्तु अर्थ प्रेषित करने में अयोग्य हैं। इसी से अन्वय विषयक योग्यता की कमी हो गई हैं। पदों की अन्विति में लिंग,वचन,पुरूष,विभक्ति आदि ध्यान अपेक्षित होता हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(3) <u>आसक्ति या सन्निधि</u> :– इसका अर्थ हैं नैकट्य या निकटता वाक्य में जो भी पद प्रयोग में लाये जाये वे देश और काल दोनों ही दृष्टियों से परस्पर निकट होने चाहिए यदि वे दूर पड़ेगें तो अर्थ सप्रेषण में बाधा होगी। 'राम' कहने के तुरन्त बाद पढ़ता 'हैं' का प्रयोग और उच्चारण होना चाहिए, यही नैकट्य या समीपता या आसक्ति हैं। दूसरे प्रकार की आसक्ति वह हैं जिसमें पद उच्चारित होते हैं किन्तु तुरन्त एक दूसरे से दूर पड़ जाते हैं। यथा–

लड़का सूर्य दौड़ता हैं, खिलता हैं, फूल पढ़ता हैं चमकता हैं– पदों के सार्थक होने पर भी आसक्ति का क्रम बाधित हैं। अतः बोध नहीं हो पाता हैं। इनका सही रूप होगा लड़का दौड़ता हैं, सूर्य चमकता हैं, फूल खिलता हैं, आदि इस प्रकार स्पष्ट हैं कि आसक्ति,योग्यता और सार्थकता वाक्य के लिए परमावश्यक हैं। कभी–कभी ऐसे वाक्य भी होते हैं–

बाध। साँप। भागो। बचाओ।

इनमें अकाँक्षा की निवृति एक पद से ही हो जाती हैं। पद में आसक्ति की उपेक्षा होती हैं, इसी से अन्वय और अर्थ मैं कठिनाई होती हैं।

(4) <u>आकाँक्षा</u> :– आकाँक्षा का अर्थ हैं, अर्थ की अपूर्णता यानी जानने की इच्छा। वाक्य में इतनी शक्ति होनी चाहिए कि वह पूरा अर्थ दे। ऐसा हो जिसे सुनकर कुछ भी जानने की इच्छा न हो। केवल 'लड़का' शब्द सुनने से श्रोता को संतोष नहीं होता हैं, वह यह जानने की इच्छा रखता हैं कि लड़के के संबंध में क्या कहना अभीष्ट हैं। इससे सिद्ध होता हैं कि आकाँक्षा एक प्रकार की मानसिक स्थिति हैं जिसका महत्व श्रोता की दृष्टि से हैं।

(5) <u>अन्विति</u> :– अन्विति का अर्थ हैं वाक्यगत एकरूपता व्याकरण की दृष्टि से हो। यह एकरूपता प्रायः वचन कारक,लिंग और पुरूष आदि की दृष्टि से होती हैं। अतः वाक्य की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता अन्विति हैं। इसके बिना वाक्य में कोई प्रयोजनीयता और एकरूपता नहीं आ सकती हैं।

आधुनिक भाषा विज्ञान में एक आवश्यक तत्व और माना हैं–

(6) <u>क्रम</u> :– इससे तात्पर्य हैं–पद्क्रम। इस संबंध में भी प्रत्येक भाषा में अपने नियम होते हैं। उदाहरणार्थः–

(1) संस्कृत में–रामः पुस्तकम् पठति। अथवा

पठति रामः पुस्तकम् । आदि।

संस्कृत में सामान्यतया वाक्य में पदों का क्रम निश्चित नहीं होता।

(2) हिन्दी में–वाक्य में–कर्ता,कर्म और क्रिया के क्रम से पदों को रखा जाता हैं जैसे–''राम आम खाता हैं।'' इस वाक्य में पदों का क्रम बदलने से ''आम राम खाता हैं।'' यह वाक्य नहीं होगा।

(3) अंग्रेजी में–वाक्य में कर्ता,क्रिया और कर्म के क्रम से पदों को रखा जाता हैं, जैसे–

''Ram goes to school''

अतः पदक्रम का पालन भी वाक्य के लिए आवश्यक हैं। उपर्युक्त छः आवश्यक तत्वों के अतिरिक्त लघुत्तम को भी वाक्य का सातवाँ तत्व स्वीकार किया गया हैं। इसके अनुसार अर्थ की अधिकाधिक पूर्णता के साथ ही वाक्य को लघु से लघु भी होना चाहिए।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.2 वाक्य के प्रकारों–भेदों का सोदाहरण विवेचन करते हुए वाक्य परिवर्तनों के कारणों का विवेचन कीजिए।

उत्तर. भाषा में प्रयुक्त वाक्यों का वर्गीकरण अनेक आधारों पर किया जा सकता हैं, जिनमें से निम्नलिखित चार आधार प्रमुख हैं–

<u>वाक्य के भेद या प्रकार–</u>

(1) रचना के अनुसार–वाक्य तीन प्रकार के होते हैं।

(1) साधारण या सरल वाक्य–जिस वाक्य में एक उद्देश्य और एक विधेय रहता हैं उसे साधारण वाक्य कहते हैं। जैसे–राम पुस्तक पढ़ता हैं।

कि सान खेत जोतता हैं।

(2) मिश्र वाक्य–जिस वाक्य में एक प्रधान साधारण उपवाक्य के अतिरिक्त इसके आक्षित कई सहायक उपवाक्य हों उसे मिश्र वाक्य कहते हैं। जैसे–यह सभी जानते हैं कि दिनमें सूरज और रात में चाँद निकलता हैं। इस वाक्य को हम मिश्र वाक्य कहते हैं क्योंकि इसमें 'यह सभी जानते हैं' प्रधान साधारण उपवाक्य हैं और 'दिन में सूरज और रात में चाँद निकलता हैं, आश्रित उपवाक्य हैं।

(3) संयुक्त वाक्य–जिस वाक्य में दो या दो से अधिक समानाधिकरण वाक्य हों और वे एक दूसरे के आश्रित न होकर संयोजक अव्ययों द्वारा जुड़े हुए हो। उसे संयुक्त वाक्य कहते हैं। जैसे–राम घर चला गया और कृष्ण उसके स्थान पर आ गया। यह संयुक्त वाक्य हैं क्योंकि इसमें दो समानाधिकार वाक्य जुड़े हुए हैं।

(4) उपवाक्य–जब दो या अधिक सरल वाक्यों को मिलाकर एक वाक्य बना देते हैं तो उसे एक वाक्य में जो वाक्य मिले होते हैं, उन्हें उपवाक्य कहते हैं।

उपवाक्य दो प्रकार के होते हैं।

(क) आश्रित उपवाक्य–जो प्रधान न होकर गौण अथवा दूसरे के आश्रित हो।

(ख) प्रधान उपवाक्य–किसी वाक्य में जो उपवाक्य आश्रित या गौण न होकर प्रधान हों। उपर्युक्त् वाक्यों में आश्रित उपवाक्य के अतिरिक्त जो उपवाक्य हैं, प्रधान उपवाक्य हैं–वह छात्र उत्तीर्ण हो जाएगा, जो परिश्रम करेगा।

(2) <u>अर्थ के अनुसार वाक्य के भेद</u> :– अर्थ की दृष्टि से वाक्य के प्रभेद होते हैं जो उपर्युक्त साधारण मिश्र और संयुक्त व उपवाक्य में प्रयुक्त हो सकते हैं। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार हैं।–

(1) विधानात्मक वाक्य–जिस वाक्य में किसी बात का होना पाया जाए उसे विधानात्मक वाक्य कहते हैं–

(क) साधारण–राम पुस्तक पढ़ता हैं।

(ख) मिश्र वाक्स–जब राजा ने नगर में प्रवेश किया तो नगर में आनन्द की लहर दौड़ पड़ी ।

(2) निषेधात्मक वाक्य–जिस वाक्य से किसी बात का निषेध पाया जाए उसे निषेधात्मक वाक्य कहते हैं।

(क) साधारण वाक्य–मैंने आज भोजन नहीं किया।

(ख) मिश्र–वह नहीं जानता कि कौन अपराधी हैं।

(ग) संयुक्त–श्रेष्ठ मनुष्य कभी कसी को नहीं सताते और न किसी को अपशब्द ही कहते हैं।

(3) प्रश्नवाचन वाक्य–जिनसे प्रश्न का बोध हो, उन्हें प्रश्नावाचक वाक्य कहते हैं–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(क) साधारण–आप कहाँ जा रहैं हों ?

(ख) मिश्र–क्या आपको विदित हैं कि कलिदास की कौन–कौन सी पुस्तकें हैं।

(ग) संयुक्त–प्रसाद कौन थे और उन्होंने कौन–कौन सग्रंथ रचे ?

(4) आदेशात्मक या आज्ञार्थक वाक्य–जिनमें आज्ञा या आदेश का भाव हो।

(क) साधारण वाक्य–बड़ों का कहना मानो।

(ख) मिश्र–सभी काम समय पर करो,जिससे किसी को बुरे न लगो।

(ग) संयुक्त–घर जाओ और मेरी पुस्तक लाओ।

(5) विस्मयात्मक वाक्य–जिससे आश्चर्य का बोध हो।

(क) साधारण–क्या ही अद्भूत घटना हैं।

(ख) मिश्र–जो काम आपने किया वह तो क्या ही अनोखा हैं।

(ग) संयुक्त–तुमने इतना अच्छा काम किया और मुझे सूचना भी नहीं दी।

(6) इच्छाबोधक वाक्य–जिन वाक्यों से इच्छा या आर्शीवादात्मक का भाव सूचित हो।

(क) साधारण–आपकी इच्छाएँ पूर्ण हों।

(ख) मिश्र–ईश्वर कृपा करें आप दीर्धजीवी हों।

(ग) संयुक्त–आप सुखी रहैं और देश सेवा में लगे रहैं।

(7) सन्देह सूचक वाक्य–जिन से किसी प्रकार का सन्देह हो।

(क) साधारण–शायद वह आज आ जाए।

(ख) मिश्र–जो पत्र मिला हैं वह सम्भवतः उस लड़के ने लिखा होगा।

(ग) संयुक्त–नौकर वहाँ से चला होगा और सिपाही वहाँ पहुँचा होगा।

(8) संकेतार्थ वाक्य–जिनमें कोई शर्त का भाव हो।

''यदि राम परिश्रम करता तो अवश्य परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता।''

(9) संसयात्मक–वह आयेगा कि नहीं!

(3) <u>क्रिया के अनुसार</u> :– प्रायः तो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से क्रिया सभी भाषाओं के वाक्यों में पायी जाती हैं, किन्तु संस्कृत लैटिन आदि कुछ प्राचीन तथा रूसी,बंगला आदि कुछ नवीन भाषाओं में, बिना क्रिया के वाक्य भी मिलते हैं जिसके आधार पर वाक्यों के दो प्रकार हैं–

(1) क्रियायुक्त वाक्य–प्रायः सभी वाक्य इसी कोटि के होते हैं।

(2) क्रिया रहित वाक्य–जैसे संस्कृत में तर्पणम् ! पिण्डीम्! आदि जैसे समाचार पत्रों के शीर्षकों,लोकोक्तियों,विज्ञापनों आदि में प्रायः क्रिया विहीन वाक्य का ही प्रयोग होता हैं।

(4) <u>आकृति मूलक वाक्य</u> :– आकृति से तात्पर्य हैं–रूपतत्व या संबंध तत्व। भाषाओं के आकृतिक वर्गीकरण में भी इसी को ध्यान में रखा जाता हैं। आकृति के आधार पर वाक्यों के चार वर्ग हैं।–

(1) अयोगात्मक वाक्य–यहाँ आयोग से तात्पर्य–प्रकृति (मूल शब्द) के साथ संबंध तत्व के योग का अभाव। ऐसे वाक्यों में पद पृथकः रहते हैं। चीनी आदि एकाक्षर परिवार की अयोगात्मक भाषाओं में वाक्य पूर्णतया इसी प्रकार के होते हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

संक्षेप में, संयोगात्मक भाषाओं की अपेक्षा वियोगात्मक भाषाओं में इस प्रकार के वाक्य अधिक मिलते हैं। अयोगात्मक वाक्यों में पदक्रम या वाक्य में पद के स्थान का विशेष महत्व हैं, जैसे–

''न्गो ता नी'' (मैं तुझे मारता हुँ)

''नी ता न्गा'' (तू मुझे मारता हैं।)

चीनी भाषा के इस वाक्य में पद के स्थान परिवर्तन से वाक्य के अर्थ में भी परिवर्तन हो जाता हैं अयोगात्मक वाक्यों की यही प्रमुख विशेषता हैं।

(2) अश्लिष्टयोगात्मक वाक्य–यहाँ अश्लिष्ट से तात्पर्य–प्रकृति के साथ जुड़ने वाले प्रत्यय (रूप या संबंध तत्व) का बहुत अधिक न मिलना प्रकृति से पृथक रहना। अश्लिष्ट योगात्मक वाक्यों में प्रकृति और प्रत्यय इस प्रकार जुड़ते हैं कि उन्हें पृथक–पृथक जाना जा सकता हैं । ''तुर्की'' आदि भाषाओं मं इसी प्रकार के वाक्य होते हैं–

सेव (प्रकृति)+एर–इन(प्रत्यय)––सेवेरिम––(मैं प्यार करता हूँ)

(3) श्लिष्ट योगात्मक वाक्य–इन वाक्यों में प्रकृति तथा प्रत्यय परस्पर धनिष्ठता जुड़े रहते हैं। वाक्यों में, प्रत्यय को विभक्ति कहा जाता हैं। प्रत्यय की भाँति इन विभक्तियों को प्रकृति से पृथक् पहचाना कठिन होता हैं। इन वाक्यों में प्रकृति तथा प्रत्यय का अस्तित्व घुल मिल जाता हैं। भारोपीय परिवार की संस्कृत आदि भाषाओं के वाक्य इसी प्रकार के होते हैं–

रामःपुस्तकं पठति––(राम पुस्तक पढ़ता हैं।)

(4) प्रश्लिष्ट योगात्मक वाक्य–इन वाक्यों में प्रकृति तथा प्रत्यय इतनी प्रकर्षता के साथ मिले रहते हैं कि वाक्य में पदों को पृथक्–पृथक् करना या पहचानना कठिन हो जाता हैं। उत्तरी अमरीका की 'चेरोकी' तथा 'एरिकमो' आदि भाषाओं में वाक्य इसी प्रकार के होते हैं। उदाहरण के लिए 'चेरोकी' भाषा का यह प्रसिद्ध वाक्य दृष्टव्य हैं–

नाधोलिनिन––(हमारे लिए नाव लाओ।)

यद्यपि इस वाक्य में–नातेन+अभोखोल मनिन इन तीन पदों की कल्पना की जाती हैं,किन्तु निश्चयात्मक रूप से यह कहना कठिन हैं, कि इसमें यही तीन पद हैं।

(5) **शैली–मूलक भेद** :– शैली के आधार पर वाक्यों के तीन भेद किए गए हैं–

(1) शिथिल वाक्य–इसमें अलंकृत या मुहावरेदार वाक्य की ओर ध्यान नहीं दिया जाता हैं। वक्ता या लेखक मनमाने ढंग से बात कहता हैं–एक थी रानी कुन्ती, उसके पाँच पुत्र, एक का नाम युधिष्ठिर, एक का नाम भीम, एक का नाम कुछ और एक का नाम कुछ और एक का नाम भूल गया।

यह कथावाचकों आदि की शैली होती हैं।

(2) समीकृत वाक्य–इसमें संतुलन और संगति का ध्यान रखा जाता हैं। जैसे–यस्यर्थीःतस्य मित्राणि (जिसके पास पैसा, उसी के मित्र) यतो धर्मस्ततो जयः इतो भ्रष्टस्ततो भष्ठ यथा राजा तथा प्रजा, जिसकी लाठी उसकी भैंस, न घर का न घाट का।

समीकृत वाक्य विरोधमूलक भी होते हैं। जैसे–कहाँ हंस कहाँ बगुला, कहाँ राजा कहाँ रंक, कहाँ शेर कहाँ सूअर । समीकृत वाक्य संतुलन आदि गुणों के कारण लोकोक्ति के रूप में प्रचलित हो जाते हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(3) आवर्तक वाक्य–इसमें कथनीय वस्तु अन्त में दी जाती हैं। श्रोता की जिज्ञासा अन्तिम वाक्य सुनने पर ही पूर्ण होती हैं। यदि अगर आदि लगाकर वाक्यों को लम्बा किया जाता हैं। जैसे–यदि सुख चाहिये, यदि शक्ति चाहिए, यदि कीर्ति चाहिए, यदि अमरता चाहिए तो विद्याध्यन में मन लगाओ।

डॉ0 पीताम्बर सरोदे ने अपनी पुस्तक सर भाषा विज्ञान में इसके चार भेद दिए हैं–

1. समास प्रधान वाक्य
2. व्यास प्रधान वाक्य
3. प्रत्यय प्रधान वाक्य
4. विभक्ति प्रधान वाक्य।

वाक्य परिवर्तन के कारणः एक भाषा पर अन्य भाषा का प्रभावः– भाषा एक भाषा–भाषी दूसरे के निकट सर्म्पक में आते हैं तो एक भाषा के वाक्य गठन पर दूसरी भाषा के वाक्य गठन का किंचित प्रभाव पडता हैं। उदाहरण के लिए हिन्दी वाक्य गठन पर अंग्रेजी वाक्य गठन के प्रभाव पड़े हुए हैं। अंग्रेजी में डाइरेक्ट और इन डाइरेक्ट नरेशन होते हैं जिनमें इनडारेक्ट बरते हुए उत्तम पुरूष अन्य पुरूष में बदल जाता हैं।

जैसे–Ram told shyam that he would go to school अर्थात् राम ने श्याम से कहा कि वह स्कूल जाएगा। हिन्दी की प्रकृति के अनुसार 'वह स्कूल जाएगा' के स्थान पर 'मैं स्कूल जाऊँगा होना चाहिए, किन्तु अंग्रेजी के प्रभाव से इस प्रकार के वाक्य हिन्दी में चल निकलते हैं। इसी प्रकार विशषेण उपवाक्य का बीच में आ जाना अंग्रेजी का ही प्रभाव हैं। हिन्दी में कहा और लिखा जाने लगा हैं कि 'रमेश, जो मेरे मित्र का पुत्र हैं, आजकल विश्वविद्यालय में प्रध्यापक हो गया हैं।'

इसी प्रकार निक्षिप्त उपवाक्य भी प्रबुद्ध हो गया हैं। 'मेरा मत चाहें' आप स्वीकार करें या न करें सर्वथा स्पष्ट और निष्पक्ष हैं।

(2) जटिलता से सरलता की ओर :– जिस प्रकार ध्वनि और रूप परिवर्तन में प्रयत्न लाघव की प्रकृति मुख सुख के लिए होती हैं उसी प्रकार अभिव्यक्ति में भी वाक्यों की जटिलता छोड़कर सरलता की ओर बढ़ने की स्वाभाविक मनोवृति काम करती हैं।

(3) स्पष्टता :– स्पष्टता के लिए भी वाक्यों में परसर्गो का प्रयोग होने लगता हैं। प्राकृत तथा अपभ्रंश में विभक्तियों के रहते हुए भी सहायक शब्दों का प्रयोग इसी कारण प्रारम्भ हुआ था, जो बाद में पर सर्गों के रूप में दिखायी पडती हैं। इसी प्रकार एक वाक्य के स्थान पर कई वाक्य या उपवाक्यों का प्रयोग, वाक्य के मध्य 'डेश' (–) का प्रयोग, वाक्य में अधिक 'पदों' का प्रयोग आदि का कारण भी यह स्पष्टता लाने की प्रवृति ही होती हैं और इसके कारण भी वाक्य में परिवर्तन हो जाता हैं।

(4) प्रयत्न लाघव :– प्रयत्न लाघव के लिए भी जगह अवकाश रहता हैं। अतः भाषा के अन्य अंगो की भाँति वाक्य परिवर्तन में भी वह कारण रूप में रहता हैं। वाक्यों में कुछ प्रत्ययों तथा पदों का लोप इसी का परिणाम हैं। जैसे–आँखों से देखी बात सच होती हैं। के स्थान पर आँखों देखी बात सच होती हैं। आदि।

(5) बलाघात :– अनेक बार वाक्य के किसी विशेष पद के महत्व को प्रकट करने के लिए वक्ता उस पर बल का प्रयोग करता हैं। ऐसा करने में प्रायः बलाघात वाले पद का स्थान भी वाक्य के आदि या अन्त में हो जाता हैं जैसे–'खाना अभी नहीं खाया हैं?' सामान्य दशा में वाक्य होता हैं ''अभी खाना नहीं खाया हैं।''

Downloaded notes from www.hindinotes.com

(6) <u>मानसिक स्थिति</u> :– भाषा में वाक्यों की रचना पर वक्ता की मानसिक स्थिति का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता हैं। यदि किसी बाह्य अथवा आन्तरिक कारण से वक्ता क्षुब्ध हैं, घबराया हुआ हैं, तो उसकी भाषा में वाक्य छोटे–छोटे और पदक्रम अव्यवस्थित रहता हैं। यही कारण हैं कि युद्ध कालीन भाषा तथा शान्तिकालीन भाषा में बड़ा अन्तर रहता हैं। शान्ति–काल में भाषा में 'प्रयुक्त वाक्यों में व्यवस्था अधिक रहती हैं।

(7) <u>विभक्तियों का घिसाव</u> :– भाषा के विकास में विभक्तियाँ घिस जाती हैं। उनके घिसते ही नए प्रयोगों की सहायता लेनी पड़ती हैं। जिस प्रकार पाँव के जख्मी होने या कट जाने पर बैसाखी की सहायता से आदमी चलता हैं उसी प्रकार जब भाषा का कोई अंग काल की धारा से टूटता हैं तो उसे स्वतः कोई अन्य रूप लेना पड़ता हैं। संस्कृत की धातुएँ संयुक्त थी। कालान्तर में धातुओं के संयोगात्मक रूप कृदन्तों के रूप में नियुक्त हुए और शब्द विभक्तियाँ घिसी।

(8) <u>साधारण से असाधारण की ओर आकर्षण</u> :– भाषा की अभिव्यक्ति मूल ताा साधारण होती हैं। ज्ञान वृद्धि होने पर उस प्रकार के वाक्य हीन प्रतीत होने लगते हैं। सरल से मिश्र की ओर बढ़ना स्वाभविक होता हैं। अधिक सौदंय और प्रभाव उत्पन्न करने के लिए बहुत बड़े वाक्य लिखे जाते हैं। बाणभट्ट ने कादम्बरी में इतने बड़े वाक्य लिखे हैं कि दो–दो पृष्ठ के बाद एक वाक्य समाप्त होता था। वाक्यों को प्रभावशाली बनाने के लिए विशेषण उपवाक्य, निक्षिप्त उपवाक्य, उद्धरण रूपक आदि के द्वारा उन्हें विशालकॉय और अर्थगर्भित किया जाता हैं। इस प्रकार वाक्य गठन मैं बहुत परिवर्तन आ जाता हैं।

(9) <u>बोलने वालों की मनः स्थिति</u> :– प्रायः देखा जाता हैं कि मन की स्थिति के अनुसार वाक्यों का गठन होता हैं। क्रोध में वाक्य जटिल, अपूर्ण, अव्यवस्थित और प्रायः अशुद्ध होते हैं। प्रेम में आलंकारिता, लाक्षणिकता माधुर्य और प्रवाह के कारण वाक्य परिमार्जित और लम्बे होते हैं। शोक या जुगुत्सा की स्थिति में काव्यों मे पुनरूक्ति, निरलंकारिक और उदासी का वातावरण होता हैं। गम्भीर चिन्तन में वाक्य जटिल बड़े उलझे हुए ओर गूढ़ होते हैं जबकि कथा–कथन या कहानी लेखन में उनमें मुहावरेदारी और प्रवाह की प्रधानता होती हैं।

(10) <u>अज्ञान</u> :– अज्ञान के कारण भी, वाक्यों में अधिक पदों का प्रयोग होने से वाक्य परिवर्तन हो जाता हैं। अनेक वक्ता दरअसल, दरहकीकत, सज्जन आदि शब्दों के स्थान पर वाक्यों में दरअसल में दरहकीकत में सज्जन पुरूष आदि का प्रयोग करते हैं जिससे वाक्य–रचना में परिवर्तन हो जाता हैं।

(11) <u>नवीनता का प्रयास</u> :– अनेक वक्ता तथा लेख अपनी भाषा मे नवीनता लाने के लिए वाक्यों मे नये–नये प्रयोग करते हैं इस प्रयास में वाक्य में प्रचलित पदक्रम को बदल दिया जाता हैं जैसे–'यह स्थान मनुष्य मात्र के लिए हैं।' के स्थान पर यह स्थान मात्र मनुष्यों के लिये हैं।

<u>निष्कर्ष</u> :– साराँश यह हैं कि वाक्य गठन में जो परिवर्तन आते हैं उनका अध्ययन बड़ा मनोरंजक हैं। ध्वनि परिवर्तन अर्थ परिवर्तन या रूप परिवर्तन की अपेक्षा यह विषय अधिक गम्भीर और गवेषणात्मक हैं।

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रश्न.1 अर्थ विज्ञान के स्वरूप को समझाते हुए उसके परिवर्तन के कारण और उसकी दिशाओं का विवेचन कीजिये।

उत्तर. अर्थ विज्ञान में दो शब्द हैं–अर्थ और विज्ञान। इन दोनों शब्दों को एक साथ रखने से सामान्य अर्थ यह निकलता हैं कि अर्थ विज्ञान का विज्ञान हैं। यह वह विज्ञान हैं, जिसके अन्तर्गत भाषा के अर्थ पक्ष का वैज्ञानिक अध्ययन विवेचन और विश्लेषण किया जाता हैं। अर्थ विज्ञान वर्णनात्मक, ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक तीन प्रकार होता हैं। अर्थ विज्ञान के विषय में विद्वान और विशेषकर भाषा विज्ञानी एकमत नहीं हैं।

भाषा विज्ञान में जिस प्रकार भाषा में प्रयुक्त ध्वनियों तथा रूपों आदि पर विचार किया जाता हैं, उसी प्रकार अर्थ पर भी विचार किया जाता हैं। भाष विज्ञान के एक अंग के रूप में अर्थ संबंधी विवेचन को आजकल हिन्दी में अर्थ विचार तथ अंग्रेजी में सेमण्टिक्स कहा जाता हैं। अंग्रेजी में इसका नामकरण फ्रांसीसी विद्वान, 'ब्रील' (Michel Breal) द्वारा सर्वप्रथम प्रयुक्त हुआ था।

<u>अर्थ विज्ञान का अर्थ व स्वरूप</u> :– जिस प्रकार शब्द के स्वरूप की चर्चा की गयी हैं उसी प्रकार अर्थ के स्वरूप की चर्चा भी आवश्यक हैं। अर्थ का लक्षण अनेक विद्वनों ने अनेक प्रकारों से किया हैं। कुछ विद्वानों के मत इस प्रकार हैं–

वाक्य पदीयकार भर्तृहरी कहते हैं–

''यस्मिस्तच्चरिते शब्दे यदा ओ अर्थः प्रतीयते।
तमाहुरर्थ तस्थैव नान्यर्थस्थ लक्षणम ।।

अर्थात् शब्द के उच्चारण से जिसकी प्रतीति होती नहीं उसका अर्थ हैं, अर्थ का कोई दूसरा लक्षण नहीं हैं।

महाभाष्यकार महर्षि पतंजलि के अनुसार–

''अर्थ शब्द की अन्तरंग शक्ति का नाम हैं। समस्त शब्द अपने–अपने अर्थ का बोध कराने के लिए होते हैं, परन्तु जिस–जिस अर्थ के बोध के लिए शब्द का प्रयोग होता हैं वही उसका अर्थ होता हैं।''

कैयट और नागेश्वर के अनुसार–

''समस्त शब्द जिस प्रवृति निमित्र के लिए अर्थात् जिस वाच्यार्य का बोध कराने के लिए प्रयुक्त होते हैं वही प्रवृति निमित्र रूप वाच्यार्थ उन शब्दों का अर्थ होता हैं।''

जयन्त के अनुसार–

''जिस शब्द से जिस अर्थ की प्रतीति होती हैं वही उसका अर्थ होता हैं।''

कुमारिल भट्ट के अनुसार–

''जो अर्थ जिस शब्द के साथ सम्बद्ध रहता हैं वह उसका अर्थ होता हैं अर्थात् किसी शब्द का अर्थ वह हैं जो उसके साथ सदैव विद्यमान रहता हैं और उस अर्थ को छोड़ता नहीं।''

भारतीय विद्वानों के अतिरिक्त पाश्चात्य विद्वानों ने भी अर्थ के बारे में प्रर्याप्त अध्ययन और मनन किया हैं।

डॉ0 शिलर का मत हैं–

''अर्थ और कुछ नहीं, वह अनिवार्यतः वैयक्तिक होता हैं क्योंकि किसी वस्तु का अर्थ उस व्यक्ति पर निर्भर करता हैं जिसे वह वस्तु अभिप्रेत होती हैं।''

डॉ0 रसल का मत हैं–

Downloaded notes from www.hindinotes.com

''संबंध विशेष को अर्थ कहते हैं क्योंकि किसी शब्द में केवल अर्थ ही नहीं होता अपितु वह अपने अर्थ से सम्बन्द्ध रहता हैं और इस 'सम्बन्ध' विशेष का स्मृति से अत्यधिक गहरा संबंध होता हैं।''

एलफ्रेड सिजविक–

''परिणाम अर्थ का आधार होता हैं और अर्थ सत्य का अतः परिणाम ही अर्थ माना जाता हैं।''

डॉ0 हर्बर्ट पानन्स के अनुसार–

''अर्थ का संबंध हमारी चेतना से हैं जिसके अन्तर्गत अर्थ के आदिम बीज धन रूप में या ऋण रूप में विद्यमान रहते हैं। ये तत्व ही पुनः संगठित एवं संश्लिष्ट हो कर किसी अनुभव के 'अर्थ' का रूप धारण करते हैं।''

डॉ0 जे.एस.मूर के अनुसार–

''मनौवैज्ञानिक दृष्टि से अर्थ वस्तुतः सन्दर्भ या प्रकरण होता हैं, अर्थात् प्रत्येक अनुभव में अथवा उत्तेजना एवं कल्पना के समूह में, सम्बद्ध प्रतिरूप एक सन्दर्भ या प्रकरण का सा रूपधारण कर लेते हैं। वही सन्दर्भ या प्रकरण समस्त उत्तेजनों तथा कल्पनाओं को संश्लिष्ट बनाकर एक निश्चित 'अर्थ' को उत्पन्न करता हैं।''

डाग्डन व रिचर्ड्स के अनुसार–

''अर्थ वह मानसिक तत्व हैं जो एक ओर घटनाओं तथा विषयों के बीच तथा दूसरी ओर उनके लिए प्रयोगों में लाए जाने वाले प्रतीकों तथा शब्दों के बीच का सम्बन्ध होता हैं।''

प्रो0 फर्थ के अनुसार–

''अर्थ सन्दर्भ या प्रकरण संबंधी व्यवहार शैली हैं क्योंकि जब हम किन्हीं शब्दों का उच्चारण करते हैं तब उन ध्वनियों के कारण वायु और श्रोतों के मान की शष्कुलियाँ विकृत होती हैं और ये ध्वनियाँ तत्रत् सामाजिक संदर्भ में तत्वत् अर्थ की प्रतीति कराती हैं जो वस्तुतः प्रकरण या संदर्भ के अन्य तत्वों के सम्बन्द्ध व्यवहार शैली मात्र हैं।''

<u>अर्थ परिवर्तन के प्रमुख कारण</u> :–

भाषा एक जीवन्त सत्ता हैं और कालान्तर्गत किसी भी वस्तु की भाँति परिवर्तन के प्रति नतानन हैं। इसी कारण उसके विकास क्रम में कभी तो शब्द अपने अर्थ को परिवर्तित कर लेते हैं, कभी शब्द नए रूपों को प्राप्त होते हैं और कभी ऋण ली हुई अभिव्यक्यिाँ क्रियाशील हो जाती हैं। अर्थ परिवर्तन की दो मूलभूत प्रवृतियाँ हैं–(1) कोई शब्द नवीन वस्तुओं को प्रकाशित करने लगता हैं। (2) कोई शब्द नए ढंग से किसी वस्तु को व्यक्त करने लगता हैं।

अर्थ परिवर्तन के प्रमुख कारण :– मनुष्य सदैव परिवर्तन की ओर आकर्षित रहता हैं। अर्थ का संबंध किसी न किसी रूप में मनुष्य के मन से हैं। स्पष्ट शब्दों में कह सकते हैं कि जब मनुष्य का मन परिवर्तनशील होता हैं तो अर्थ जिसका संबंध मन से हैं, परिवर्तित हो तो आश्चर्य क्या हैं? डॉ0 हरीश न लिखा हैं कि–

''अर्थ प्रयोक्ता की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया का प्रतिफल हैं।''

(1) <u>शब्दों का अधिक प्रयोग</u> :– शब्दों के अधिक प्रयोग से उनकी शक्ति नष्ट हो जाती हैं और वे अप्रिय लगते हैं। इसका परिणाम यह होता हैं कि जो शब्द किसी एक अर्थ में प्रयुक्त होता था उस अर्थ का महत्व कम हो जाता हैं और इस

Downloaded notes from www.hindinotes.com

प्रकार अर्थ का परिवर्तन स्वाभविक हो जाता हैं। उदाहरण के लिए शास्त्री, पंडित, श्रीमान्, बाबू, अनेक शब्दों की सूची गिनाई जा सकती हैं।

(2) **अलंकार का प्रयोग** :– अपने मन के भावों को स्पष्ट करने के लिए मनुष्य ऐसे शब्दों का प्रयोग करता हैं जो उन्हें मूर्त रूप दे देते हैं। वस्तुतः भाव साम्य, धर्म साम्य आदि इस प्रक्रिया के मूल कारण होते हैं। साहित्यिक भाषा में उन्हीं का नाम अलंकार, उपमा, रूपक आदि हैं।

तात्पर्य यह हैं कि आलंकारिक प्रयोग के अरूप भाव सरूप वस्तुओं की भांति सगुण हो जाते हैं और अर्थ में विस्तार या संकोच हो जाता हैं। छुई–मुई एक पौधे का नाम इसलिए रखा गया हैं कि उसको छूते ही वह मुरझा जाता हैं। इसे 'लाजवन्ती' भी कहते हैं। सिन्धु नदी का नाम सिन्धु इसलिए पड़ा कि वह सागर की भांति बहुत बड़ी नदी थी। उसके पास के प्रदेश को भी लोग सिन्धु कहने लगे तथा वहाँ पर जो नमक के पहाड़ थे, उनके नमक को सैन्धव (नमक) कहा जाने लगा।

साराँश यह हैं कि परिचित पदार्थों के गुणसाम्य के कारण अनेक शब्दों के अर्थ में विकास हुआ हैं।

(3) **भौतिक साधनों में परिवर्तन** :– आज जीवन में नयी साधन सामग्री को अपना लेने पर भी हम प्राचीन शब्दों का प्रयोग करते रहते हैं। परिणामस्वरूप, शब्द के अर्थ में परिवर्तन हो जाता हैं। उदाहरणार्थ–पहले 'पत्र' शब्द से तात्पर्य था–वृक्ष के पत्र पर लिख हुआ समाचार और अब कागज पर लिखे हुए समाचार की ही पत्र कहते हैं।

(4) **लाक्षणिक प्रयोग** :– अनुभूति की ठीक–ठीक अभिव्यक्ति के लिए लाक्षणिक प्रयोग किये जाते हैं। जैसे किसी की वीरता से प्रभावित होकर उसे 'सिंह' कह देते हैं। इसी प्रकार भीरू को 'गीद्ड़' मूर्ख को गधा, भोले स्वभाव के व्यक्ति को शाय तथा अपकारी का साँप, बिच्छु भी हम अकस्मात् ही कह उठते हैं।

(5) **प्रकरण भेद** :– प्रकरण भेद के कारण भी शब्द के अर्थ में परिवर्तन हो जाता हैं 'सैन्धव' शब्द इस विषय का बड़ा प्रसिद्ध उदाहरण हैं। भोजन के प्रसंग में इसका अर्थ नमक हो जाता हैं तथा यात्रा के प्रसंग में घोड़ा क्योंकि दोनों ही सिन्धु प्रदेश में उत्पन्न होने से सैन्धव कहलाते हैं।

(6) **व्यंग्य** :– इसके कारण भी शब्दों के अर्थों में परिवर्तन हो जाता हैं। संस्कृत काव्यशास्त्र में इसे विपरीतलक्षणा कहा गया हैं। उदाहरणार्थ–मूर्ख को वृहस्पति, अपकारी को उपकारी कृपण को दानवीर कर्ण, झूठे को सत्यवादी हरिशचन्द्र आदि कहना यहाँ वृहस्पति आदि शब्द बिल्कुल विपरीत अर्थ को कहते हैं।

(7) **भावुकता** :– इस कारण भी शब्दों के अर्थ, बदल जाते हैं। प्रायः माता–पिता बच्चों को लाड़–प्यार में गधा, सूअर, आदि कह देते हैं। इसी प्रकार क्रोध में भी उल्लू आदि कह दिया जाता हैं। निश्चिय ही यहाँ वक्ता का अभिप्रायः इन शब्दों के वास्तविक अर्थ से नहीं होता हैं।

(8) **शब्दार्थ में एक तत्व की प्रधानता** :– कभी–कभी किसी शब्दार्थ के स्थान पर उसके केवल एक तत्व से ही उस पदार्थ का ज्ञान होने लगता हैं। उदाहरणार्थ– लाल पगड़ी ही सिपाही नहीं हैं किन्तु उसका अर्थ सिपाही हो गया हैं।

(9) **संक्षेपीकरण** :– इस कारण भी शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं। हस्तिन् का अर्थ था हाथवाला या सूंडवाला इसके साथ मृग शब्द जोड़कर हाथी अर्थ किया जाता हैं।

(10) **शब्दकोश** :– भाषा में शब्दकोशों की रचना के कारण भी शब्दों के अर्थ बदलते हैं। वस्तुतः किसी भी भाषा का कोई भी शब्द किसी दूसरे शब्द का पर्याय नहीं होता हैं। प्रत्येक शब्द का अपना अर्थ निश्चित होता हैं, किन्तु शब्द कोशों में प्रायः एक शब्द के अनेक पर्याय दिये रहते हैं जैसे–सर्पः पृदाकुर्भुजगो भुजडोडहि भुर्जडम । (अमरकोश)

Downloaded notes from www.hindinotes.com

यहाँ सर्प के लिए कई नाम गिनाए जा सकते हैं।

(11) **भौगोलिक परिवेश में अन्तर** :– पंचभूतों से बना मानव का शरीर अपने चारों ओर के भौगोलिक परिवेश या वातावरण से प्रभावित होता हैं। उसके भौगोलिक वातावरण में परिवर्तन होने पर उसके व्यवहार में आने वाली वस्तुओं में भी परिवर्तन हो जाता हैं। अपने मस्तिष्क पर अधिक भार डालने से बचने के लिये वह अनजाने ही, पुरानी परिचित वस्तुओं के नामों का संबंध नयी वस्तुओं से जोड़ लेता हैं। इस प्रकार उसके शब्द तो पुराने होते हैं किन्तु उनका नया हो जाता हैं। जैसे ऋग्वेद में उष्ट्र शब्द भैंसा तथा ऊंट दोनों अर्थो में भौगालिक वातावरण में रहते थे तब वे उष्ट्र (मूलार्थ–भूरे रंग का पदार्थ) भैसें को कहते थे किन्तु जब वे भौगोलिक दृष्टि से उष्ण प्रदेश में पहुँच तो उन्होंने वहाँपर एक नये पशु ऊँट को देखा, जो रंग–रूप में भैंसे से मिलता था। परिणाम स्वरूप आर्यों ने अपना शब्द का प्रयोग उसी के लिए प्रारम्भ कर दिया ।

(12) **सामाजिक परिवेश में परिवर्तन** :– पहले की अपेक्षा आज का सामाजिक वातावरण बदला हुआ हैं। पहले सम्मिलित परिवार प्रथा थी उस सीमित समाज में युवक युवतियों का सम्पर्क भी सीमित था। तब भाई–बहिन शब्द में पर्याप्त पवित्रता थी। बहन–भाई तथा पत्नी–पति के अतिरिक्त तब किसी सम वयस्क युवती–युवक का सम्पर्क होने की सम्भावना नहीं होती थी।

सामाजिक परिवेश का ही परिणाम हैं कि भारत के किसी एक भाग में भाभी द्रोपदी का प्रतीक हैं तो किसी दूसरे भाग में सीता का।

(13) **राजनैतिक परिवेश में परिवर्तन** :– इसी परिवर्तन का परिणाम हैं कि आजकल क्रान्ति शब्द का पहले जैसे अर्थ नहीं रहा हैं। पहले बिना रक्तपात के किसी राज्यसत्ता को नहीं बदला जा सकता था। अतः क्रान्ति का अर्थ था रक्तपात द्वारा अर्जित राज्यसत्ता।

गांधी जी के प्रभाव से बाद में अहिसंक क्रांन्ति का युग आया भतू क्रान्तिदल, हरित क्रान्ति या वैज्ञानिक क्रांति, जिसमें क्रांति शब्द का अर्थ केवल परिवर्तन ही रह गया हैं। रक्तपात की प्रबल भावना अब उसमें नहीं रही हैं।

(14) **सांस्कृतिक परिवेश में अन्तर** :– वर्णाश्रम व्यवस्था प्रधान प्राचीन भारतीय संस्कृति के परिवर्तन के कारण तकालीन शब्दों के अर्थो में भी परिवर्तन हो गया हैं। ब्राहाण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र आज अपने पुरातन अर्थ को नहीं कहते हैं। आज ज्ञान के बिना भी व्यक्ति ब्राहाण, क्षति से रक्षा न करने वाला भी क्षत्रिय आदि कहलाता हैं।

(15) **धार्मिक परिवेश में परिवर्तन** :– धार्मिक वातावरण के बदलने से भी शब्दों के अर्थो में परिवर्तन हो जाता हैं। जैसे–प्राचीन काल में यज्ञ करना–कराना, वेद पाठ करना, श्राद्ध करना आदि धार्मिक कार्यों को करने के कारण याज्ञिक, अग्निहोत्री, वेदपाठी द्विवेदी, चतुर्वेदी, त्रिपाठी, यजमान आदि संज्ञा–शब्द उन–उन कर्मों को करने वाले के लिए प्रचलित थे । आजकल ये सब नाम आदि संज्ञाएँ कुलनाम बनकर रह गयी हैं।

आजकल प्रदर्शन की भावना का धार्मिक क्षेत्र में बड़ा जोर हैं। अतः पहले जहाँ केवल एक व्यक्ति द्वारी ही ईश्वर का नाम लेना कीर्तन कहलाता था, वहाँ आज मंडली बनाकर, सामूहिक रूप से ईश्वर का नाम लेना ही कीर्तन हो गया हैं।

डॉ0 तारापुरवाला ने अपनी पुस्तक 'एलिमेण्ट्सू आफ दि साइन्स ऑफ लैंग्वेज' में अर्थ विकास के 12 कारणों का उल्लेख किया हैं। कुछ अन्य ग्रंथों में इस कारणों की संख्या कुछ अधिक भी मिलती हैं। अर्थ– विकास या अर्थ परिवर्तन के जिन कारणों का उल्लेख विद्वानों ने किया उनका उपर्युक्त विवेचन किया गया हैं।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

<u>अर्थ विकास की दिशाएँ :–</u>

भाषा में प्रयुक्त शब्दों और उनके अर्थो का विचार हमारे देश में प्राचीन काल से ही होता चला आ रहा हैं। यास्क, पतंजलि भर्तृहरि तथा संस्कृत काव्य शास्त्रकारों ने इस विषय पर विस्तार से विचार किया हैं। अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना शब्द शक्तियाँ के द्वारा शब्दों के अर्थो का निश्चय और उनके परिवर्तन का पर्याप्त विवेचन प्राचीन आचार्यो ने किया हैं। लक्षणा और व्यंजना के बिना तो वस्तुतः अर्थ परिवर्तन का आधार ही नहीं बनता हैं।

आधुनिक काल में, नवीन रूप में भाषा विज्ञान का विकास होने पर अर्थविचार के क्षेत्र में प्रख्यात फ्रांसीसी विद्वान 'ब्रिल' ने पर्याप्त ख्याति अर्जित की हैं। उन्होंने अर्थ विकास की 3 दिशाएँ मानी हैं।

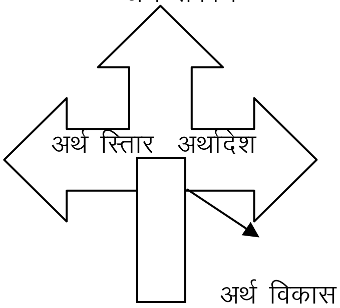

अर्थ विकास की दिशाएँ

इस आधार के अतिरिक्त अर्थविकास की दिशाएँ को एक अन्य अधार गुण भी हो सकता हैं। गुण को आधार मानकर विद्वानों ने अर्थ विकास की दो अन्य दिशाओं का भी उल्लेख किया हैं–

गुण के आधार पर अर्थ विकास की दिशाएँ:–

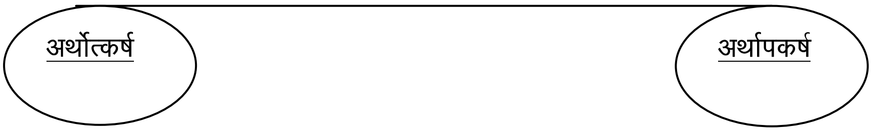

यहाँ प्रथमता ब्रील महोदय द्वारा उल्लेखित अर्थ विकास की दिशाओं को स्पष्ट किया जा रहा हैं–

(1) <u>अर्थ विकास/अर्थ विस्तार</u> :– अर्थ विस्तार से अभिप्राय हैं किसी अर्थ विशेष के क्षेत्र का पूर्व की अपेक्षा बढ़ जाना विस्तृत हो जाना। जब पहले किसी शब्द के अर्थ का क्षेत्र सीमित हो और बाद में उसकी सीमा का विस्तार हो जाये तो उसे अर्थ विस्तार की दिशा माना जायेगा। उदाहरण के लिये

(1) **प्रवीण** शब्द का अर्थ पहले 'पृकृष्टो वीणायाम्' अर्थात् वीणावादन में बढ़ा–चढ़ा था। बाद में किसी भी कार्य में आगे रहने वाले को प्रवीण कहा जाने लगा। इस प्रकार वीणावादन कौशल से बढ़कर इसके अर्थ का क्षेत्र विस्तार अन्य सभी प्रकार के कौशल तक हो गया हैं।

(2) **कुशल** शब्द का अर्थ विस्तार 'पहले कुशाओं को लाने वाला कुशल (कुशान् लाति, इति कुशलः) कहलाता था। प्राचीन काल में आध्यात्मिक वातावरण में गुरूकुलों में रहले वाले गुरू–शिष्यों के जीवन में कुशा का बड़ा महत्व प्रतिदिन और अधिक मात्रा में बिना हाथ–पैर छिलाये कुशा लाने वाले को इसलिये कुशल कहा जाने लगा होगा

Prepared Under Guidance of Dr. Braj Ratan Joshi. Copyright Joshi edutecheno craft, Bkn.

Downloaded notes from www.hindinotes.com

जबकि आजकल जीवन में कुशा कोई नहीं लाता फिर भी किसी भी कार्य को दक्षतापूर्ण करने वाला व्यक्ति कुशल कहलाता हैं।

(3) **गोष्ठि** शब्द का अर्थ था, जहाँ गाये रहती हैं। वह स्थान बाद में सभी पशुओं के रहने के स्थान को गोष्ठ कहा जाने लगा।

(4) **गवेषणा** शब्द पहले गाय की की इच्छा का द्योतक था। सांयकाल गायो के वन से लौटने के समय गायों के स्वामी गांव की बाहरी सीमा पर गायों के समूह में अपनी–अपनी गाय को लेने की इच्छा से उसे खोजा करते थे, पहचानते थे– 'यह मेरी हैं।' अतः गवेषणा शब्द गाय की खोज के अर्थ में प्रचलित हैं। बाद में वैसे ही लगन से होने वाले सभी वस्तुओं की खोज के अर्थ में प्रचलित हो गया।

(5) **तैल** पहले तिलो के द्रव को तैल कहते थे। अब सरसों अलसी, नारियल आदि द्रव को भी तेल कहा जाता हैं।

(2) <u>अर्थ संकोच</u> :– यह अर्थ विस्तार से बिल्कुल विपरीत हैं। जहाँ अर्थ का क्षेत्र पहले की अपेक्षा संकुचित हो जाता हैं, वहाँ अर्थ समाहित होता हैं। पहले शब्द सामान्य अर्थ को कहता हैं। उसमें बहुत से अर्थ समाहित होते हैं किन्तु बाद में शब्द किसी एक विशिष्ट अर्थ में ही संकुचित हो जाता हैं।

(1) मृग शब्द अर्थ प्राचीन संस्कृत में 'सामान्य रूप से सभी जंगली पशुओं के लिए आता था। बाद में यह शब्द संकुचित होकर केवल हिरण के लिए प्रयुक्त होने लगा।

(2) सर्प– 'सर्प' धातु से निस्पभ सर्प शब्द पहले सभी रेंगने वाले के लिए प्रयुक्त होता था किन्तु अब वह रेंगने वाले कीड़े साँप के लिए प्रयुक्त होता हैं।

(3) वृक–अर्थात फाड़ने वाला। कोई भी पशु या मनुष्य अपनी फाड़ने वाली प्रवृति के कारण प्राचीन काल में वृक कहलाता था किन्तु बाद में यह शब्द केवल भेड़िया अर्थ में ही संकुचित हो गया।

(4) वृषभ–का अर्थ था 'सृजन–शक्ति वाला' या 'उत्पादक वैदिककाल में इसका प्रयोग बादल, साँड, इन्द्र (वर्षा का देवता होने के कारण) के लिए होता था बाद में, केवल साँड के लिए ही प्रयुक्त होता गया।

(5) आदित्य–अदिति के सभी पुत्र, विशेषरूप से मित्र, वरूण, अर्यमादक्ष आदि वैदिक साहित्य में आदित्य कहैं गए, किन्तु बाद में यह शब्द सूर्य के लिए प्रयोग में लाया गया।

(6) धुहित–शब्द सामान्य रू से गाय आदि दुहने वाले किसी भी व्यक्ति के लिये प्रयुक्त हो सकता था। बाद में केवल पुत्री अर्थ में आया।

(3) <u>अर्थादेश</u> :– जब कोई शब्द अपने पहले से प्रचलित अर्थ को छोड़कर सर्वथा नवीन अर्थ की प्रतीति कराने लगता हैं, तब अर्थादेश होता हैं। अर्थादेश में अर्थ का क्षेत्र बदल जाता हैं। शब्द, पहले अर्थ के स्थान पर नये अर्थ को कहने लगता हैं,

असुर–शब्द का अर्थ ऋग्वेद की प्राचीन ऋचाओं में देवता हैं, किन्तु बाद में यह देवता स्थान पर राक्षस अर्थ का द्योतक हो गया। आजकल असुर से राक्षस अर्थ ही लिया जाता हैं।

उष्ट्र.–शब्द का अर्थ भी ऋग्वेद की प्राचीन ऋचाओं में भैंसा हैं, किन्तु बाद में इसका व्यवहार ऊंट के लिये किया जाने लगा।

Downloaded notes from www.hindinotes.com

मौन–शब्द का पहले अर्थ था 'मुनि संबंधी आचरण' किन्तु बाद में यह केवल चुप रहने की दशा के लिए व्यवहृत होने लगा।

धूर्त–ऋग्वेद की ऋचाओं में धूर्त शब्द का अर्थ हैं जुआरी रामायण में भी यह इसी अर्थ में मिलता हैं, किन्तु बाद में इसका अर्थ हो गया छल कपट का व्यवहार करने वाला व्यक्ति।

(4) <u>**अर्थोत्कर्ष**</u> :– जब पहले कोई शब्द किसी बुरे (निकृष्ट या उत्कष्ट) अर्थ को कहने लगता हैं तब अर्थ का विकास अर्थोत्कर्ष की दिशा में हुआ माना जाता हैं।

(1) साहस–इस शब्द का अर्थ सबसे अच्छा उदाहरण हैं। संस्कृत में पहले साहस शब्द का अर्थ था–लूट, डाका, हत्या, परस्त्रीगमन आदि।

मनुष्यमारणं चौर्य परदाराभिमर्शनम्

पारूष्यमुभय चेति साहस स्याच्चतुर्विधम्

बाद में संस्कृत में ही ही साहस शब्द जीवट या हिम्मत के अच्छे अर्थ में प्रयुक्त होने लगा।

(2) मुग्ध–शब्द भी पहले मूर्ख के अर्थ में प्रचलित था किन्तु आजकल प्रत्येक व्यक्ति सौन्दर्य पर मुग्ध होना चाहता हैं। मुग्धा नायिका अपने भोलेपन से सभी को आकर्षित कर लेती हैं।

(3) कर्पट–संस्कृत में कर्पट का अर्थ था फटा पुराना जीर्ण वस्त्र। किन्तु आजकल नये से नये कपड़े को खरीदने के लिए लोग बहुत सा धन व्यय करते हैं। अतः आजकल कपड़े का वही अर्थ नहीं जो कर्पट का था।

(5) <u>**आर्थोपकर्ष**</u> :– अर्थोपकर्ष के विपरीत अर्थाविकास की दिशा को अर्था पकर्ष कहते हैं। अर्थात् अब पहले कोई शब्द अच्छे अर्थ में, प्रयुक्त होता हैं, किन्तु बाद में बुरे (अपकृष्ट अर्थ) को कहने अगता हैं, तब उसके अर्थ का अपकर्ष हो जाता हैं–

(1) असुर–जैसा पहले अर्थादेश में बतलाया गया हैं असुर शब्द देवता के लिए प्रयुक्त होता था किन्तु बाद में यह राक्षस अर्थ में प्रयुक्त होने लगा।

(2) अभियुक्त–पहले संस्कृत में अभियुक्त शब्द का अर्थ था प्रामाणिक पुरूष किन्तु आजकल अपराधी को अभियुक्त कहा जाता हैं।

उपर्युक्त विचार करने से अर्थ परिवर्तन की 5 दिशाएँ मानना ही उपर्युक्त प्रतीत होता हैं। अर्थ परिवर्तन की शेष दिशाओं का अन्तर्भाव इसी में हो जाता हैं।